संवाद संकलन भाग - ‘5*’

*अप्रकाशित प्रारूप

आधार स्रोत: मध्यस्थ दर्शन प्रणेता श्री ए.नागराजजी के साथ संवाद

संवाद करता: श्रीराम नरसिम्हन, गौरी श्रीहरी

दिनांक: दिसम्बर २०११, जनवरी २०१२, मार्च २०१२, अक्टूबर २०१३

स्थान: अमरकंटक, म.प्र.

संकलन करता: श्रीराम नरसिम्हन, विद्यार्थी

सुधार संपर्क: 9907794154, zshriram@gmail.com

संकलन उद्देश्य:

संकलन करता के लिए लोकव्यापीकरण में भागीदार होने का अवसर एवं पाठक मित्रों के लिए ‘अध्ययन विधि’ हेतु सहायक वाचन होना

नोट:

इस संवाद को नागराजजी के अन्य सम्पूर्ण कथित एवं लिखित सूचना के साथ ही पढ़ें एवं अर्थ लगायें

प्रामाणिक ग्रंथों के लिए www.madhyasth.org देखें

अनुक्रमाणिका

खंड #१: "अध्ययन विधि" **3**

श्रवण-मनन-साक्षात्कार विधि अवलोकन 3

मनन-अभ्यास, अवधारणा, बोध एवं अनुभव 43

खंड #२: "जानने मानने" की वस्तु **86**

साक्षात्कार वस्तु-'सूत्र रूप' में 86

अवधारणा सहज वस्तु – विस्तृत चर्चा 107

सत्य/अस्तित्व दर्शन 107

सत्य/जीवन 129

धर्म 146

न्याय, नियम 159

न्याय, स्वभाव, विवेक तथा विज्ञान 178

साक्षात्कार क्रिया 212

बोध क्रिया 224

अनुभव क्रिया 242

सारांश 249

खंड #१: "अध्ययन विधि"

दिसम्बर २०११, जनवरी २०१२, मार्च २०१२

स्थान: अमरकंटक, म.प्र.

श्रवण-मनन-साक्षात्कार विधि अवलोकन

जिज्ञासा: बाबाजी, मैं श्रवण, मनन प्रक्रिया को ठीक से समझना चाह रहा हूँ| आपने कल कहा था कि हर व्यक्ति में भास, आभास होते रहता है। जो अभी अध्ययन शुरू नहीं किये हैं, उनमें भास, आभास क्या होता है?

उत्तर: सच्चाई के प्रति भास, आभास होने का अधिकार बना रहता है। सच्चाई क्या है, यह पता नहीं रहता है; इसलिए यह प्रस्ताव रखा है। प्रस्ताव के अनुसार प्रतीति, अनुभव होकर प्रमाणित करके देखना है।

जिज्ञासा: यदि एक आदमी ने अपना प्रस्ताव अभी सुना नहीं, क्या उसमें भी भास होता है?

उत्तर: भास होने का <u>अधिकार</u> रहता है; सुनने पर स्वीकार होता है। वही भास, आभास का कारण है। उसमें <u>निष्ठा</u> होना आवश्यक है । प्रतीति हुए बिना निष्ठा होता नहीं, और प्रतीति के बिना बोध और अनुभव होता नहीं।

जिज्ञासा: 'भास' का संविधान पुस्तक में परिभाषा है- "परम सत्य रुपी सहअस्तित्व कल्पना में होना, वाचन व भाषा के अर्थ रूप में सत्य स्वीकार होना। " - इसमें 'वाचन व श्रवण भाषा' का क्या अर्थ है?

उत्तर: श्रवण रूप में सुनने पर स्वीकार होना। सत्य सुनने पर स्वीकार होना। सच्चाई सुनने पर स्वीकारने का अधिकार बना रहता है।

जिज्ञासा: न्याय, धर्म, सत्य का प्रस्ताव आपसे मिलता है और मैं जब उसे सुनता हूँ...

उत्तर: तब आपको लगता है, 'यह ठीक है'। उसे स्वीकारना है, परीक्षण करना है। यही भास है। आभास में क्या लिखा है?

जिज्ञासा: आभास का परिभाषा दिया है – "भाषा सहित अर्थ कल्पना अस्तित्व में वस्तु रूप में स्वीकार होना, अर्थ वस्तु के रूप में अस्तित्व में स्पष्ट तथा स्वीकार होना, फलस्वरुप तर्क संगत होना।"

उत्तर: तर्कसंगत विधि से स्वीकार होना। सुनने पर ध्वनि से ही समझना। अर्थ संगत विधि से स्वीकार होना और प्रमाणित होना।

जिज्ञासा: "भास" में जो सत्य स्वीकार होता है, वो जीवन की किस क्रिया में होता है?

उत्तर: मन में। फिर वृत्ति में स्वीकृति होती है, फिर चित्त में और फिर बुद्धि में...स्वीकृति होती है |

जिज्ञासा: मन में "भास" होने का क्या यह मतलब है कि मन ने वृत्ति का संकेत स्वीकारा? तब मन में "भास" होता है?

उत्तर: मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि, आत्मा संयुक्त रूप में रहता ही है। उनमें एक-दूसरे की सहमति रहती है, इसलिए होता है।

जिज्ञासा: इसका मतलब है कि मन का वृत्ति के प्रति जो सहमति है, उसी को भास कह रहे हैं, अर्थात मन का प्रत्यावर्तन ही 'भास' होना है ?

उत्तर: हाँ।

जिज्ञासा: मन और वृत्ति का जब सहमति होता है, क्या उसी समय वृत्ति में न्याय, धर्म, सत्य का तुलन होता है?

उत्तर: तुलन होने के पहले स्वीकृति होती है भास, आभास रूप में। इसके बाद तुलन होना। तुलन होने के बाद प्रतीति होना। फिर अनुभव होना। अनुभव होने की स्वीकृति बुद्धि में होता है - अनुभव मूलक ।

जिज्ञासा: आभास की परिभाषा में आया है – 'अर्थ अस्तित्व में वस्तु के रूप में स्पष्ट तथा स्वीकार होना।' इससे लगता है कि साक्षात्कार को ही आप आभास कह रहे हैं? क्योंकि 'स्पष्ट' होना शब्द साक्षात्कार के परिभाषा में आता है...

उत्तर: नहीं ! आभास का मतलब है साक्षात्कार के पहले स्वीकार होना, उसके बाद तुलन पूरा होना, फिर प्रतीति होना।

जिज्ञासा: साक्षात्कार की परिभाषा है- 'शब्द से इंगित वस्तु अस्तित्व में स्पष्ट होना फिर प्रतीति होना'; यही 'स्पष्ट होना' आभास की परिभाषा में भी है?

उत्तर: तुलन पूर्वक स्पष्ट होना, फिर प्रतीति होना- चित्त में, उसके बाद बुद्धि में स्वीकार होना|

जिज्ञासा: 'आभास' की परिभाषा 'साक्षात्कार' की परिभाषा से मिलता है – इन्हें अलग कैसे समझें ?

उत्तर: ठीक है ना। वो तो सब मिलेगा ही । अलग से कोई बात नहीं है। वस्तु एक ही है। भास, आभास, प्रतीति में न्याय, धर्म, सत्य एक ही मुद्दा है। इसीलिए 'एक जैसा' लगता है| इसमें मन लगाना पड़ेगा, सामान्य बुद्धि से नहीं चलेगा !

जिज्ञासा: प्रतीति के परिभाषा में लिखा है 'तर्कसंगत विधि से सहअस्तित्व रूपी वस्तु बोध होना। अर्थ वस्तु के रूप में समझ में आना ही प्रतीति है। फलतः बोध व अनुभवपूर्वक प्रमाण, चिंतन, साक्षात्कार प्रणाली से अभिव्यक्त होना सहज है।'

उत्तर: भास, आभास, प्रतीति प्रमाणित होने की पूर्वभूमि है। पूर्वभूमि में वस्तु एक ही होगा।

जिज्ञासा: "भास, आभास, प्रतीति, अनुभूति" जब कहते है तो इसमें 'साक्षात्कार' की क्रिया या तो 'प्रतीति' में है या 'आभास' में है...

उत्तर: 'प्रतीति' में 'साक्षात्कार' समाया है। साक्षात्कार के बिना प्रतीति होता नहीं। साक्षात्कार का ही दो शब्द है – 'प्रतीति' और 'साक्षात्कार'। क्या प्रतीति होना ? अनुभव प्रतीत होना, प्रमाणित होने का संभावना प्रतीत होना।

जिज्ञासा: भास होने से वस्तु की 'झलक' बनती है, कल्पना में?

उत्तर: वस्तु तय यदि होता है, तो भास है। 'वस्तु को पाना है' - यह आभास में तय होता है। प्रतीति में पाने की संभावना बन जाता है। अनुभव में प्रमाणित होता है।

जिज्ञासा: भास और आभास यह तुलन सहित साढ़े चार अथवा पांच क्रिया में ही हो जाता है?

उत्तर: ठीक है| यह सब साक्षात्कार की पहले की है| साक्षात्कार होने से छ्टे क्रिया में लग गए| अवधारणा होने उससे आगे निकल गए| उसके बाद बोध अनुभव पूर्वक दसों क्रिया प्रमाणित होता है| 'अनुभव' के बिना कोई 'प्रमाण' नहीं है| इसको रखो| इसको हमेशा के लिए बना के रखो ! इस जड़ को यदी छोड़ देते हैं, बखेड़ा में पहुँच जायेंगे अपन!

जिज्ञासा: श्रवण को 'सुनने की क्रिया' कहा है । इसका मतलब भास होना ही श्रवण है ? अर्थात, 'जीवन' में सुनना ही श्रवण है?

उत्तर: सत्य का श्रवण होने से भास होता है। न्याय, धर्म, सत्य को जोड़कर ही बात करना । सुनना जीवन में ही होता है | क्या सुनना ? शब्द को सुनना, उसके अर्थों को सुनना |

जिज्ञासा: जैसे आप न्याय, धर्म, सत्य को समझा रहे हैं; बहुत बार ऐसा होता है- आपने कहा वो चीज मुझे 'याद' हो गया, परन्तु मुझे 'श्रवण' हुआ, अर्थात 'अर्थ' ग्रहण हुआ, ऐसा नहीं है ...

उत्तर: बहुत लोग समझाये हैं, हम भी समझा रहे हैं, निर्णय करना हर व्यक्ति के पास रखा है । समझने का अधिकार हर व्यक्ति के पास रखा है | तीन विधि से सुनना होता है: उसको लिखा है रूचिमूलक, मूल्यमूलक, लक्ष्यमूलक। उसी से स्वीकारते हैं। समझाने पर यह तीनों विधि से समझ सकते है। इन तीनों विधि से सुनते हैं, जिससे सुनते हैं, वह स्वीकारते हैं।

जिज्ञासा: कोई वस्तु 'स्मरण' में आना और उसका 'श्रवण' होना, इसमें क्या अन्तर है?

उत्तर: श्रवण के साथ स्मरण में आता ही है। वह रूचिमूलक हो, मूल्यमूलक हो, या लक्ष्यमूलक हो। श्रवण के साथ स्मरण होता ही है।

जिज्ञासा: यदी सत्य का सूचना आपसे मिलता है और वो मेरे कल्पना में आता है तभी "श्रवण" हुआ यह बात हुई थी। जैसे आपने "सत्य" शब्द कहा और यह मुझे मात्र <u>याद</u> हो गया तो दोनों ही स्थिति में श्रवण है?

उत्तर: सत्य '**शब्द**' स्मरण में आना और सत्य '**वस्तु**' के रूप में कल्पना में आना अलग है। शब्द का '**अर्थ**' जब तक कल्पना में नहीं आता है तब तक श्रवण नहीं है। उसके पहले बात करना बन जाता है। तीन विधा (रूचि, मूल्य, लक्ष्य) में जिसको सत्य माना है, उसके साथ जुड़ जाता है।

जिज्ञासा: रुचिमूलक आस्वादन से सुनने का अर्थ है कि 'हमारे अनुसार' सत्य होना? मैंने जो मानकर रखा है, या जैसे मान लेता हूँ, वही सत्य है?

उत्तर: यही है! चार विषय पाँच संवेदनाओं में होने से रुचिमूलक माना गया है।

जिज्ञासा: 'प्रिय' दृष्टि से सुन रहे हैं तो भी (श्रवण) नहीं होता है। जैसे 'मेरे अनुसार' जो परिभाषा ठीक लगता है, उसी को अपना लेना |

उत्तर: आपके अनुसार परिभाषा अलग बात है। अभी मानव तीन विधि से सत्य को बताये है। भौतिकवादी , आदर्शवादी और सहअस्तित्ववादी विधि | जिसको मानना हो, उसी को मानो!

जिज्ञासा: जैसे हम पुस्तक पढ़ते हैं या आपसे कुछ सुनते हैं तो उसका श्रवण हुआ तो भास हुआ। इसके साथ ये बात हमको ठीक लगती है, इसमें तर्क जुड़ना, हमारा इच्छा होना, तो उसको आप 'आभास' कह रहे है। ये थोड़े आगे की स्थिति है।

उत्तर: तर्क आने से आभास होता है, ठीक है | 'समझ सकते हैं' ये प्रतीति हो गया। 'समझ गए हैं' ये अनुभव हो गया। फिर उसका प्रमाण हो गया।

जिज्ञासा: 'समझ रहा हूँ', या 'समझ गया हूँ' ये प्रतीति नहीं है? वस्तु बोध होना ही तो प्रतीति है?

उत्तर: 'समझ सकता हूँ' ये प्रतीति है। प्रतीति में वस्तु साक्षात्कार हुआ रहता है | 'समझ गये' बोध है | 'समझ गया, प्रमाणित हूँ', अनुभव है । अनुभव को 'अंतिम समझ' माना है हमने |

जिज्ञासा: अच्छा! मैं 'समझ' शब्द को बुद्धि से जोड़ रहा था | आप इसे अनुभव से बता रहे हैं | अवधारणा में अध्ययन-बोध हुआ रहता है, उसी को प्रतीति कहते है?

उत्तर: उसके बोध होने की विधि को प्रतीति कहा है । फिर निरंतरता ही अनुभव है। समझा हूँ, जी सकता हूँ, यह विश्वास बन जाता है प्रतीति पूर्वक अवधारणा में | उसके बाद आता है अभ्यास | बोध होता है, उस समझ को जीने का, प्रमाणित करने का संकल्प होता है | फलस्वरूप, अनुभूत होते हैं, और प्रमाणित होना शुरू कर देता है |

जिज्ञासा: प्रतीति ही अध्ययन-बोध है ?

उत्तर: अध्य़यन बोध में हम को बोध हो गया। प्रमाणित होता है तो बोध हुआ ; नहीं प्रमाणित होता है तो कल्पना ही है। अगर वो <u>जीने</u> में आ रहा है तो अध्ययन बोध हुआ; नहीं तो नहीं हुआ।

जिज्ञासा: 'जीने में आ रहा है' का तात्पर्य हमारे इच्छा में, विचारों में, व्यव्हार में, व्यवसाय में आना, और बना हुआ है ?

उत्तर: उतना ही बात है |

जिज्ञासा: मनन की क्या परिभाषा है?

उत्तर: श्रवण के पश्चात बोध होने के लिए न्याय, धर्म, सत्य का तुलन होता है। वही श्रवण और बोध होने के बीच में होने वाली प्रक्रिया (मनन) है।

जिज्ञासा: २००७ में आपसे सुना था – 'तुलन अपने आप में एक मनन क्रिया है। चिंतन के पहले मनन बोल के एक प्रक्रिया है। मनन क्रिया विधि से मन को लगाने से तुलन क्रिया पुष्ट होता है। शब्द के अर्थ में मन लगाते हैं तो मनन कहलाएगा | श्रवण और साक्षात्कार के बीच मनन एक क्रिया है।'

उत्तर: मनन होने के मूल में जीवन में अपने आप में तुलन होता है, श्रवण का ही होता है।

जिज्ञासा: पुस्तकों के साथ जो शोध करते हैं, ये मनन का ही भाग है?

उत्तर: श्रवण स्थापित होने, मनन सफल होने तक पुस्तक रहता है | शोध स्वयं में होना है, पुस्तक में नहीं | पुस्तक मात्र सूचना है, स्वयं के शोध के लिए | अपने में न्यायान्याय धर्माधर्म सत्यासत्य तुलन यदि हो रहा है, तो मनन हुआ, अन्यथा वो पठन तक ही है | शास्त्राध्ययन विधि से श्रवण होना | इसमें पुस्तक ज्यादा रहता है | मनन में पुस्तक का आवश्यकता कम हो जाता है | साक्षात्कार होने से वस्तु को हम स्वयं पहचान लिया | बोध में जान लिया | इसके बाद पुस्तक छूट जाता है |

जिज्ञासा: इसमे दो चरण दिखती है- एक में पुस्तक पर अधिक निर्भरता होती है, दूसरा जो सूचना मेरे में (श्रवण रूप में) आ गया, अब ये शोध 'मुझमें' ही चल रहा है; ये होना ही मनन का भाग है?

उत्तर: हाँ। पहले लिखा हुआ को समझ लेते हैं, इसमें तर्क लगता है | उसके बाद में उसी में मनन होता है |

जिज्ञासा: ये शोध करते-करते हमारा इच्छा, विचार, आशा वस्तु में 'संयंत' या 'स्थापित' होता है ?

उत्तर: संयत होने पर निदिध्यासन हो जाएगा ना रे!! इच्छा, विचार, आशा यदि स्थापित होता है, तो प्रतीति हो जायेगा। निदिध्यासन के बाद, निश्चय होने के बाद कि 'यही है सत्य' - उसके बाद अनुभव है। प्रतीति पूर्वक संयंत होना होता है | संयंत होने से हम अवधारणा में पहुँच गए |

जिज्ञासा: इस जगह के लिए अभ्यास दर्शन में आपने लिखा है “वांछित वस्तु देश एवं तत्व में चित्त वृत्तियों का संयंत होना होता है” | आपने कहा था कि ‘वांछित वस्तु’ तो न्याय, धर्म, सत्य है। देश और तत्व में ‘देश’ क्या है?

उत्तर: किसी एक देश में आदमी रहता है कि नहीं? हम जिस जगह जीते हैं- संबंध, समाज सब। ‘तत्व’ मतलब उसको प्रमाणित करने के लिए इच्छा होना।

जिज्ञासा: वो जो ‘वांछित वस्तु’ है; ये नियम, न्याय, धर्म, सत्य ही है? और ‘देश एवं तत्व’ उसमें क्या है?

उत्तर: वांछित वस्तु नियम, न्याय, धर्म सत्य ही है। ‘अस्तित्व’ को देश माना है।

जिज्ञासा: जैसे नियम, न्याय, धर्म, सत्य है तो क्या इसमें नियम और न्याय “देश” व धर्म और सत्य “तत्व” है?

उत्तर: न्याय, धर्म, सत्य को यदि अस्तित्व में ‘होने’ के रुप में हम स्वीकारा तो तुलन हो गया। तुलन हो गया तो तुलन की स्थिरता हो गया। तुलन की स्थिरता हो गया तो प्रतीति हो गया। प्रतीति हो गया तो उसकी स्थिरता के लिए अनुभव हो गया।

जिज्ञासा: क्या धर्म और सत्य को ‘तत्व’ कह रहे हैं?

उत्तर: न्याय-धर्म-सत्य को तत्व कह रहे हैं।

जिज्ञासा: ‘जीने की जगह’ में भी तो न्याय, धर्म आएगा ना?

उत्तर: जब ‘न्याय’ होता है तो ‘धर्म और सत्य’ रहता ही है। तीनों एक रुप हैं।

जिज्ञासा: हमारे जीने की जगह और जो ‘वस्तु’ है – इन दोनों में हमारा चित्त, वृत्ति संयत होना ही अध्ययन का उद्देश्य है ? जीने के साथ जोड़कर देखना है उसे?

उत्तर: जीने के अर्थ में ही है। ‘भाषा’ के अर्थ में नहीं है।

जिज्ञासा: ‘जीना’ का मतलब ‘मैं स्वयं हो जाऊं”?...अर्थात, मेरा चित्रण, विचार, आचरण….

उत्तर: सब सब...

जिज्ञासा: अभी तक की बातों को सारांश करें तो श्रवण में सुनना हुआ, भास हुआ।

उत्तर: श्रवण में क्या होगा- कोई सुनने वाला होगा कोई सुनाने वाला होगा। पुस्तक भी एक वस्तु ही है। उससे भी 'सुनते' है। भाषा से कोई बोलता है, उससे भी सुनते हैं। घटना में होता है, उससे भी सुनते हैं। मिलाकर हमको भास होता है।

जिज्ञासा: ये श्रवण हुआ। श्रवण होने के लिए पुस्तकों को पढना, उसका शोध करना, इसकी प्रौढ़ता होना | उस 'श्रवण' के अर्थ में केंद्रीकृत करना - ये मनन हुआ।

उत्तर: वही है !!! यह यदि होता है तो हम प्रतीति में आ जाते हैं। प्रतीति में आने के बाद बोध हो जाता है। बोध होने के बाद उसकी निरन्तरता के लिए अनुभव चाहिए। उतना ही बात है। ये स्वयंस्फूर्त विधि से होता है। श्रवण, मनन के बाद स्वयंस्फूर्त है।

जिज्ञासा: उसमें जो वांछित वस्तु है- ये न्याय, धर्म, सत्य है। इससे तो लगता है कि इस वस्तु का श्रवण करके, उस पर ध्यान देने से हमारे में उसकी प्राथमिकता बनेगी और उसका साक्षात्कार होगा?

उत्तर: न्याय, धर्म सत्य को अलग-अलग बताया। ये दोनों (न्याय और धर्म) व्यवहार में आता है। अनुभव विधि से सत्य आता है। अनुभव मूलक विचार विधि से धर्म आता है। अनुभव मूलक विचार विधि पूर्वक न्याय होता है। तीनों होने से नियम पूर्वक कार्य व्यवहार करना बनता है।

जिज्ञासा: 'वांछित वस्तु' में जीवन ज्ञान भी समाया है ना, 'न्याय-धर्म-सत्य में?

उत्तर: जीवन ज्ञान पहले है – सत्य में समाया है । जीवन ही समझने वाला वस्तु है। जीवन का स्वत्व के रूप में हम समझते है। जीवन कोई 'अलग' वस्तु है, हम समझने वाले कोई अलग वस्तु है- ऐसा नहीं है।

जीवन समझ में आने के बाद उस को छोड़ कर नहीं होगा। जीवन ही सुनता है।

जिज्ञासा: जीवन को समझने के लिए 'द्रष्टा विधि' से उसको समझना पड़ेगा?

उत्तर: द्रष्टा विधि पूरा हो जाता जीवन को समझने से। द्रष्टा विधि पूर्वक ही हम सुनते हैं। द्रष्टा विधि पूर्वक ही मनन होता है; और उस के बाद साक्षात्कार होता है। साक्षात्कार होने के बाद प्रतीति होता है। उसके बाद अनुभव होता है। इससे प्रमाण होता है।

जिज्ञासा: यह चिन्तनाभ्यास में आएगा ?

उत्तर: उसका शुरुआत यहीं से है, साक्षात्कार से|

जिज्ञासा: श्रवण करते समय 'जीवन' के बारे में जो सूचना है उसे भी श्रवण करते है?

उत्तर: पहले दस क्रिया को अनुभव करने के बाद जीवन समझ में आता है; फिर न्याय, धर्म, सत्य समझ में आता है; फिर व्यवस्था समझ में आता है। यही पूरा कार्यक्रम है। व्यवस्था में जीना सहज है। अभी हमने जो कहा- व्यवस्था में जीकर बताया। व्यवस्था में जीना सरल है। सन 1970 से हम दूसरा कुछ नहीं करता हूँ, उसी व्यवस्था को हम को जमीन में लाना है। हम को कोई रोक नहीं है। इस विधि से साठ वर्ष हम जी गए।

जिज्ञासा: अध्ययन प्रक्रिया में श्रवण और मनन के साथ स्वयं का मूल्यांकन या स्वनिरिक्षण करना भी एक भाग है?

उत्तर: <u>उसी</u> में सब समाया है| वो तो तुलन में आने के बाद मूल्यांकन होता ही है कि हम सही जी पा रहे हैं कि नहीं। समझकर स्वयं जीना और सब साथ जीना ये दोनों का मूल में ही तुलन है। इसी के आधार पर हमारा दिनचर्या बन जाता है।

जिज्ञासा: चित्रण क्रिया में आठ क्रियाएँ बताये हैं - रूप, गुण, गणना, काल, विस्तार, श्रम, गति, परिणाम। क्या श्रवण में 'चित्र ग्रहण', और मनन में 'चित्र निर्माण' होता है ?

उत्तर: सुनना = चित्रित करना। प्रिय, हित, लाभ या न्याय, धर्म, सत्य में चित्रित करना। तुलन में न्याय, धर्म, सत्य आ जाने से प्रतीति होता है। प्रतीति <u>शब्द</u> में आता नहीं, <u>जीवन</u> में आता है। जीवन में आता है तो प्रतीति होता है। उसके बाद बोध होता है, अनुभव होता ही है।

जिज्ञासा: अभी ऐसा लगता है कि मेरे में चित्र निर्माण करने की जो क्षमता है वह क्रमशः विकसित होती है?

उत्तर: वही बिखरने की जगह, तर्क को जिंदा रखने की जगह है। तर्क जब तक जिंदा है, प्रतीति हुआ नहीं।

जिज्ञासा: जैसे समझने की वस्तु को आपने कई तरह से बताया है- नियम, न्याय, धर्म, सत्य और पाँच सूत्र में बताया है। इन सब सूत्रों में जो अन्तर सम्बन्ध है...

उत्तर: उसको समाधान के रूप में बताया है। ये अन्तर सम्बन्ध वस्तु के रूप में बना ही रहता है। हम समझते हैं, या नहीं समझते है। अन्तर सम्बन्ध समझ में आने से ही समझ में आया, नहीं तो भाषा रहा या घटना रहा।

जिज्ञासा: जैसे 6 विधि से आपने बताया है पूरी बात को |५ सूत्र (सह-अस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जाग्रतिक्रम, जाग्रति), फिर 6 डिजिट में बोलते हैं (नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य) फिर यथार्थता , वास्तविकता, सत्यता; चारों अवस्था में रूप गुण स्वभाव धर्म, तीन ज्ञान (अस्तित्व, जीवन, मानवीयतापूर्ण आचरण) इत्यादी| आपने एक ही वस्तु को 6 विधि से, सूत्रों में बताया है। ये सब सूत्र एक ही वस्तु को कैसे इंगित कर रहे हैं- ये तो मुझे शोध करना पड़ेगा ना?

उत्तर: अभी तो शोध करना पड़ेगा। इसमें किसी एक विधि से अनुभव के बाद बाकी से सहमत हो सकते हैं।

जिज्ञासा: इसमें से मुझे चयन करना पड़ेगा कि कौन सी एक विधि से मैं बोध तक पहुँचुंगा? ये सब एक ही वस्तु को कैसे इंगित कर रहे है, यह बात चार वर्ष पूर्व मुझे स्पष्ट नहीं था। ये जो मुझे स्पष्ट हुआ, प्रतीति में ही आता है या उसके पहले आता है?

उत्तर: ये चित्त के लेवल (स्तर) में होता है। इसमे चिंतन पूर्वक साक्षात्कार हो जाता है तो आपको बोध हो गया। तर्क यदि शेष है तो बोध नहीं हुआ । प्रिय, हित, लाभ, न्याय, धर्म, सत्य को तौलते तक तर्क आवश्यक है। पहले अध्यात्मवादियों ने उसको अपनाया नहीं ।

जिज्ञासा: बाबाजी, इन सभी सूत्रों के सम्मिलित एक ही अर्थ स्पष्ट हुए बिना, साक्षात्कार होगा,ऐसा तो लगता नहीं |

उत्तर: ये तो अध्ययन में आता ही है – 'सभी भाषाओँ को एक अर्थ में एकत्रित करना' |

जिज्ञासा: तर्क शेष रहना का मतलब है कि तर्क अड़ रहा है?

उत्तर: तुलन के बाद तर्क शेष है, तो वो अड़ रहा है। न्याय धर्म सत्य को तुलने के बाद मतलब न्याय, धर्म, सत्य, प्रिय, हित, लाभ को हम सुन लिया; अब उससे निकलने के लिए तर्क मुक्ति आवश्यक है। निश्चय होना आवश्यक है। निश्चय के बाद क्या तर्क ?? तर्क है तो निश्चय कहाँ !!

जिज्ञासा: तर्क की परिभाषा संविधान पुस्तक में आया है- "अपेक्षा एवं संभावना के बीच सेतु ।" तो अपेक्षा मुझमें समझने की है और संभावना अस्तित्व में यर्थाथता, वास्तविकता, सत्यता की ?

उत्तर: ठीक है।

जिज्ञासा: फिर लिखा है- 'संपूर्ण संभावनाएं, यर्थाथता, वास्तविकता, सत्यता सहज प्रमाण।

उत्तर: यही प्रयोजन है। इन प्रयोजनों में तर्क कैसे जीवित रहेगा ? जीवित रहते तक प्रयोजन कहाँ हुआ ?

जिज्ञासा: तर्क जीवित रहने का मतलब है कि समझने में तर्क अड़ रहा है। उदाहरण: 'ये ऐसा क्यों है, वैसा क्यों है?' इस विधि से वितंडावाद करना?

उत्तर: वही है। 'ऐसा भी हो सकता है', 'तैसा भी हो सकता है'। कभी निश्चय में आना ही नहीं। अभी तर्क का मतलब इतना ही है | न्याय धर्म सत्य पूर्वक जीना स्वीकृति है | इसमें तर्क कहाँ है ?

जिज्ञासा: : वस्तु बोध होने के बाद, प्रतीति होने के बाद वो तर्क संगत होता है?

उत्तर: अब ठीक हो गया। आपका यह भाषा ठीक हो गया। वस्तु ठीक हुआ कि नहीं, आप ही देखो! तर्क संगत होता है, कहाँ तक- तुलन तक। तुलन के बाद प्रतीति। तुलन के बाद कोई तर्क नहीं | प्रतीति से बोध , बोध से अनुभव होता है।

जिज्ञासा: जो चित्र निर्माण के आठ क्रियाएं आए हैं, ये 6 दृष्टियों के अनुसार होते रहता है ?

उत्तर: इतना ही है। न्याय धर्म सत्य के अर्थ में कर रहे हैं या प्रिय हित लाभ के अर्थ में कर रहे हैं। वहीं से सब फैसला है। फैसले की जगह यही है। प्रिय हित लाभ के लिए कर रहे हैं, तो मनमानी की जगह बना ही रहता है। न्याय धर्म सत्य के लिए करते है तो कोई मनमानी की जगह नहीं होती। सब की स्वीकृति होती है। जिसको करना है, उसी को आप सब करेंगे ! श्रवण के बाद, प्रतीति के पूर्व, यही होता है, मनन में - अध्ययन विधि में |

जिज्ञासा: जब तक साक्षात्कार या प्रतीति होता नहीं; तब तक न्याय धर्म सत्य उसमें जुड़ता नहीं?

उत्तर: प्रिय हित लाभ में ही रह जाता है। रूप, गुण तक रह जाता है।

जिज्ञासा: प्रतीति होने से, स्वभाव, धर्म के अनुसार उसका चित्र निर्माण शुरू होता है ?

उत्तर: हाँ। तब तर्क संगत होता है। तर्क संगत होने के बाद तर्क की जगह खत्म हो गयी।

जिज्ञासा: अध्ययन प्रक्रिया में श्रवण के साथ जो शोध करते हैं, इसमें न्याय धर्म सत्य का जो भी स्वयं में श्रवण हुआ है, क्या उसका चित्र निर्माण से ही उस पर शोध संभव होता है ?

उत्तर: वो ठीक है। तर्क संगत होने से चित्रण तर्क संगत हो जाता है। अनुभव, बोध, चिंतन सब तर्क संगत रहता है। तर्क संगत होने के बाद न्याय, धर्म, सत्य रूप में ही रहता है। विचार, आस्वादन तर्क संगत होता है। तर्क संगत होने से न्याय संगत, धर्म संगत, सत्य संगत हुआ। तर्क का मतलब ही है न्याय, धर्म, सत्य ही लक्ष्य है ।

जिज्ञासा: मुझे चित्रण की बात इसलिए महत्वपूर्ण लगी, क्योंकि जैसे आपने नियम की परिभाषा बताया है, ‘आचरण ही नियम है’। ये मुझे ‘याद’ हो गया। जब तक मैं उसमें शोध नहीं करता हूँ तब तक चित्र निर्माण हुआ ही नहीं ?

उत्तर: न्याय, धर्म, सत्य के अर्थ में नियम। जीना ही नियम है। प्रमाण ही नियम है। उसको होने के रूप में बताया। नैतिक और कार्य विधि से रहना प्रमाण है। जड़ प्रकृति में होने और रहने में प्रमाणित है। और चैतन्य प्रकृति में मानव ज्ञान अवस्था के बाद भी ‘होने’ और ‘रहने’ में सामंजस्य नहीं है। उसी के बीच में तर्क झझंट करता रहता है। शब्द और परिभाषा स्मरण में आना एक बात | उसको समझना दूसरा बात | फिर उसे जीने के अर्थ में तौलना तीसरा बात | साक्षात्कार करना चौथा बात|

जिज्ञासा: परिभाषा अर्थात जो श्रवण हुआ उसके साथ उसके अर्थ में जाने में जो शोध करते है वो चित्र निर्माण और तुलन पूर्वक ही होता है ?

उत्तर: हाँ। दूसरा विधि से होता ही नहीं। दूसरा विधि से मनमानी ही करते है।

जिज्ञासा: यदी “चित्र निर्माण” नहीं हुआ, मतलब शोध ही नहीं हुआ वो मात्र ‘स्मरण’ तक ही रह गया ?

उत्तर: हाँ। घटानाओं, पुस्तकों, शब्दों का प्रमाण तक ही रह जाता है। वही अभी तक चला है। इनका शोध तो वहीं तक है।

जिज्ञासा: अभी जो अध्ययन प्रक्रिया को लेकर मैं आपसे चर्चा कर रहा हूँ, यह सब चित्रण के आठ क्रियाओं में ही सीमित है | ‘कैसे’, ‘कब’ होगा; उसके बाद क्या होगा। ये जो हम आपसे पूछते हैं; ये सारा ‘परिणाम’ एवं ‘श्रम’, ‘गति’ से ही सम्बंधित है, सीधे ‘वस्तु’ से जुड़ता नहीं...

उत्तर: भौतिक वस्तु के साथ परिणाम जुड़ा है। मात्रात्मक परिणाम, गुणात्मक परिणाम दो बात है। इसमें भौतिक वस्तुओं में मात्रात्मक परिणाम के साथ गुणात्मक परिणाम होता है, जबकि चैतन्य वस्तु में केवल गुणात्मक परिणाम होता

है या गुणात्मक परिणाम, श्रम से जागृति। दूसरी भाषा में भ्रमित स्वीकृतियों के स्थान पर जागृत स्वीकृतियाँ। इसके लिए चेतना विकास मूल्य शिक्षा।

जिज्ञासा: अभी तक जो बात हुई- 'आभास' में कैसा होता है, भास में कैसा होता है, ये सारा भी तो 'परिणाम' के अर्थ में ही मैं पूछ रहा हूँ|

उत्तर: आपका पूछना गुणात्मक परिणाम में जाता है, ये मात्रात्मक नहीं है।

जिज्ञासा: मगर है ये चित्रण ही? 'प्रक्रिया' की जो भी चर्चा है, इसी में रह जाता है ?

उत्तर: उसी में । अभी आप जो पूछ रहे हैं, सारा प्रक्रिया गुणात्मक परिवर्तन के अर्थ में ही है। रासायनिक भौतिक वस्तु में मात्रात्मक परिवर्तन के साथ गुणात्मक परिवर्तन बताया है। वो छूट गया है। ये सब को ध्यान में रखते हुए चलना है। (मानव) शिक्षा से संबंधित बात में मात्रा खत्म हो जाता है; गुण ही गुण आता है। गुण के बाद ही स्वभाव, फिर अनुभव होता है।

जिज्ञासा: इच्छा की परिभाषा है – "आकर, प्रकार, प्रयोजन एवं संभावना का चित्र ग्रहण एवं निर्माण करने तथा गुणों का गति पूर्वक नियोजन करने वाली क्रिया की इच्छा संज्ञा है। इसमें आकार, प्रकार का क्या मतलब है ?

उत्तर: मात्रात्मक |

जिज्ञासा: प्रयोजन एवं संभावना का मतलब ?

उत्तर: प्रयोजन जीवन संबंधित है। संभावना - अस्तित्व, सहअस्तित्व है।

जिज्ञासा: और 'गुणों का गति पूर्वक नियोजन करने वाली क्रिया'?

उत्तर: इन तीनों के संयोग से गति देने की प्रवृति का नाम इच्छा है। ये सद्‌इच्छा है।

जिज्ञासा: इसके बाद वाक्य है- 'जीवन शक्तियाँ गुण, स्वभाव, धर्म या समाधान के रूप में व्याख्यायित होती हैं'

उत्तर: वही गुण व समाधान के रूप में ही । गुण का मतलब है <u>प्रवृति</u>। <u>प्रवृति</u> में समाधान प्रमाणित हो जाना के रूप में होता है, लिखा है।

जिज्ञासा: पिछले 1-2 वर्षो में पुस्तको को पढने के अंतराल मुझे ये देखा कि बहुत सारी चीजें चित्रण में जाकर अड़ गयी, मतलब काफी फँसना हुआ, स्पष्टता नहीं बनती है । एक वाक्य दुसरे वाक्य के साथ जुड़ता नहीं...

उत्तर: वही अड़ता है; उसी से जब न्याय, धर्म, सत्य को छोड़कर प्रिय, हित, लाभ के साथ जोड़ते हैं; तो अड़ता है, गति ही नहीं बनता है। ये सब तो पढने में प्रयोग करके देख लिये हैं।

जिज्ञासा: 'प्रिय हित लाभ' से जुड़ता है का तात्पर्य शरीर मूलक या भौत्कीय विधि से उसे एप्रोच कर रहे हैं ? प्रिय हित लाभ विधि, रूप-गुण तक सीमित इसीलिए उसमें न्याय-धर्म-सत्य सम्बंधित वस्तु या भाषा का वस्तु समाता नहीं ?

उत्तर: वही |

जिज्ञासा: पढ़ा हुआ वस्तु जब चित्रित होता है तो सब 'कटा हुआ' सा लगता है। एक सूत्र को दुसरे से मिलाने जाते हैं, वो मिलता नहीं अथवा, वो 'कैसे जुड़ा हुआ है', ये वाला भाग नहीं आता है।

उत्तर: (पढ़ा हुआ वस्तु) चित्रण में कटा हुआ जब तक है- प्रिय, हित, लाभ के अर्थ में ही है। जुड़ा हुआ होता है तो न्याय, धर्म, सत्य ही होता है। न्याय को कैसे काटा जाय, कैसे भाग विभाग किया जाय? हर मात्रा को भाग विभाग कर सकते हैं। स्वभाव का कैसे काटा जाय कैसे भाग विभाग किया जाय? स्वभाव में आता है, मूल्य में आता है। न्याय, धर्म, सत्य, नियम, नियंत्रण, संतुलन सब मूल्य में आता है कि नहीं। इसको कैसे भाग विभाग किया जाए? इसलिये कहता हूँ- न्याय, धर्म, सत्य जब तक स्वीकार नहीं होता तब तक तर्क रहता है; क्यों? न्याय, धर्म, सत्य को स्वीकारने के लिये | स्वीकार हो गया तब बोध और अनुभव होता है। उसके बाद कोई अड़ने वाली जगह नहीं है।

जिज्ञासा: 2006 में आपके साथ संवाद में आया था 'तुलन से सीधे साक्षात्कार होता है चित्रण होता नहीं' ?

उत्तर: ठीक है ना, अनुभव के बाद बोध, चित्रण होना है।

जिज्ञासा: इसमें 'चित्रण होता नहीं' का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर: अध्ययन करते समय प्रमाणित होने का चित्रण नहीं होता है। अनुभव के बाद प्रमाणित करने का चित्रण होता है।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जो श्रवण करते हैं, वो तो चित्रण में ही रहेगा ना ?

उत्तर: ठीक है | पहले चित्रण, चित्रण के बाद साक्षात्कार होता है। इसके बाद बोध होता है। बोध के बाद संकल्पित होता है कि उसे प्रमाणित करना है। प्रमाणित करने के लिये अनुभव की आवश्यकता बनता है। इसलिए अनुभव होता है | अनुभव के बाद बोध होता है। तब संकल्प के अनुसार प्रमाणित करने के लिये तरीका निकलता है। उसका चित्रण होता है। चिंतन होता है प्रयोजन का। प्रयोजन का चिंतन हुआ, पुनः तुलन में आता है - हम न्याय, धर्म, सत्य के अनुसार प्रमाणित कर रहे हैं कि नहीं – यह आता है। अनुभव के पहले तर्क रहता है; अनुभव के बाद तर्कसंगत हो जाता है। चित्रण से नीचे तर्क, साढ़े चार क्रिया के बाद तर्कसंगत है। इसलिए तृप्त हो जाता है जीवन।

जिज्ञासा: क्या ऐसा है की श्रवण मनन विधि से पहले ‘सही चित्रण’ बनता है? और सही चित्रण होने से ही साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: तुलन के बाद ही यह इच्छा होता है; उसके पहले होता नहीं।

जिज्ञासा: तुलन के साथ “सही चित्रण” मतलब वस्तु का सही चित्रण कर पाते हैं तो साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: तुलन सही होता है तब। तुलन में गलती रहेगा तो कभी भी तर्क से छूटेंगे नहीं । तर्क से जब तक जूझे रहते हैं, तब तक अनुभव नहीं होता। अनुभव के बाद तर्क संगत होना ही होता है।

मनन में क्या होता है? श्रवण विधि से न्याय धर्म सत्य ‘स्थिर’ होने से मनन हुआ, नहीं तो नहीं हुआ। न्याय धर्म सत्य साकार होने के आभास होने से वो पूरा हुआ। मनन होने से प्रतीत होने की तैयारी हो गया। इस विधि से साक्षात्कार होता है | साक्षात्कार होकर के अवधारणा होने से हम संयंत हुए | संयंत होना = स्थापित होना | वो साक्षात्कार के बिना होता नहीं | केवल श्रवण विधि में नहीं होता, ‘स्थापित होना’ | मनन में न्याय धर्म सत्य का प्राथमिकता और निष्कर्ष हुए बिना साक्षात्कार होता नहीं | ऐसा तो pad (भूमि) बना हुआ है |

जिज्ञासा: इसी सन्दर्भ में आपने आध्यात्मवाद में लिखा है: “अनुभव अस्तित्व में ही होना पाया जाता है । अनुभव के पहले समझदारी जानने-मानने-पहचानने के रूप में होना पाया जाता है । यह सच्चाई का अध्ययनपूर्वक होन वाला अवधारणा, संस्कार है । इसके पूर्व रूप में विचार और चित्रण ही रहता है । यही श्रुति, स्मृति, शब्द और चित्रण है । शब्द और चित्रण के आधार पर कितने भी क्रियाकलापों को मानव संपादित करता है यह सब अस्थिरता के साथ ही जूझता हुआ देखा गया है अस्थिरता में भ्रम ही प्रधान कारण है। इसीलिये ही स्मरण और चित्रण के उपरान्त कहीं न कहीं अस्थिरता-अनिश्चयता को प्रकाशित करता ही है । इसी सीमा तक हम इस बीसवीं सदी के अंत तक झेलते आये हैं । स्थिरता की स्वीकृति बोध रूप में ही होना फलस्वरूप व्यवहार में न्याय-समाधान-सत्य प्रमाणित होना पाया जाता

है । ऐसा बोध जानने-मानने-पहचानने का ही महिमा है । यह क्रिया जीवन में ही जागृति सहज विधि से होने वाली वांछित प्रक्रिया है ।"

उत्तर: ठीक तो लिखा, उसी को बताया है, जो तुम अभी पूछते रहे! श्रवण विधि से कोई स्थिरता बनेगा नहीं | संयंत होना जो है, निदिध्यासन पूर्वक ही होगा...

जिज्ञासा: क्या प्रिय-हित-लाभ के तुलन होते हुए, भास भी पूरा हो सकता है ?

उत्तर: पूरा नहीं हो सकता। भास होने में प्रिय, हित, लाभ तो होता ही है। हर बच्चे में, बड़ों में भास होता ही है। बस स्वीकारने की बात है। स्वीकार होना नहीं है, सहमत होना बनता है। 150 लोगो के बीच में एक बच्चे से पूछा तुम को समाधान चाहिए कि समस्या? बोला समाधान; न्याय चाहिए कि अन्याय? बोला न्याय; ये भास होना बनता ही है - भाषा के ही आधार पर |

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जब सह अस्तित्व की सूचना मिलती है; न्याय, धर्म, सत्य के जब भास की बात करते हैं |

उत्तर: भास होना अधिकार बना ही रहता है । सूचनाओं को ग्रहण करके तुलन होता है। तुलन तो स्वयं में होता है। स्वयं में होने से आभास होने की जगह में आ गया। आभास पूरा होने से प्रतीति होने की जगह में आ गये।

जिज्ञासा: संविधान में जो परिभाषा दिया है भास का- "परम् सत्य रुपी सह अस्तित्व कल्पना में आना। वाचन व श्रवण भाषा के अर्थ रूप में सत्य स्वीकार होना।"

उत्तर: पठन के अर्थ में भास होना। सहमत होना ही भास होना है। वाचन विधि से सहमत हो पाते कि नहीं, इसे देखना है।

जिज्ञासा: हमे ये लग रहा था सह अस्तित्व संबंधी जो सूचना मिलती है उसका अर्थ रूप कल्पना में आना है। परन्तु प्रिय, हित, लाभ दृष्टि के साथ सह अस्तित्व का पूरा कल्पना होता ही नहीं। तो अध्ययन विधि में 'भास' होने के लिए भी तुलन में न्याय, धर्म, सत्य का पुट होना आवश्यक है- तब 'पूर्ण भास' होता है ?

उत्तर: अध्ययन के लिए अध्ययन वस्तु स्पष्ट होना आवश्यक है; ये भाव है। अध्ययन में यदि सत्य का पता ही नहीं तो प्रिय, हित, लाभ के अलावा क्या करें? अभी तक जो लटके हैं वो क्या है? परंपरा में था ही नहीं सत्य को अध्ययन कराना, वाचन कराना।

जिज्ञासा: ये जो 'भास' होने की क्षमता है हमारे में, वो क्रमशः विकसित होता ही है। जब पहली बार सुने- सहमत हुए फिर तुलन हुआ, फिर अगली बार जब श्रवण होता है तो अधिक स्पष्टता होता है।

उत्तर: भास होने की क्षमता सूचना के आधार पर है। ये क्रमशः विकसित होता ही है। जिज्ञासा हो, तो होता है। जीने की <u>आशा</u> प्रयुक्त होता है। जीने की <u>इच्छा</u> होने पर आभास होता है। तभी मनन हुआ। मनन होने से प्रतीति होने की तैयारी बन गयी। फिर बोध व अनुभव होता है।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य संविधान में जो परिभाषा दिया है, वो भास होने की <u>पूर्ण स्थिति</u> का दिया है।

उत्तर: सूचना के आधार पर भास होना, भास होने का अधिकार बना रहता है। भास, आभास, प्रतीति, अनुभूति होने का अधिकार बना रहता है। इसलिए हमने वो produce (व्यक्त) किये हैं। मानव में इसका अधिकार नहीं होता तो क्यों produce करते (दर्शन को)।

जिज्ञासा: ऐसा लगता है, की स्वयं ज्ञान संपन्न होने, मानव चेतना या विकसित चेतना से संपन्न होने के इच्छा के बिना मनन भी नहीं होता है | तर्क आधारित श्रवण तक रुक जाते हैं |

उत्तर: वो भी उपकारी है...

जिज्ञासा: जी | लेकिन इसी में अपने आप को 'विद्वान' मानने का भ्रम हो सकता है, जैसे परम्परा में हुआ |

उत्तर: इसीलिए 'प्रमाण' को ही 'कसौटी' माना जाए | जैम जैसे बोलता हूँ, वैसे जीता हूँ की नहीं ? यही जांच है | इससे स्वयं सुधरने का रास्ता बनेगा |

जिज्ञासा: आध्यात्मवाद में आया है 'मनुष्य में विचार रूप में स्वीकृति और इच्छा के रुप में भी स्वीकृति पाया जाता है जो भास और आभास है।'

उत्तर: वही जीने की इच्छा होने से आता है |

जिज्ञासा: क्या यह सही है कि 'भास' होने का मतलब विचार रुप में स्वीकृति से है और आभास मतलब इच्छा के रूप में स्वीकृति | भास, आभास, प्रतीति के साथ हर जगह 'स्वीकारना' शब्द का प्रयोग किया गया है तो स्वीकारना इच्छा, विचार, आशा में भी होता है ?

उत्तर: अनुभव के लिए स्वीकृति, विचार रुप में स्वीकृति हो गया हो; इससे पूरा हो गया ऐसा नहीं है। अनुभव के अर्थ में स्वीकारना, विचार के अर्थ में स्वीकारना, मानने के अर्थ में स्वीकारना तीनों जगह है- उसके उपर शोध करना। पूर्ण स्वीकृति अनुभव के रुप में होती है। अध्ययन विधि में स्वीकृत होने से प्रतीति हो गया, फिर बोध और अनुभव प्रमाण हो गया।

जिज्ञासा: भास् होने को "कल्पना में स्वीकृति", आभास को "सत्य सहज होने की सामान्य स्वीकृति", अथवा 'तर्क संगत स्पष्ट होना' कहा है, प्रतीति या बोध होना को 'निश्चयात्मक स्वीकृति, और अनुभव को 'पूर्ण स्वीकृति' कहा है |

उत्तर: सटीक है | भास आभास में शब्द के साथ स्वीकृति, कल्पना रूप में | प्रतीति, अनुभूति में शब्द और कल्पना - "<u>खत्म</u>" |

सभी आचार्यों ने 'ये करो', 'ना करो' कहा। उसी आधार पर कहा है- आचाराम प्रथमो धर्म: । पहले आचरण करो; हमने विचार पहले करो कहा - इतना ही अंतर है। अच्छी बातों को वो भी कहे हैं, कल्पना के रुप में, प्रमाण के रुप में नहीं कहा, स्वंय जीया नहीं है |

Multiply (द्विगुणित) होने पर परंपरा होता है। खाली बकबक करने से नहीं होगा। परम्परा जहाँ पहुँचना था, पहुँच गये। समाधान, 'विकल्पात्मक' विधि से आता है। क्या विधि आता है- विकसित चेतना के रुप में आता है। विकसित चेतना ही क्रम से मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना विधि से आता है। विकसित चेतना को छोडकर कुछ भी सोचने से Conclusion (निष्कर्ष) नहीं निकलेगा। हर व्यक्ति विकसित चेतना को अपनाना चाहता है।

जिज्ञासा: कल आपने मुझे कहा था कि 'आपके पूछने में भाषा ज्यादा हो गया , उसको कम करके चल सकते थे।' भाषा ज्यादा क्यों हो जाता है ?

उत्तर: जितना कम समझते हैं, उतना ज्यादा भाषा। जितना ज्यादा जानते हैं, उतना कम भाषा। उसका उत्तर उतना ही है।

जिज्ञासा: क्या मेरी स्थिति में भाषा ज्यादा होने का कारण है- विशेल्षण व चित्रण ज्यादा है, और 'प्रत्यावर्तन' कम है ?

उत्तर: समझने तक भाषा अधिक रहेगा ही । समझने के बाद भाषा कम हो जाता है। अर्थात अनुभव के पश्चात भाषा कम होता है। अनुभव बिंदु है और अभिव्यक्ति सिंधु है। अभिव्यक्ति में भाषा है। अभ्युदय के अर्थ में और अपराध के अर्थ में महासिंधु है। इसको अपन सब Experience (अनुभव) कर लिये हैं उसके बाद क्या बात करना ?

जिज्ञासा: ‘सहज स्वीकृति’ जो शब्द है वो बुध्दि में जो स्वीकरना है उसे कहा है ?

उत्तर: पहले सुनना होता है भाषा में; सुनने के पश्चात भास होता है। उसके बाद आभास होता है। जब न्याय , धर्म, सत्य को तौलते हैं और तौलने का जब इच्छा हो जाता है; तो तौलने की क्रिया का नाम है आभास – यही मनन है । तौलने का प्रयोजन है प्रतीति होना। इसके पहले साक्षात्कार होना, फिर प्रतीति होना, फिर बोध-अनुभव होता है।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो ‘वस्तु बोध’ होता है वो “सहज स्वीकृति” है ?

उत्तर: वही सहज स्वीकृति है।

जिज्ञासा: जो अनुभव के बाद बोध होता है वो भी सहज स्वीकृति है ?

उत्तर: वो तो प्रमाण है।

जिज्ञासा: तो सहज स्वीकृति का मतलब है- ये चीज मेरे लिए ‘सहज’ हो गयी है ?

उत्तर: सहअस्तित्व बिंदु को छोडकर अपने को सच्चाई समझ में आना ही नहीं है। अभी तक सहअस्तित्व को स्वीकारा ही नहीं है- तीनों आचार्यों (शंकरा, रामानुजा, मधवा) ने स्वीकारा नहीं है, न विज्ञानी स्वीकारा। सहअस्तित्व के आधार पर बात ही नहीं किया। उस समय में उतना ही जरूरत रहा होगा ऐसा मान लेते हैं। इसी को हम ‘नियति विधि’ कह रहे है। नियति विधि से पहले भी हुआ है, अभी हो रहा है। अपना मूल्यांकन करने के लिये ये है। यदि स्वयं का मूल्यांकन करने की जगह में आता है तो अपना अध्ययन शुरू होता है।

जिज्ञासा: चित्रण में आठ क्रियाओं की बात हुई थी- रुप, गुण, गणना, काल, विस्तार, श्रम, गति, परिणाम। जब सहअस्तित्व का सूचना आता है और ये भास होता है; तब क्या इन आठ क्रियाओं के रूप में चित्रित होता है?

उत्तर: तभी होता है, उसके पहले ८ क्रियाओं का कल्पना ही नहीं आता है।

अभी अपने वार्तालाप में स्वीकृति ठीक नहीं है, इसीलिए समय लग रहा है | स्वीकृति ठीक होने से भाषा ठीक होता है। हाँ, ये है- सच्चाई को आप चाहते हैं । सच्चाई को जान लिया, ऐसा नहीं है। सच्चाई को चाहने के लिए ज्ञानावस्था में मानव के जीवन में आदिकाल से ये व्यवस्था रखा है। अभी तक आया नहीं- शिक्षा, आचरण, संविधान, व्यवस्था में आया नहीं। उसको आने के लिए क्या किया जाय? बताया है- विकसित चेतना अपनाकर; विकसित चेतना से आता है कि नहीं देख लो जाँच कर लो, यदि जाँच कर प्रमाणित करते हैं, तो ये आता है। हम जीये हैं। जिये बिना उसे प्रमाणित नहीं किया जा सकता।

जिज्ञासा: भ्रमित अवस्था के मानव के जीवन में जो चित्रण होता है उस चित्रण के मूल में भी यही आठ क्रियायें कार्यशील रहती हैं?

उत्तर: वो रुप, गुण, स्वभाव के बारे में सोचता है किंतु धर्म पता नहीं रहता। धर्म पता हुए बिना मानव स्वभाव आता नहीं; जो कुछ भी स्वभाव रहता है, वो आपराधिक रहता है। इसलिए मर जाता है। आदर्शवाद में सोचने के लिए बहुत कुछ कहा है, किंतु सोच नहीं पाये। सोचने का Evidence (प्रमाण) अपने को मिला नहीं। ऐसा भी कहा जा सकता है, सोचे होंगे।

जिज्ञासा: जैसे मैं अभी जो भी पठण, श्रवण करता हूँ, वो इसी आधार पर ग्रहण करता हूँ - रुप, गुण, गणना...

उत्तर: बस यही है! आपमें रुप, गुण, स्वभाव, धर्म स्वीकार हो गया, सबमें कहाँ स्वीकार होता है? रुप गुण के आधार पर लटके रहते हैं, स्वभाव धर्म के बार में सोचते हैं- रुप व गुण को ही 'स्वभाव' मान लेते हैं ।

जिज्ञासा: स्वभाव का <u>भाषा</u> भर बन जाता है |

उत्तर: हाँ ! 'समुद्र' जैसा भाषा बन जाता है।

जिज्ञासा: अभी मैं जो भी पढता हूँ, उसे ग्रहण करता हूँ। उसे जब शोध करते हैं, तुलन पूर्वक...

उत्तर: पहले श्रवण से तुलन, फिर न्याय, धर्म, सत्य का बोध; बोध होने से हमको प्रतीति होकर अनुभव की जगह में आ गये। बोध होना - अनुभव की |

देखो, हमको लोगो ने बोला गृहस्थ को समाधि नहीं हो सकता। बीसों बार बोले। यही हमारे लिए उत्साहित कराने की विधि रही। हम उनको क्वालिफाई करता रहा- 'ये हमारे अभिभावक हैं, हमारा शुभ चाहने वाला'; तभी तो बोलते है। ऐसा मानता हूँ। और हमारा काम (साधना) हम छोड़ा नहीं; उनका बात सुनता रहा। करना अपना मन की, उसे अपनाता रहा। उससे हमारा काम बन गया। सुनना सबका, करना अपने मन का।

जिज्ञासा: अभी भी आप ऐसा ही करते हो ?

उत्तर: सही है, उसी को करते हैं। सब कर सकते हैं; उसी को करते हैं। सबके लिए शुभ है, उसी को करते हैं । उसी के आधार पर सार्वभौम है, ऐसा हमारा मान्यता है। अब यदि इसमे कुछ चाँद लगाना है आप लोग आगे करोगे। समझे बिना इसमे चार चाँद लगेगा नहीं। इसे (मध्यस्थ दर्शन को) बदलकर कुछ नहीं होगा। जैसे अभी उच्च शिक्षा में जो प्रयत्न है 'मूल्य शिक्षा' का। इसमें क्या जरूरत है- 'चेतना विकास' को जोड़ने की जरूरत है। अभी हर व्यक्ति सोचता

है 'हम जो कहेंगे वही ठीक होना है,' ऐसा है। हर आदमी सोचता है, 'हम जो समझे हैं, वही ठीक है;' यहाँ है अभी। अब धीरे धीरे इसकी जरूरत जोर पकड़ा है। जरुरत की जगह में आ गए हैं। काफी लोग आ चुके हैं।

जिज्ञासा: हमारे ही सोच विचार को हम सही, सत्य मान लेते हैं, यही इच्छा, विचार बंधन है ?

उत्तर: यही है। ये सब बंधन का कारण है। इसमे गलती को पहले पकड़ करके सही बात का शोध करना चाहिये। यही जागृति का मतलब है।

जिज्ञासा: जब सूचना ग्रहण होता है, भास होता है; उसके साथ जीने के लिए, समझने के अर्थ में तुलन होता है। उसमें शोध कार्य में चित्र निर्माण होता है कि नहीं ?

उत्तर: चित्रण उसमें होता नहीं है। जीने की इच्छा से तुलन होता है। तुलन होने से आभास होता है। आभास होने मात्र से चित्रण नहीं होता है।

जिज्ञासा: पूरा सही चित्रण नहीं, इस वस्तु को समझने के लिए चित्रण बनेगा ?

उत्तर: समझने की 'इच्छा' हुई है; समझने का 'चित्रण' नहीं होता। समझने की इच्छा का नाम है जिज्ञासा। इच्छा होने से हम साक्षात्कार में पहुँचे। यहाँ से अनुभव, प्रमाण होता है।

जिज्ञासा: मेरा पूछने का आशय ये था कि जैसे स्वभाव क्या है ? स्वभाव और धर्म में क्या अन्तर-संबंध है इसके शोध में जब जाते हैं...

उत्तर: बोध होने से स्वभाव बनता है | अनुभव के बाद स्वभावपूर्णता का निरंतरता बनता है। बोध के पहले मानव का स्वभाव धर्म बनता नहीं | अनुभव होने से निरंतरता आ जाता है | अतिमानवीय स्वभाव हात लगता है, अनुभव से |

जिज्ञासा: समझने के लिए जो शोध करते है उसमें चित्रण का क्या स्थान है ?

उत्तर: समझने के लिए सूचना ही है, सूचनाओं के आधार पर ही समझना। बाहर से आपको <u>सूचना</u> ही मिलती है, उसे ध्यान में लाते हैं तो भाषा कम हो जाता है।

श्रवण मनन में 'चित्रण' नहीं कहेंगे । उसमे सुनी बात को सत्य मानकर हम आगे चल देते है। उसमे हम चित्रण करने जाते ही नहीं। वो सत्य मानना ही चित्रण है, मान्यता के रूप में चित्रण रहता है । यही मानना होता है, चित्रण में - चित्रण को मान लिया; सूचना में जो चित्रण आया, उसको मान लिया। वो चित्रण <u>हमारा स्वयं का नहीं रहता</u> |

जिज्ञासा: इसका मतलब हम स्वयं जब बोध मूलक, अनुभव मूलक विधि से चित्रित करते हैं, तब आप उसे 'चित्रण' कह रहे हैं, और अध्ययन विधि में भाषा के आधार पर सुना हुआ बात जो चित्रित होता है, वो स्वयं मान्यता के रूप में चित्रित हो जाते है, उसे 'श्रवण' कहा ?

उत्तर: उतना ही बात है | यह ठीक हो गया अब |

उसे भाषा रूप में कहा है- न्याय, धर्म, सत्य समझने के लिए श्रवण, मनन निदिध्यासन होता है। निदिध्यासन ही प्रतीति और प्रतीति, बोध है। यहाँ तक अपना चित्रण नहीं है। यहाँ सुना हुआ का चित्रण है। सुना हुआ का चित्रण हम स्वयं नहीं करते, सुना हुआ के आधार पर वह स्वयं चित्रित होता है। अपनी इच्छा में सुना हुआ बात का चित्रण होता है, ये अधिकार हर मानव के पास रखा है।

जिज्ञासा: ये हमारा स्वंय का 'चित्रण निर्माण' नहीं है?

उत्तर: सुना हुआ बात का चित्रण हुआ है, वो स्वीकृति के लिए है। सुना हुआ का चित्रण होना ही सुनना है। श्रवण का मतलब ही है, भाषा सहित अर्थ चित्रित होना |

जिज्ञासा: मैं पिछले ४-५ वर्षों से आप को सुन रहा हूँ। काफी सारा सुनने में आया है, जो सुना हुआ है, इसमें जब अंतर-संबंध बैठाने जाता हूँ- इन्ही चीजों कें Combination (संयुक्त रूप) में विचार और चित्र निर्माण होगा - शोध कार्य के क्रम में? ।

उत्तर: सुना हुआ को चित्रित करने पर हम समझते हैं। समझना अनुभव के लिए है । सुना हुआ बिंदु की ओर जाता है और अनुभव के बाद सिंधु की ओर जाता है- यही अभिव्यक्ति है।

जिज्ञासा: आप जो भी अभी कहते हैं, वो मुझमे पहले चित्रित होता है | अब मैं उसमें विचार करता हूँ। यह सही ढंग से चित्रित हुआ या नहीं हुआ, इसे मैं विचार पूर्वक तय करता हूँ|

उत्तर: ये तो स्वाभाविक है। हर व्यक्ति में तुलन क्रिया है। अभी तक जन मानस में न्याय, धर्म, सत्य को शोधने की प्रवृत्ति नहीं थी। उसको हमने स्थापित किया है | ये भी इस अनुसंधान की देन है। यदि तुलन करके ये निर्णय कर पाते हैं "यही न्याय, धर्म, सत्य है"; तो हम प्रतीति होने की जगह में आ गए।

जिज्ञासा: मनन के stage (चरण) में जब शोध होते जाता है- क्या ऐसा है कि एक जगह जब वो प्रमाणित करने के अर्थ में जब पूरा तुलन हो जाता है, प्राथमिकता बन जाती है, चित्रण क्षेत्र में 'सही चित्रण' या उस 'वस्तु के अनुरूप चित्रण' होने से साक्षत्कार होता है, ऐसा है?

उत्तर: तुलन होता है, फलस्वरूप साक्षात्कार होता है।

जिज्ञासा: उस समय चित्रण में क्या रहता है ?

उत्तर: सुना हुआ बात का चित्रण।

जिज्ञासा: (क्या) वृत्ति और चित्त जब तदाकर हो गया उस न्याय-धर्म-सत्य युक्त चित्रण में, तब वो साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: शब्द का अर्थ का चित्रण व अस्तित्व में वस्तु का चित्रण, ये होने से तुलन हुआ, फिर प्रतीति हुआ।

जिज्ञासा: आपने जो भी संयम में साक्षात्कार, बोध, अनुभव पूर्वक देखा उसका प्रमाण बोध हुआ, फिर चिंतन में श्रुति पूर्वक आपने अर्थ का भाषाकरण किया, उस भाषा को हम सुनके पुनः उसी जगह पर जाने का प्रयास करते हैं|

उत्तर: हमने भाषा का परिभाषा दिया, उससे अर्थ को बोध कराने का कोशिश किया।

जिज्ञासा: एक प्रकार से ये reverse engineering (रिवर्स इंजीनियरिंग) है| आपमें स्थापित अर्थ रूपी ज्ञान, अर्थ से भाषा, भाषा से परिभाषा, परिभाषा को हम सुनते हैं वहाँ से फिर हम तुलन-चित्रण-साक्षात्कार प्रणाली से वहीं पहुंचते हैं!

उत्तर: उतना ही बात है | परिभाषा का जो अर्थ है, उसके अनुसार आपमें चित्रण होता है। परिभाषा का अर्थ ग्रहण होता है। फलस्वरूप उस अर्थ का सह-अस्तित्व में वस्तु रूप में चित्रण होता है। यही है तुलन का आधार, वो भी नहीं होगा तो तुलन कहाँ हुआ ? मात्र 'शब्द' के रूप में ही रह गया|

जिज्ञासा: तो केवल स्मरण तक रह गया।

उत्तर: बोलने तक आता है। इतना उपकार हो जाता है। इसलिए कहा- नौकरी, व्यापार करने वाला समझ सकता है। <u>प्रमाण</u> नहीं हो सकता। जीने में आता नहीं है। सुन सकता है। सुनकर बोल सकता है।

जिज्ञासा: बिना दीनता और हीनता का नौकरी और व्यापर रहता नहीं, इसीलिए ऐसा कह रहे हैं ?

उत्तर: वही | भय प्रलोभन का पुट रहता ही है इसमें | जीने के जगह नहीं बनती | सुविधा-संग्रह जुड़ा ही रहता है |

जिज्ञासा: व्यवहार दर्शन में कुछ बातों को जंचवाना था: “पुर्वानुषांगिक संकेत ग्रहण योग्यता का प्रादुर्भाव शक्ति की अन्तर्नियामन प्रक्रिया से है|

उत्तर: अनुभव के अर्थ में लिखा है। पूर्वानुषंगिक विधि से हम यदि सोचते हैं, अनुभव तक पहुँचते हैं। परानुषंगिक विधि से सोचते हैं, तो भाषा तक रह जाते है। यही उसका कहने का सार भाग है। पूर्वानुषंगिक विधि क्या है- सहअस्तित्व पहला, सहअस्तित्व में विकासक्रम विकास, जागृतिक्रम, जागृति में चार बात कहा। इन पाचों बातों में यदि ध्यान जाता है, तब अनुभव के लिए रास्ता बन गया। नहीं तो नहीं बना | यही पूर्वानुषंगिक विधि है |

जिज्ञासा: उसके बाद का वाक्य है- “अपराध के अभाव में आशा का प्रत्यावर्तन, अन्याय के अभाव में विचार का प्रत्यावर्तन, आसक्ति के अभाव में इच्छा का प्रत्यावर्तन, तथा अज्ञान के अभाव में संकल्प का प्रत्यावर्तन ।”

उत्तर: इतना ही बात को शोध करके देखो, संसार में कहाँ कहाँ मिलता है। इन चारो बातों को संसार में जाचों, तुलनात्मक अध्ययन के लिए।

जिज्ञासा: अध्ययनक्रम में यदि मैं अपराध के बारे में सोचता हूँ, और मेरे में अन्याय का ही विचार बनता है तो क्या अध्ययन सफल हो सकता है ?

उत्तर: अध्ययन संभव ही नहीं है; केवल पठन ही होता है। अपराधिक विधि में जीते हुए हम ‘पठन’ कर सकते हैं , किंतु ‘अध्ययन’ नहीं कर सकते। ‘जीने की विधि’ को जब तक बदलने की इच्छा नहीं हो, तब तक अध्ययन नहीं कर सकते। इसलिए कहा- भाषा प्रमाण नहीं है। प्रमाण जीना ही है।

जिज्ञासा: “जीना" मतलब विचार, व्यवहार और व्यवसाय (कार्य) – तीनों ? अर्थात, मेरे विचार-भाव, व्यवहार और भौतिक पक्ष भी....

उत्तर: हाँ | विचार के रूप में हम जीते हैं, व्यवहार के रूप में जीते हैं, कुछ कार्य करते ही हैं...

जिज्ञासा: मान लीजिये मेरे में अपराधिक इच्छओं के होते हुए मैं अध्ययन के लिए प्रयास शुरू करता हूँ , तो भास, आभास वश हमारे में अपराध की जगह कम होते जायेगी ?

उत्तर: यही परावर्तन के अर्थ में परिवर्तित क्रमशः होता है, तब चित्रण होता है और प्रतीति के अनुकूल हो जाता है। हम न्याय, धर्म, सत्य प्रवृत्ति के लिए तैयार होते हैं। हम न्याय धर्म सत्य को स्वीकार लेते हैं, तब होगा | नहीं तो क्यों होगा ?

जिज्ञासा: अगली वाक्य है- "अतः अपराधहीन व्यवहार के लिए व्यवस्था का दबाव, अन्यायहीन विचार के लिए सामाजिकता का दबाव, आसक्ति रहित इच्छा के लिए अध्ययन एवं संस्कार का दबाव तथा अज्ञानरहित बुध्दि के लिए अंतर्नियमन अथवा ध्यान आवश्यक है, जिससे ही प्रत्यावर्तन क्रिया सफल है।" मननपूर्वक 'ध्यान' की जो बात हुई, वो यही है ?

उत्तर: इसी विधि से मनन होना है |

जिज्ञासा: 'ध्यान' का अर्थ समझने के लिए मन वृत्ति, चित्त, बुध्दि को केंद्रीकृत करना, वस्तु को समझने के लिए ?

उत्तर: अस्तित्व में वस्तु को समझने के लिए यही ध्यान है ।

जिज्ञासा: अर्थात मन को लगाने के लिए अपराधहीन व्यवहार को स्वीकारना और जीना, फिर मनन के भूमि में अन्यायाहीन विचार को स्वीकारना और जीना, और साक्षात्कार के लिए आसक्ति रहित इच्छा को स्वीकारना और जीना, अर्थात 'मनन प्रक्रिया' में इन तीनों क्षेत्रों में ध्यान देना होगा ? यही व्यवहाराभ्यास में आएगा ?

उत्तर: यह सब मनन से ही सम्बंधित है – अध्ययन विधि में | स्व-निरीक्षण पूर्वक ही हो पाता है |

जिज्ञासा: इसके बाद आया है- अर्थ बोध होने के लिए व इसे प्रमाणित करने के लिए ध्यान आवश्यक है। यही ध्येय है। सर्वमानव ध्याता है।

उत्तर: यही है ! इसके अलावा क्या लिखा जाये, आप ही बताओ !

जिज्ञासा: अगली वाक्य है- 'अत: यह निष्कर्ष निकलता है कि, मानवीयतापूर्ण व्यवस्था, सामाजिक आचरण, अध्ययन व संस्कार के साथ ही अंतर्नियोजन आवश्यक है; जिससे ही जागृति की उपलब्धि संभव है।'

उत्तर: वही सार्वभौम व्यवस्था के अर्थ में लिखा है। स्वीकृति होने के बाद ये सब काम है । स्वीकृति होने के बाद श्रवण, मनन, निदिध्यासन, अनुभवपूर्वक प्रमाणित होना बन जाता है ज्ञान, विज्ञान। विगत के वांग्मय में समाधि के बारे लिखा है - श्रवण, मनन, निदिध्यासन को अन्तिम बात कहा है । हमने क्या लिखा है ? अंतिम बात अनुभव है, निदिध्यासन के बाद होता है | निदिध्यासन का मतलब है- अखंडता, सार्वभौमता को प्रमाणित करना।

जिज्ञासा: आपने 'अनुभव = निदिध्यासन' लिखा है, परिभाषा में |

उत्तर: अंतिम वही है | जीवन तृप्ति के अर्थ में लिखा है |

जिज्ञासा: इससे क्या यह आशय है कि अध्ययन क्रम में श्रवण, मनन पूर्वक सामाजिक आचरण और मानवीयतापूर्ण व्यवस्था की हमारे में सोच, कल्पना और चाहत बनती है, तभी अध्ययन हो पाता है?

उत्तर: तभी होता है, अन्यथा आचरण होता ही नहीं।

जिज्ञासा: अध्ययन में जो भी सूचना ग्रहण होती है उसे हर दिशा, कोण, परिप्रेक्ष्य में बैठाने का प्रयास करते हैं। परिप्रेक्ष्य का परिभाषा आया है- 'परिशीलन करने योग्य विधायें, प्रमाणित करने योग्य विधायें। जैसे व्यक्ति, परिवार, देश, अनेक देश, अखंड समाज, अतंराष्ट्र, सर्वोभौम व्यवस्था में प्रमाणित होना।'

उत्तर: जो कुछ भी कहेंगे वो सभी जगह में समाधान को प्रमाणित करने योग्य हो जाए, वो सार्वभौम हो गया; ऐसा लिखा है।

जिज्ञासा: तो अध्ययन में जो भी सूचना आती है वो मुझे इन सारी परिप्रेक्ष्य में बैठाकर देखना पड़ेगा ? यही 'परिशीलन एवं परीक्षण' का मतलब है ?

उत्तर: वो ठीक है। ये तो व्यापारी, नौकर भी समझ सकता है। किंतु प्रमाणित नहीं कर पाएगा।

जिज्ञासा: हर 'दिशा' में सोचने का मतलब है - सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास|

उत्तर: जागृतिक्रम से ही जागृति। पूरे दर्शन को उतने में ही बैठाना है। समीक्षा उतना ही है। उतने में आते ही ज्ञान को पार कर गये। संयम से जो होने वाला होता है, उसमें लग गए। अनुभव में लग गए। उसके बाद प्रमाण होता ही है। अनुभव के बाद मनुष्य का अपराध और गलती करना असंभव है। इसलिए अनुभवमूलक विधि से जीने का प्रयास किया जाय। उसी जगह पहुंच गये।

जिज्ञासा: बाबाजी, अनुभव के बहुत पहले ही, अपराधकृत्य, मतलब परधन, परनारी/परुपुरुष और परपीड़ा होते हुए तो मनन भी सफल नहीं होगा...

उत्तर: वही तो ..बात बता रहे हैं ....अभी तो ...

जिज्ञासा: मनन के बाद साक्षात्कार पूर्वक 'अवधारणा' की बात है। अवधारणा में आया है- "परिपुष्ट अनुमान; बुद्धि में होने वाली बोध ही अवधारणा है; जो मन, वृत्ति, चित्त में होने वाली भास, आभास और साक्षात्कार से अधिक स्थिर है।"

उत्तर: उसकी सुदृढ़ता, बोध जो है इन चारों भाग में जो प्रक्रिया है, उसकी दृढता का नाम है बोध। वो दृढ हो गया उसके पश्चात अनुभव होना बाकी रह गया।

जिज्ञासा: "अध्ययन बोध" को ही अवधारणा कह रहे क्या ?

उत्तर: अनुभव मूलक हम शब्द सुना, अध्ययन पूर्वक शब्द अर्थ में परिवर्तित हुआ, वस्तु अनुभव में परिवर्तित हुआ, यही प्रमाण का आधार बना।

जिज्ञासा: साक्षात्कार पूर्वक जो प्रतीति होता है, यही अवधारणा है?

उत्तर: यही है, प्रतीति ही अवधारणा है। स्थिर होने से अवधारणा कहा |

जिज्ञासा: मनन करने का मतलब है- मन पूरे समय 'वस्तु' में ही रमा है ?

उत्तर: अर्थ में ही जीना; शब्द की जगह वस्तु के अर्थ में ही जीना। जैसा शरीर के साथ जीते हैं। शरीर को जीवंत बनाकार रखते है। जीवंत बनाकार रखने के लिए जी रहा है। जीवंत क्यो बनाकार रखना? सत्य को प्रकाशित करने के लिए। यही चीज आध्यात्मवाद में नहीं कह पाए। ये Conclusion (निष्कर्ष) दे नहीं पाए। भाषा कुछ भी हो, वो कोई खास बात नहीं, ये दे नहीं पाए। अपन बहुत दूर तक चले गए।

जिज्ञासा: अध्ययन श्रवण, मनन, निदिध्यासन की संयुक्त प्रक्रिया है। तो तीनो साथ मिलने से अध्ययन है?

उत्तर: हॉ तीनो साथ है |

जिज्ञासा: 'निदिध्यासन' शब्द कैसे बना है?

उत्तर: 'निदि' का मतलब स्थिर होना, क्या स्थिर होना? शब्द का अर्थ स्थिर होना। स्थिर कैसे होता है? उसको बता दिया।

जिज्ञासा: 'ध्यासन' मतलब?

उत्तर: निरंतर होना।

जिज्ञासा: "निश्चित अवधारणा की स्थापन प्रक्रिया ही निदिध्यास है।" यह अभ्यास दर्शन में आया है

उत्तर: ठीक है। वही है |

जिज्ञासा: फिर लिखा है - 'अवधारणा ही अनुमान की पराकाष्ठा एवं अनुभव के लिए उन्मुखता है। अवधारणा के अनन्तर ही अनुभव होता है। अनुभव एवं समाधान न होने की स्थिति में अध्ययन नहीं है; वह केवल निराधार कल्पना है।'

उत्तर: बोध होने के पहले होता नहीं | अनुभव और समाधान हुए बिना अध्ययन नहीं हुआ। केवल शरीरमूलक कल्पना है। इसीलिए साक्षात्कार होना बहुत आवश्यक है, आप लोगों के लिए |

जिज्ञासा: उसके अनंतर लिखा है - 'वह केवल निराधार कल्पना है; जो अध्ययन नहीं है। वो सब मान्यता को प्रकट करने में समर्थ नहीं है। उसी सत्यता वश मनुष्य समाधान एवं अनुभूति योग्य अध्ययन से परिपूर्ण होने के लिए बाध्य हुआ है।'

उत्तर: वही मान्यता को प्रमाणित करने में हम समर्थ नहीं हुए। तो सच्चाई को समझने के लिए बाध्य हुए।

जिज्ञासा: फिर लिखा है- 'यह बाध्यता मानवीयतापूर्ण पध्दति से सफल, अन्यथा असफल है ।' मतलब मानवीयतापूर्ण पध्दति से जीते हैं तो अध्ययन सफल होता है अन्यथा असफल ?

उत्तर: मानवीयतापूर्ण विधि से हम अभी तक जीया नहीं, ये स्वीकारे बिना अध्ययन ही नहीं होता है। गलती को स्वीकारे बिना सही कैसे होगा? तभी सुधार की बात होगी।

जिज्ञासा: जो मननपूर्वक अवधारणा स्थापित होता है, ये क्रम से वास्तविकता के साक्षात्कार होकर बोध होती है?

उत्तर: अवधारणा का मतलब ही है बोध होना। क्या बोध होना? "ये न्याय है", "ये धर्म है" "ये सत्य है"; - ये बोध होना

जिज्ञासा: इसमें स्वभाव भी आता है?

उत्तर: स्वभाव अनुभव के बाद आता है। स्वंय का स्वत्व होने के बाद स्वभाव। स्वभाव के लिए हम तृषित हो जाते हैं। उससे अनुभव होता है। अनुभव होने के बाद स्वभाव होता है।

जिज्ञासा: बाबाजी, जब साक्षात्कार होता, उसमें हमारा स्वभाव भी तो समय है ना ?

उत्तर: समाया ही है |

जिज्ञासा: जैसे स्वभाव को स्वीकारने से साक्षात्कार होगा, साक्षात्कार पूर्वक जीने में आएगा, फिर बोध होने से भी तो स्वभाव रहेगा ?

उत्तर: धीरता वीरता उदारता,दया कृपा करुणा यह अनुभव विधि से ही आयेगा |

जिज्ञासा: अनुभव के पूर्व में कृपा करुणा छुटा रहेगा ? बाकी का प्रतीति हुआ रहता है ?

उत्तर: हाँ | उसी के लिए अनुभव होता आवश्यक है |

जिज्ञासा: शास्त्राभ्यास पूर्वक श्रवण हुआ, फिर मनन में शोधपूर्वक इच्छा, विचार, आशायें में न्याय धर्म सत्य की स्वीकृति होना एक क्रमिक चक्र है। क्या श्रवण के साथ-साथ मनन उसके साथ क्रम से साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: 'अध्ययन विधि' में ऐसे ही है | अपन जो अर्थ दिये हैं- श्रवण, मनन, निदिध्यासन का; वो क्रमिक है। विगत में जो बात हुई थी, मान्यता थी।

जिज्ञासा: मतलब (विगत में) एक होने के पहले, दूसरा नहीं हो सकता?

उत्तर: ऐसी मान्यता थी। क्रम को उसमें स्पष्ट किया है हमने ।

जिज्ञासा: क्रमिक का मतलब श्रवण के साथ मनन हुआ, मनन पूर्वक यदि स्थिरता हो जाती है हमारी, तो साक्षात्कार हुआ, न्याय-धर्म-सत्य या यथार्थ-वास्तविकता-सत्यता का?

उत्तर: साक्षात्कार बोध हुआ तो अनुभव हुआ।

जिज्ञासा: अवधारणा पूरा होने के बाद ही बोध होगा और अनुभव है ना?

उत्तर: ये नियतिक्रम से, निश्चित पध्दति से है।

जिज्ञासा: 'एक एक' वस्तु का साक्षात्कार बोध होता है; एक एक वस्तु के रूप में?

उत्तर: नहीं। सिंधु-बिंदु विधि से उसको बताया- विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम जागृति, इतना ही तो बात है।

जिज्ञासा: क्या ऐसा है- वास्तविकता का जितना भी सूत्र बताये हैं, कोई एक साक्षात्कार बोध होने से...

उत्तर: उस प्रजाति के सभी साक्षात्कार हुआ, सिंधु-बिंदु न्याय का मतलब वही है।

जिज्ञासा: उसके साथ पहले जो श्रवण किये थे, फिर Adjustment (समंजन) होता है और जो मनन की क्षमता है ये विकसित हो जाती है?

उत्तर: परिवर्तन होता है, परावर्तन होता है। परावर्तन वही होता है।

जिज्ञासा: 'सही चित्रण' होने से ही साक्षात्कार होगा, ऐसा लगता है| तो जैसे ही साक्षात्कार हुआ,वो चित्र स्थिर होगा,और उससे सम्बंधित अन्य जो चित्र हैं, वो उसके अनुसार होंगे या उसमें समा जाते हैं ?

उत्तर: यही विधि है|

जिज्ञासा: आध्यात्मवाद में आया है, "अध्ययन अवधारणा क्षेत्र का भूरी भूरी वर्तमान विधि है, उस विधि से जितनी भी अवधारणा, अध्ययन से सम्बद्ध होता गया, उतना ही अवधारणा के आधार पर किया गया आस्वादन सहित सम्पन्न किया गया सभी चयन न्यायरूप होना देखा गया है।" तो जैसे अवधारणा बनेगा उस आधार पर वो जीने में आएगा, ये कहने का मतलब है?

उत्तर: जीने में परिवर्तन आएगा, अनुभव के पश्चात निरंतर हो जाता है ।

जिज्ञासा: मतलब उसमें स्थिरता पहले आएगी, या नियंत्रण में आएगा, फिर बोध पूर्वक वो निश्चित एवं उसमें निष्ठा हो जाता है, और अनुभव पूर्वक आचरण के सभी आयामों में निरंतरता आ जायेगा ?

उत्तर: उसी अर्थ में कहा है|

जिज्ञासा: जैसे ही जीने में परिवर्तन आता है, आगे अवधारणा पूर्ण करने की तीव्रता बन जाती है?

उत्तर: जैसे परिवर्तन आता है, वो ज्यादा अच्छा लगता है। फलस्वरूप आगे चल देते हैं। यही तो बात है। अच्छा होने के बाद अच्छा लगे बिना रहता ही नहीं। अच्छा होने के बाद अच्छा होना ही है। अच्छा बनने के बाद अच्छा होना है; ऐसा नियम नहीं है। 'लगना' शरीर के साथ ही हो जाता है। तभी तो 'होने' की जगह में पहुँचते हैं, 'अच्छा होना' जीवन के साथ है।

जिज्ञासा: जैसे इकाई और व्यापक वस्तु ही है। साक्षात्कार का अर्थ है जानना, 'वस्तु' के रूप में अस्तित्व में पहचानना| क्या उसका ये प्रमाण है कि उसके बाद हमकों कोई शंका नहीं होती है कि 'तीसरी कोई चीज है'?। "वास्तविकता दो है" ये हमको पता चल गया? इसपर हर समय के लिए विश्वास हो गया ?

उत्तर: यही साक्षात्कार है।

जिज्ञासा: तो यही साक्षात्कार पहला होना है? "इकाई और व्यापक है तीसरा चीज अस्तित्व में नहीं है?"

उत्तर: पहला साक्षात्कार यही होना है कि व्यापक वस्तु में जड़, चैतन्य वस्तु है। फिर उसके साथ उसके Details (विवरण) में जाना। चार अवस्था; चार अवस्था के लिए क्या लिखा है? विकास क्रम में कोई वस्तु है, जागृति क्रम में कोई वस्तु है, जागृति में कोई वस्तु है। उतना ही वस्तु है – साक्षात्कार के लिए ।

जिज्ञासा: पहले हम इकाई और व्यापक से शुरू करके चारों अवस्था में गये तो इन पांचो सूत्र में जो बातें हैं, उसका क्रम से साक्षात्कार होकर प्रतीत होगा। अवधारणा पूरा होगा। फिर बोध और अनुभव होगा?

उत्तर: ठीक है।

जिज्ञासा: जैसे साक्षात्कार के साथ साथ बुद्धि में Deposit (जमा) होता है, ये आपने बताया था। 'अध्ययन बोध' होते रहता है, साक्षात्कार के साथ। जैसे पहले बार साक्षात्कार होकर बोध होता है, तो क्या उस समय फिर 'चित्त', बुद्धि का साक्षात्कार करता है?

उत्तर: बुद्धि, साक्षात्कार को स्वीकारता है। इतना ही है।

जिज्ञासा: और उस समय चित्त बुद्धि का 'साक्षात्कार' करेगा?

उत्तर: बुध्दि का तो अनुभव करेगा। बुध्दि जो है, चित्त का मूल्यांकन करेगा। 'ये ठीक किया है कि नहीं किया'।

जिज्ञासा: तो उसी समय चित्त को पता चलता है कि बुध्दि भी एक क्रिया है? उसके पहले चित्त, 'बुद्धि के प्रति अज्ञात था?'

उत्तर: क्रिया रहता ही है, किंतु बोध नहीं रहता। बोध होने के लिये ही अध्ययन है।

जिज्ञासा: जैसे मैं अभी भ्रमित हूँ। भ्रमित अवस्था में अभी हमको कोई साक्षात्कार हुआ नहीं, पहली बार साक्षात्कार होता है- वास्तविकता का, सहअस्तित्व का, इकाई और व्यापक का। तो उसके साथ वो बुध्दि में बोध होता है तो पता चलता है कि 'मुझमें और एक क्रिया है' जिसके प्रति पहले 'मैं अज्ञात था'। यही जीवन ज्ञान के लिए रास्ता बनता है ? अर्थात इस विधि से 'हमारे' ही जीवन क्रिया के प्रति ही हम 'स्वयं' ही जागृत हुए ? 'लघु क्रिया' जो है, 'गुरु क्रिया' को पहचानने अथवा अनुभव करने के विधि से?

उत्तर: वही जीवन सम्पूर्ण ज्ञान और जीवन से ही कार्य का रास्ता! यही कल्पना से हम बोध तक पहुँच गये । पहले कल्पना आती है, कल्पना वस्तु रूप में साक्षात्कार हो जाता है। साक्षात्कार का बोध होता है। बोध होने पर अनुभव की आवश्यकता बन जाती है। वो स्थिरता का अनुभव होता है।

जिज्ञासा: क्या साक्षात्कार में जो वस्तु पहचानने में आता है, वो बोध में और पक्का होता है?

उत्तर: स्थिरता होती है।

जिज्ञासा: और जो पहले से बना है उसमें अंतर्संबंध ज्यादा स्पष्ट होता है?

उत्तर: वही है।

जिज्ञासा: साक्षात्कार मे जो वस्तु पहचाना वो बोध में और 'पक्का' होता है। 'स्थिर' होता है। उससे वस्तु में अंर्तसंबंध अधिक स्पष्ट होता है?

उत्तर: अध्ययन विधि से उसी का अनुभव होता है, जो पक्का होता है। बुध्दि में अनुभव अनुक्रम से होता है। अनुभव का मतलब है अनुक्रम से होना। अनुक्रम है विकास क्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति। सहअस्तित्व में ये पाँच सूत्र ही अनुभव का सार है। इसी क्रम से अनुभव होता है। सहअस्तित्व का मतलब सत्ता में संपूर्ण जड़-चैतन्य प्रकृति संपृक्त, भीगे रहने से उर्जा संपन्नता, ज्ञान संपन्नता; चैतन्य प्रकृति में ज्ञान संपन्नता और जड़ प्रकृति में उर्जा संपन्नता ये दो ज्ञान है। इसके बाद विकास क्रम में रासायनिक-भौतिक संसार, विकास रुप में जीवन, जीवन दो प्रकार से- जीव चेतना विधि से और विकसित चेतना विधि से। अब तक जीव चेतना विधि से steady practice (अभ्यास) हुआ है और विकसित चेतना विधि से Practice (अभ्यास) होना शेष। उतना ही तो कहा है।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जैसे वास्तविकता क्रम से साक्षात्कार होकर बोध होता है।

उत्तर: वो स्थिर होता है, अध्ययन से कब होता है? समझदार प्रमाणित व्यक्ति के साथ प्रमाण पंरपरा के साथ करने से होता है | अभी अपन 'विधी' तक पहुँचे हैं। पंरपरा अभी नहीं बना है। विधि तो अब सामने आया है।

जिज्ञासा: समझदार प्रमाणित व्यक्ति यदि उपलब्ध नहीं है, तो अध्ययन हो नहीं सकता?

उत्तर: संभव ही नहीं है। प्रमाणित व्यक्ति के बिना अध्ययन कैसे शुरु होगा?

जिज्ञासा: 'वस्तु' को समझाने के लिए कोई है ही नहीं, इसीलिए ?

उत्तर: समझने के लिए वस्तु सब है, समझने के लिए सभी बैठे है किंतु <u>समझाने वाला</u> नहीं। अभी समझाने वाला होता है, ये हमारे जैसा ही है। हमको बोध है, इसीलिए हम बोध करा पाते हैं|

जिज्ञासा: समझाने वाले व्यक्ति के लिए तीन आवश्यकता लगते हैं : 1) वस्तु का स्पष्टीकरण देना , समझाना; 2) दूसरा उनसे हम प्रेरणा पाते हैं, विश्वास करते हैं, तीसरा, उनके आचरण का अनुकरण करने...

उत्तर: प्रमाणित रहना एक शब्द। समझने वाला प्रमाणित व्यक्ति है बस। प्रमाणित व्यक्ति क्या चीज़ का ? विकास क्रम, विकास, जाग्रति क्रम जागृति का; सह अस्तित्व में सह अस्तित्व के रूप में प्रमाणित कर पाना। इसका स्वरुप क्या है- समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व के रूप में जीता हुआ हो; नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य रूप में जीता हुआ हो; स्वधन, स्वनारी/पुरुष, दयापूर्ण कार्य-व्यवहार में जीता हो। यही निरपराध व्यक्ति का स्वरुप बताया। हमने जो संविधान लिखा है, वह उतना ही है ना। संविधान उसी के आधार पर तो टिका हुआ है।

जिज्ञासा: आपने कहा था कि समझा हुआ प्रमाणित व्यक्ति की आवश्यकता इसीलिये है क्योंकि 'तदाकार, तद्रूप होता है', उसका विश्वास करने के लिये अध्ययन करने का अधिकार आने के लिए उसकी आवश्यकता है।

उत्तर: अधिकार को <u>प्रकट</u> करने के लिए | अध्ययन करने का अधिकार हर व्यक्ति के पास रहता है जीवन में। उसको <u>क्रियान्वित</u> करने के लिये, प्रेरणा पाने के लिये | प्रमाणित व्यक्ति के बिना प्रेरणा कहाँ से होगा?

जिज्ञासा: और 'मानवीयता पूर्ण आचरण' का अध्ययन करना है तो जो व्यक्ति उसके साथ जीता है, उसके अध्ययन से ही संभव है ?

उत्तर: पठन अध्ययन नहीं है; शब्द के अर्थ में यथार्थ को समझा हुआ व्यक्ति का वचन होता है; शब्दों के अर्थ में अस्तित्व में वस्तु होता है, वास्तविकता । सहअस्तित्व रूप में होता है, उसका सुनना, वह श्रवण हुआ। श्रवण सूचना है। सूचना होने से यह होगा कि 'यह सच्चाई है', इसको स्वीकार होना। यह सूचना से होता है, वो स्वयं में व्यक्त होता है। न्याय, धर्म, सत्य को जब यह स्वयं में तौलना बनता है, तब आभास हो गया। तुला हुआ विचार हो गया, वो प्रतीति हुआ तो बोध गया। बोध हुआ, तो अनुभव हुआ, प्रमाणित हो गया। समझना किस बात को- न्याय, धर्म, सत्य को। सत्य क्या है- सहअस्तित्व; न्याय क्या है- हमारा आचरण। तीन कोर्स में बताया | तीनो कोर्स में जीना है - यह न्याय है, यह धर्म है, सत्य है, सहअस्तित्व को स्वीकारना। परम सत्य उसी को नाम दिया। तीनों प्रकार से जीना ही धर्म है। व्यवहार में स्वधन, स्वनारी/पुरुष, दयापूर्ण कार्यव्यवहार पूर्वक जीना ही न्याय है। न्याय रूप में जीने वाला, सत्य रूप में जीने वाला, समाधन रूप में जीने वाला व्यक्ति ही है। यही निर्दोष व्यक्ति ही हो सकता है, है और उसको प्रमाणित करने के लिए एक से अधिक व्यक्ति चाहिये। मानव ही उसको समझेगा मानव ही उसको समझाएगा। एक से अधिक व्यक्ति के बिना समझना, जीना कहाँ बनता है। उस ढंग से सहअस्तित्व की शुरुआत है।

जिज्ञासा: यदि प्रमाणित व्यक्ति के बिना अध्ययन करना है तो ...

उत्तर: कोई सूचना देने वाला होगा | कोई स्पष्ट करने वाला होगा | उससे जो होगा वो होगा | हाँ | 'जागृति होता है', 'तदाकार होता है'- इस बात पर यदि विश्वास रहे तो literature (ग्रन्थ) से अध्ययन किया जा सकता है |

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो बोध होता है, वही अध्ययन है। 'अध्ययन' का मतलब 'प्रतीति' होना। उसके पहले 'अध्ययन का प्रयास' है।

उत्तर: अध्ययन का पहला कदम है न्याय, धर्म, सत्य स्वीकार होना; दूसरा कदम है बोध होना; तीसरा कदम है अनुभव होना: चौथा कदम है प्रमाणित होना।

जिज्ञासा: तो श्रवण, मनन, निदिध्यासन- तीनों साथ में होने से अध्ययन है

उत्तर: यह तीनो अध्ययन के सीमा में है।

जिज्ञासा: पिछले वर्ष के अनुभव शिविर में आपने कहा था कि हर वस्तु को हम रूप, गुण, स्वभाव धर्म के साथ पहचान पाते हैं- उसका नाम है साक्षात्कार।

उत्तर: स्वभाव, धर्म के रूप में पहचानना प्रधान। स्वभाव, धर्म के रूप में पहचानना सहअस्तित्व में होता है, प्रकृति में यह चारो होती है। सहअस्तित्व को समझना स्वभाव और धर्म के रूप में पहचाना जाता है। सहअस्तित्व ही धर्म है,

साथ में होना ही धर्म है। होने के रूप में धर्म है सहअस्तित्व, और रहने के रूप में प्रकृति। होना तो प्रकृति और सत्ता और रहने के विधि में प्रकृति।

जिज्ञासा: साक्षात्कार के बाद हमको कुछ करना नहीं है। अपने आप से होता है जीवन में ?

उत्तर: साक्षात्कार सफल होने का प्रमाण है बोध होना, बोध हुआ तो अपने आप में अनुभव होना।

जिज्ञासा: यह स्पष्टीकरण चाह रहे थे कि 'साक्षात्कार पूरा' होने का मतलब है कि उसके साथ-साथ बुद्धि में अवधारणा पूरा होना। उसके बाद ही बोध और अनुभव होता है?

उत्तर: अवधारणा यदि नहीं होता है तो अनुभव होता ही नहीं। बुद्धि में बोध होना, फिर अनुभव होना।

जिज्ञासा: जब आप कहते है कि 'साक्षात्कार हो गया तो तत्काल बुद्धि में बोध होता है'। यहाँ, 'हो गया' का मतलब 'पूरा' होने से है?

उत्तर: साक्षात्कार होने का प्रमाण हुआ, बोध ।

जिज्ञासा: २००६ में आपसे सुना था – 'साक्षात्कार होने के साथ-साथ क्रम से बुद्धि में स्वीकृति होती है, जब पूरा सहअस्तित्व का साक्षात्कार हो जाता है तब उसके साथ बोध और अनुभव होता है।'

उत्तर: बोध होकर अनुभव होता है। इसी विधि से होता है|

जिज्ञासा: अभ्यास दर्शन के 'योगाभ्यास' अध्याय में आपने अनुभव को इस रूप में लिखा है: "ध्येय के अर्थ मात्र में, अर्थात ध्येय के मूल्य में चित् वृत्ति एवं संकल्प का निमग्न होना ही सत्तामयता में अनुभूति है"

उत्तर: चित्त, वृत्ति तृप्त होने पर अवधारणा हुआ। मतलब मन, विचार में तृप्ति हुई; चित्त, बुद्धि में तृप्ति हुई तब अवधारणा हुआ। ये कह रहे हैं अवधारणा ही आधार है। अवधारण के अनन्तर ही अनुभव होता है।

जिज्ञासा: इसमें 'ध्येय के अर्थ मात्र में' का क्या मतलब है ?

उत्तर: ध्येय क्या है- अनुभव। प्रमाणित होने के आधार पर, ध्येय के आधार पर अनुभव।

जिज्ञासा: 'संकल्प' ही प्रमाणित करने के लिए प्रयत्न करता है तो बुद्धि द्वारा यह प्रयत्न ही अनुभव के लिए आधार है ?

उत्तर: संकल्प क्या है? प्रमाणित होना। अध्ययन से प्रमाणित होने की इच्छा हो जाता है तो संकल्प होता है। उसको प्रमाणित करने के लिए अनुभव होता है

जिज्ञासा: तो बुद्धि में जो अवधारणा बनी, उसके बाद संकल्प होता है?

उत्तर: इतना ही बात है | अवधारणा होने से उसे जीना का निष्ठा बनता है | बोध होता है | बोध होने से प्रमाणित करने का संकल्प होता है, इसीलिए अनुभव होता है |

जिज्ञासा: जो अनुभव दर्शन का प्रथम वाक्य है- 'अब ब्रह्म जिज्ञासा है। मैं और मेरा में निर्भ्रांति के संदर्भ में', ऐसा प्रारंभ किया है... तो अवधारणा पूरा होने के बाद अनुभव के लिए बचा हुआ बिंदु यही है कि इकाई और व्यापक में जो सम्बन्ध है, ये स्पष्ट होने के लिए अनुभव की आवश्यकता है |

उत्तर: <u>यही</u> अनुभव है !! प्रकृति व सत्ता का अविभाज्यता का अनुभव होना। ये विभजित हो नहीं सकता है, इस जगह में पहुँचना। बोध होने से इस जगह में आते ही हैं |

जिज्ञासा: यह बात 'अनुभव' में ही आता है, 'समझ' में आता नहीं?

उत्तर: नहीं आता। अनुभव के पहले इसका भाषा है, अनुभव के बाद प्रमाण होता है। प्रमाण क्या है- जीना है। जीना तीन स्वरुप में होता है। प्राण निकालने वाली जगह यही है! इस जगह में कितने खरे उतरते हैं, सोच लो !

जिज्ञासा: यदि क्रम से देखें- जैसे, समझने की इच्छा जब तक नहीं है, तब तक श्रवण या भास् नहीं है; भास होने के बाद चित्रण में स्वयं प्रमाणिक होने की इच्छा नहीं होती तब तक तुलन नहीं होता। जब तक बुद्धि में स्वयं प्रमाणित होने की संकल्प नहीं होती; तब तक अनुभव नहीं होता। दोनों कंडीशन (शर्त) में प्रमाणित होने की बात है |

उत्तर: वही। अध्ययन की महिमा अपने जगह पर है, अध्ययन से अवधारणा चैनल (सेतु) बना है; अवधारणा से अनुभव का चैनल बना है, अनुभव के बाद अध्ययन का चैनल बना है। राउंड द विकेट (चक्रीय) हो गया!

जिज्ञासा: आपने 'पांच सूत्र' (सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति) या 'छह डिजिट' (नियम नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य) में पूरी बात को बताया है। उसमें 'पारगमीयता' के बिंदु को छोड़ कर, बाकी सब अवधारणा में आ जाता है? केवल 'पारगमीयता' छूटा है अनुभव के लिए?

उत्तर: अनुभव में ही पारगामीयता स्पष्ट होता है। पारगामीयता आने से दूसरे को समझने का ताकत आ गया। अभी दुसरे को समझना कहाँ बनता है? इतना ही बात है।

जिज्ञासा: व्यापक और पारदर्शीयता यह दोनों अवधारणा में आ जाता है? और अनुभव में पारगामीयता स्पष्ट होता है?

उत्तर: अनुभव में ही पारगामीयता का ज्ञान होता है। बोध में व्यापकता और पारदर्शिता आ जाता है |

जिज्ञासा: 'मध्यस्थ क्रिया' का जो बोध है उसे व्यवहार दर्शन के 1978 संस्करण में आपने लिखा है- "आत्म बोध ही आध्यात्मिक उपलब्धि है। अर्थात् सहअस्तित्व में व्यापक वस्तु में जीवन बोध ही आध्यात्मिक उपलब्धि है। अंतरनियामन प्रक्रिया द्वारा ही आत्म बोध होता है जो ध्यान देने की परम उपलब्धि है, यही जाग्रति है।" फिर लिखा है - "आत्मा की ओर बुद्धि का परावर्तन होते ही आत्म बोध तथा आत्मा सहअस्तित्व में प्रत्यावर्तन होने पर अनुभव होता है।"

उत्तर: इतना ही है- आत्मा सहअस्तित्व में प्रत्यावर्तन; बुद्धि आत्मा में प्रत्यावर्तन। ये हो जाता है- तदाकार हो जाता है, वही तदरूप है। तद्रूप अनुभव में, तदाकार बुद्धि में|

जिज्ञासा: तो अनुभव के पहले अध्ययन विधि से बोध है फिर अनुभव के पश्चात 'अनुभव बोध' है।

उत्तर: प्रमाण बोध है।

जिज्ञासा: अच्छा! अनुभव बोध और प्रमाण बोध एक ही है।

उत्तर: अनुभव का बोध होना ही प्रमाण बोध है। प्रमाणित करना ही कर्तव्य है।

जिज्ञासा: जब 'मैं प्रमाणित कर दिया' उसे, तब उसका भी बोध होगा?

उत्तर: कर्तव्य होगा। बोध तो अनुभव से ही है; प्रमाण बोध अनुभव से है। अध्ययन बोध, प्रमाणित करने के सम्भावना के रूप में है; प्रमाण बोध जीने के रूप में है।

जिज्ञासा: इसलिए अवधारणा को आपने लिखा है 'परिपुष्ट अनुमान' | तो वह अनुभव के तुलना में अनुमान की पुष्टि है?

उत्तर: अनुभव के पुष्टि में प्रमाण बोध है | अध्ययन की पुष्टि, यही परिपुष्ट अनुमान है, अवधारणा । इधर प्रमाणित होने का अनुमान, उधर अध्ययन का अनुमान।

जिज्ञासा: क्या 'अध्ययन विधि' में श्रवण, मनन, अवधारणा ये चक्रीय क्रम है कि नहीं; अवधारणा पूरा होने तक ?

उत्तर: अवधारणा एक ही साथ होगा। अध्ययन विविध आयामों से होता है। अध्ययन का सार अवधारणा में आता है। सार आने के बाद उस सार का अनुभव होता है। सार अवधारणा में, अध्ययन क्रम से आता है।

जिज्ञासा: सह अस्तित्व में हर वस्तु का भी क्रम से अध्ययन होगा ना ?

उत्तर: हर वस्तु का अध्ययन ही क्रम से होगा। अवधारणा एक ही moment (क्षण) में होगा; तब तक अध्ययन है।

जिज्ञासा: 'अध्ययन' का मतलब श्रवण, मनन है क्या ?

उत्तर: अनुभव विविध रूप में प्रसारित रहता है। उसको एकत्रित करना सार है। सार भाग संपूर्ण है। संपूर्ण ही सार है। संपूर्ण क्या है- सह अस्तित्व। सह अस्तित्व के लिए material (सामग्री) इकठ्ठा होता है अध्ययन से- सह अस्तित्व स्वीकार होने के लिए। स्वीकार होने के बाद उसका अनुभव, प्रमाण होता है।

जिज्ञासा: ये 'इकट्ठा' होना क्या है ?

उत्तर: ये अध्ययन है, इसके बाद अवधारणा।

जिज्ञासा: अब ठीक है बाबा | communication में गलती थी।

उत्तर: सभी आयामों से communicate कराते हैं। एक एक आयाम से। 275 आयाम है- सब इकठ्ठा होकर एक बिन्दु बनता है, सार बात। वो सार बात सह अस्तित्व है। सह अस्तित्व क्या है- सत्ता में संपृक्त प्रकृति। इसका चार आयामों से समझाया गया है, अंत में। चार आयाम है- विकास क्रम, विकास, जागृति क्रम, जागृति के रूप में। सह अस्तित्व अविभाज्य है। इतने को समझाया गया है। समझने के बाद ये सार बात हो गया। ये सार बात स्वीकार होता है- ये हुआ मनन। मनन से निकल गए तो अवधारणा में पहुँच गए। अभी श्रवण से मनन तक ही सारा झंझट है। इसी में आप लोगों को समय लग रहा है |

जिज्ञासा: आपसे सुना है कि "क्रम से वास्तविकताएं साक्षात्कार होकर बोध होता है"। प्रश्न ये था कि उस क्रम में पहले मनन की जो क्षमता थी, वो विकसित होती जाती है?

उत्तर: वही तो; अध्ययन ही क्रम है। बाकी ठीक है। मन की ताकत बढ़ जाता है। ताकत बढ़ने का मतलब उम्मीद बढ़ता है कि हम समझ सकते हैं। समझना ही अनुभव है।

जिज्ञासा: आप अवधारणा उसको कह रहे हैं, जब साक्षात्कार पूरा होकर बुद्धि में स्टोर हो गया? 'स्थिर' हो गया ?

उत्तर: हाँ।

जिज्ञासा: उसके पहले अवधारणा की तैयारी है?

उत्तर: हाँ।

जिज्ञासा: अवधारणा 'पूरा' ही होता है ?

उत्तर: हाँ। ये 'बूँद-बूँद' नहीं होता है। इसके पहले अध्ययन बूँद-बूँद होता है। बूँद-बूँद इकठ्ठा होकर सार बात अवधारणा में आता है। फिर अनुभव होता है।

जिज्ञासा: 'बूँद-बूँद' में साक्षात्कार होकर सार बात बुद्धि में आता है ?

उत्तर: साक्षात्कार होकर तदाकर होने के लिए, तद्रुप होने के लिए बुद्धि में पहुंचता है।

जिज्ञासा: बूँद-बूँद की बात साक्षात्कार तक ही है?

उत्तर: हाँ।

स्वयं पर विश्वास कैसे होता है? समझदारी से होता है। क्या समझदारी- मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना- समझदारी। जीव चेतना समझदारी नहीं है । 'जीव चेतना' के साथ इस दर्शन को प्रस्तुत करोगे; उसका निरर्थकता सिद्ध होगा। ये बात पहले से कह चुका हूँ । मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना में अपन संपन्न होते हैं, पारंगत होते हैं; विकसित चेतना इसको नाम दिया। विकसित चेतना में पारंगत होने के उपरांत स्वयं का मूल्याकन कर सकते हैं। उसके पहले दूसरे की शिकायत करते रहते हैं। अभी तक दूसरे की शिकायत है ना हर व्यक्ति के पास, हर सभा के पास, हर कचहरी, न्यायालय के साथ यही ना बना रहता है। शिकायत स्वमूल्यांकन का आधार बनता है कि समाधान आधार बनता है? समाधान आधार बनेगा या समस्या? क्या हाल है? निहाल है ना बात! समस्या के साथ हम मूल्यांकन करेंगे या समाधान के साथ; उसको तय कर सकते हैं। समाधान पायेंगे तब ना। समाधान संपन्न कैसे होंगे? जीव चेतना में हम समाधान नहीं पाएँगे; समस्या ही पाएँगे। समस्या को ही गायेंगे। समस्या को ही गिनेंगे, समस्या में ही हम पंडित कहलायेंगे, दक्षिणा पायेंगे । सभी बात होगा; किन्तु स्वमूल्यांकन होगा नहीं। स्व मूल्यांकन के लिए क्या होगा, समाधान को पाना ही होगा।

समाधान के अर्थ में स्वमूल्यांकन होगा। स्वमूल्यांकन का पहला आधार बनता है- हम जैसा बोलते हैं, वैसा करते हैं; जैसा करता हूँ, वैसा जीता हूँ कि नहीं; जैसा जीता हूँ, वैसा बोल पाता हूँ कि नहीं। यही चेक-बैलेंस प्रोग्राम (सघन जांच) है। इस विधि से मूल्यांकन होगा। यदि बोलने में, करने में, जीने में, होने में एकसूत्र में आ जाते हैं तो समाधान होगा या समस्या? इन चारों भागो में एक जगह में आना पड़ेगा, संतुलन यही है। एक व्यक्ति में संतुलन यही है।

1. कायिक, वाचिक, मानसिक, कृत, कारित, अनुमोदित विधि से नौ प्रकार से जो हम काम करते प्रकारान्तर से- इनमें एकसूत्रता बन जाए तो हमारा स्वमूल्यांकन होता है। पहला मूल्याकन ये है।
2. उसके बाद समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व में हम जी पा रहे कि नहीं- दूसरा मूल्याकन।
3. तीसरा कसौटी- नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य पूर्वक जीता हूँ कि नहीं।
4. चौथा कसौटी- स्वधन, स्वनारी/पुरुष , दयापूर्ण कार्य व्यवहार पूर्वक जीता हूँ कि नहीं।

ये चार कसौटी हर व्यक्ति अपने ऊपर लगा सकता है।

शिक्षा इसी के लिए है। स्मरण में आने वाले बात को पहले स्मरण में डालना; अनुभव में आने वाले बात को अंत में डालना। साधना में क्या होता है- अनुभव पहले, बाद में स्मरण। हमारा अनुभव का स्मरण में हम सारा बात प्रस्तुत कर रहे हैं। इसी प्रकार हर व्यक्ति सम होने के पश्चात स्मरण के आधार पर प्रस्तुतियां करता है। इसीलिये कहते हैं साधना विधि से पहले अनुभव, अनुभव मूलक विधि से अभिव्यक्ति; अध्ययन विधि से पहले अभिव्यक्ति उसके बाद अनुभव। जो अनुभव मूलक विधि से पुन: अभिव्यक्त है, उसका अभिव्यक्त होने के उपरांत अनुभव मूलक विधि से प्रमाण। हरी हर!

मनन-अभ्यास, अवधारणा, बोध एवं अनुभव

१३ जनवरी २०१२, अमरकंटक

जिज्ञासाः एक सप्ताह पहले आपसे बात यहाँ से शुरू हुई थी पठन से श्रवण होता है। श्रवण में सत्य का जो भाषा दिया जा रहा है उसके <u>अर्थ</u> रूप में स्वयं में कल्पना होना या चित्रण होना ही श्रवण है।

उत्तर: श्रवण में चित्रण होता है, ठीक है| चित्रण के साथ चिन्तन आता है, तदाकार। अध्ययन विधि से शब्द का अर्थ में वस्तु का अनुभव करना, वस्तु का पहचान होना ये तदाकार होने का आधार है। जब तदाकार होते हैं, बोध होता है इसको आपको स्वयं अनुभव करना पड़ेगा। यहाँ से भाषा से बनता नहीं है। भाषा का <u>अर्थ</u> ही समझ में आने की बात है, अर्थ के रूप में वस्तु को पहचानने के पश्चात् आपको ही पहचानना होगा |या हमारे पहचानने से आपका होगा? इसी का नाम है ज्ञान गोचर विधि।

1| ज्ञान गोचर विधि से शब्द का अर्थ को पहचानते हैं।

2| अर्थ के रूप में अस्तित्व में वस्तु को पहचानते हैं।

3| उसका बोध होता है।

4| अनुभव होता है।

5| प्रमाण होता है।

6| प्रमाण का अभिव्यक्ति होना शुरू होता है।

इतनी विभूतियाँ एक मनुष्य में समाया हुआ है, अधिकार रूप में प्रमाण रूप में प्रस्तुत करना आपका इच्छा है, इच्छा है तो करेंगे नहीं तो नहीं करेंगे, आपकी उदारता है, जैसी इच्छा वैसा करेंगे!

जिज्ञासाः श्रवण के बाद मनन भी एक प्रक्रिया है...

उत्तर: बुद्धि के अनुरूप जीने के लिये कल्पनाशीलता ही तैयार होता है उसका नाम है मनन।

जिज्ञासाः आपने यह कहा था कि न्याय, धर्म, सत्य की दृष्टि में तुलन होता है तो मनन होता है।

उत्तर: दृष्टि से, पुष्टि से, अध्ययन विधि से पुष्टि, अभिव्यक्ति में प्रमाण।

जिज्ञासाः आपसे सुना है, की जो हमने सुना, श्रवण किया, उसकी शोध पूर्वक हमारा आशा, विचार, इच्छा को न्याय, धर्म सत्य में 'स्थापित' करने का प्रयास करते हैं...

उत्तर: स्थापित हो गया, तो निदिध्यासन है | उसके पहले न्याय, धर्म, सत्य को स्वीकारना। वस्तु पहचानना, अस्तित्व में। न्याय क्या है? धर्म क्या है? सत्य क्या है? इसको पहचानना हुआ साक्षात्कार। साक्षात्कार होने के बाद बोध होता ही है, अनुभव होता ही है। बोध अनुभव के बाद प्रमाण को पुनः स्वीकारना। प्रमाण को स्वीकारने से प्रिय, हित, लाभ विलय हो जाते हैं। किसमें? न्याय, धर्म, सत्य में। यही स्वयं में जांचने की विधि में अंतिम बात है। हमारा प्रिय, हित, लाभात्मक प्रवृत्तियों न्याय, धर्म, सत्य में पूरा विलय हुआ की नहीं ये जांचना स्वयं में होता है। अंतिम में होता है। हर मुद्दे में होता है। अभी आपके साथ बात कर रहा हूं ये होता ही रहता है, मुझमें।

जिज्ञासाः आपने कहा था की 'अध्ययन विधि' में "श्रवण पर पूर्ण अधिकार के अनन्तर उसके अर्थों में चित्त वृत्ति को केंद्रीकृत <u>करना</u> है"

उत्तर: वही मनन ही है | केंद्रीकृत करने से तदाकार वाले प्रक्रिया में लग गए | तदाकार का मतलब यही है – मन वृत्ति एवं चित्त, बुद्धि के अनुरूप चलने के लिए तैयार हो जाए | उसका नाम है, 'केंद्रीकृत' होना। अभी बुद्धि से विमुख रहते हैं, मन, वृत्ति, चित्त। मन, वृत्ति एवं चित्त, वह बुद्धि के सम्मुख तैयार हो जाना ही 'मनन' है।

जिज्ञासा: और यही स्थिति आगे पूर्ण बोध पूर्वक आत्मा के अनुरूप हो जाने से <u>केंद्रीकृत रहता है</u>...जिसे आपने 'ध्यान' और 'निष्ठा' कहा है, अभ्यास दर्शन में |

उत्तर: भाषा विहिन विधि से, ज्ञान गोचर विधि से होता है। इतना requirement (आवश्यकता) लगता है।

जिज्ञासाः इसके लिए, वस्तु ज्ञान के लिए, जब वरीयता बनती है, प्राथमिकता बनती है तभी ये होता है।

उत्तर: यदि 'ज्ञान गोचर विधि' प्राथमिक बनती है तब ये ही हो जाता है, होने में कोई शंका नहीं। ज्ञान गोचर विधि second priority (द्वितीय स्थिति) में रहता है, दृष्टि गोचर प्राथमिकता में रहता है, वह चीज होता ही नहीं।

जिज्ञासाः मतलब वास्तविकता प्राथमिकता में आना है।

उत्तर: मुख्य बात यही है:-

1| सहअस्तित्व एक प्रधान वस्तु है।

2| विकास क्रम एक प्रधान वस्तु है।

3| विकास एक प्रधान वस्तु है।

4| जागृति क्रम एक प्रधान वस्तु है।

5| जागृति परम प्रधान वस्तु है।

इस ढंग से जीवन का प्राथमिकता बनता है, यदि ये प्राथमिकता में आता है अपने आप ठीक होगा श्रृंखला विधि से।

1| अध्ययन विधि से

2| साधना विधि से (अनुसंधान)

दो प्रकार से श्रृंखला बनता है।

साधना विधि से अनुभव पहले करते हैं उसके बाद अभिव्यक्ति करते हैं। अध्ययन विधि से पहले अभिव्यक्ति, उसके बाद अनुभव - ऐसा बनता है।

जिज्ञासाः पुस्तकों को पढ़कर हम अपने में शोध करते हैं कि 'ये वस्तु क्या है', ये वस्तु 'कैसे है' या अलग-अलग सूत्र "एक ही वस्तु" की कैसे इंगित कर रहे हैं, ये "मनन" का ही भाग हो जाता है।

उत्तर: यही मनन का ही भाग है। एक अर्थ में अनेक भाषा को एकत्रित करना, केंद्रीकृत करना, मनन है।

जिज्ञासाः क्या साक्षात्कार होने की ये लक्षण है कि उस वास्तविकता के प्रति उसके बाद हमारा कोई शंका बचता नहीं कि 'ये ऐसा ही है'।

उत्तर: इंगित हो जाना, साक्षात्कार हो जाना, स्वीकृत हो जाना, स्वीकृत होने के बाद ही अनुभव होगा।

जिज्ञासाः साक्षात्कार के साथ-साथ जो बुद्धि में deposit (इकट्ठा) होता है यही प्रतीति है।

उत्तर: अध्ययन बोध है, बोध होना ही स्वीकृति है। प्रतीति है।

जिज्ञासाः मतलब साक्षात्कार के साथ ही प्रतीति है। तो जितने भी वास्तविकताओं का साक्षात्कार होना ये सारा प्रतीति हो जाना ही 'अवधारणा' की स्थिति है।

उत्तर: उसी का नाम ही बिन्दु कहा है। सहअस्तित्व होना पहला प्रतीत होना, जड़-चैतन्य प्रकृति प्रतीत होना, प्रकृति निरंतर क्रियाशील रहना प्रतीत होना, चारों अवस्था स्पष्ट होना, विकास क्रम स्पष्ट होना, विकास स्पष्ट होना, जागृति क्रम स्पष्ट होना, जागृति स्पष्ट होना - इतना ही तो अनुभव है। अनुभव बिन्दु में इतना ही आता है।

जिज्ञासाः अनुभव के पूर्व में जो प्रतीत होता है, उसमें 'विकास क्रम' में क्या है? परमाणु, भूखे परमाणु और अजीर्ण परमाणु इतना प्रतीत होना?

उत्तर: ये सारा विकास क्रम में आ जाता है, ये सारा प्रतीत होगा पहले।

जिज्ञासाः और इसके साथ ''विकास'' प्रतीत होना मतलब स्वयं का ही निरंतरता स्वीकार होना।

उत्तर: विकास हो गया इसका मतलब ज्ञानावस्था में होना, जीवावस्था में होना। उसमें से ज्ञानावस्था में जो रहता है ज्ञान गोचर विधि से सम्पन्न होने की स्वीकृति होना। इतना हो जाता है, बोध में।

जिज्ञासाः 'जागृति क्रम' के साक्षात्कार, प्रतीति में क्या आएगा?

उत्तर: जागृति क्रम में ही प्रतीति है।

जिज्ञासाः अच्छा! ये जो मेरे साथ हो रहा है यही जागृति क्रम है, ये स्वीकार होता है।

उत्तर: हाँ| स्वीकार होने के भाग में, पूरा स्वीकार होता है तो अनुभव हो ही जाता है।

जिज्ञासा: अभी, मानव जागृतिक्रम में है - पशु मानव, राक्षस मानव - जीव चेतना विधि से, इसको समझना, जागृतिक्रम में ही साक्षात्कार, अवधारणा स्पष्ट होना…

उत्तर: हो जाने से जागृतिक्रम clear (स्पष्ट) हुआ |

जिज्ञासाः "जागृति" साक्षात्कार और प्रतीति होने का तात्पर्य क्या है?

उत्तर: "जागृति" आचरण, नियम | प्राकृतिक नियम, नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य पूर्वक जीना, समाधान, समृद्धि, अभय सहअस्तित्व पूर्वक जी पाना और स्वधन, स्वनारी, स्वपुरुष दया पूर्ण कार्य व्यवहार के रूप में जी पाना ये ही तो प्रमाण है।

जिज्ञासाः तो, अध्ययन विधि में सामाजिक नियम का साक्षात्कार और प्रतीति होता है।

उत्तर: होता ही है – 'होने' के रूप में होता है। तदाकार होने से सच्चाई के साथ प्रतीत होना शुरू होता है। होने के लिए जो मानवीय व्यवस्था है वह अपने आप आ जाता है। उसके लिए तर्क लगता है। उसके लिए थोड़ा विस्तार में तर्क

लगता है। तर्क लगने से पूरा हो जाता है। मानव के पास तर्क रहता ही है। जागृति क्रम में तर्क की कमी है ही नहीं। सत्य का अस्तित्व में अनुभव कर लिया, तर्क का कमी रहेगा, ऐसा नहीं है। अभी हम जो व्यक्त करते हूँ, वह तर्क संगत है की नहीं उसको बार-बार पूछा जाता है हम कोई institution (संस्था) में नहीं पढ़ा, आपको, एक इंजिनियर को समझा रहे हैं। क्या चीज है ये? अभी आप लोग जो पढ़े लिखे हो उसमें समाधान होता तो हम काहे को इसे प्रस्तुत करते!

जिज्ञासाः सामाजिक नियम स्वीकार होने के लिए उसके मूल में हमें क्या मनन करना है।

उत्तर: "मानव जाति एक, मानव धर्म एक" ये आ जाता है तर्क विधि से। आने के बाद मानव के सम्बन्ध में हम बात कर सकते हैं। तब तक आएगा नहीं ये। जब तक "मानव जाति एक, मानव धर्म" एक नहीं मानते तब तक मानव के बारे में बात नहीं कर सकते। अभी तक किसी ने किया नहीं। मानव जाति के पक्ष में कोई काम नहीं किया है। आप सोचो - क्या "मानव जाति एक, मानव धर्म एक" के बारे में किसी ने कहा भी है, सोचा भी है, बताया भी है, कहीं सुना है, सोचो!

इसको परिवर्तित करने की जरूरत है, तब विकास के रूप में प्रस्तुत किया "विकसित चेतना" को। चेतना विकास मूल्य शिक्षा को प्रस्तावित किया।

जिज्ञासाः इसको समझने के लिये क्या अध्ययन क्रम में प्रत्येक मानव के साथ सम्बन्ध को पहचानने या समझने के लिये हमारे में इच्छा होना आवश्यक है और उसके साथ 'अखण्ड समाज और सार्वभौम व्यवस्था' की कल्पना करना, क्या इसी से ये आगे बढ़ेगा।

उत्तर: अध्ययन विधि से चलकर के जब मानव का अध्ययन करते हैं, उस समय में ये स्वयं स्फूर्त हो जाता है। जैसा अध्ययन क्रम में 'मानव धर्म एक मानव जाति एक' उसका formula बताते है।

समाधान = सुख = मानव धर्म

हर मानव सुखी होना चाहता है, इसीलिए मानव धर्म।

जिज्ञासाः इसी क्रम में जब 'मानव के साथ अपने जीने की विधि' की सोचने जाते हैं तो सामाजिक नियम समझ में आता है?

उत्तर: अपने आप में बनता है, जीवन का वैभव है ये। जीवन का अधिकार का प्रयोग होता है तो हो ही जाता है। किसमें? तदाकार होने का <u>पहले</u> से ही। इसके लिए इसका अध्ययन कराया जाता है | नहीं तो काहे के लिए अध्ययन। यदि इस जगह नहीं पहुंचता है तब अध्ययन काहे के लिए।

पेट तो हर कोई भर लेता है। हाथी, भालू, चींटी सभी। अनुभव के पश्चात् ये सब ज्ञान हुआ हमें, किन्तु आपको अध्ययन के बाद अनुभव होगा ये बात है । दोनों में अन्तर इतना ही है।

जिज्ञासा: आपने कहा की 'तदाकार होने के पहले' ही सामाजिक नियम स्वीकार हो जाता है | इसका मतलब, नियम और न्याय पूर्वक व्यवहार होने से, धर्म पूर्वक या समाधान पूर्वक इच्छा होने से साक्षात्कार होगा और 'मानवीयतापूर्ण जीवन' में प्रवेश होगा? इसके अनंतर ही चित्त-वृत्ति संयंत होते हैं ? इसे ही आपने 'योगाभ्यास' अध्याय में 'धारणा' के भूमि से इंगित किया है ? आप लिखे हैं 'मानवीयतापूर्ण जीवन के अनंतर देश एवं तत्व में चित्त वृत्तियों का संयंत होना पाया गया है, यही धारणा है'|

उत्तर: वही | इसीलिए कहता हूँ, न्याय-धर्म-सत्य आभास पूरा हुए बिना प्रतीति होता नहीं | साक्षात्कार हुए बिना हम संयंत कैसे होंगे ? इस कारण से बोध और अनुभव रुका रहता है |

जिज्ञासा: मानवीयता को स्वीकारने के विधि से ही साक्षात्कार होगा?

उत्तर: नहीं तो कहाँ से लाओगे विकसित चेतना को? जीए बिना आएगा नहीं!

जिज्ञासाः अध्ययन क्रम में जो मानवीय व्यवस्था का पांच आयाम (शिक्षा, स्वास्थ्य, उत्पादन, विनिमय, न्याय) आपने बताया है, इसमें जीने का अभ्यास और सामाजिक नियम में जीने का अभ्यास आवश्यक है।

उत्तर: व्यवस्था में '<u>भागीदारी</u>' करने का है, <u>जीने</u> का नहीं। जीने की बात तीन विधि से बताया, a) स्वधन, स्वनारी/स्वपुरुष, दयापूर्ण व्यवहार b) न्याय-धर्म-सत्य पूर्वक संबंधों में जीना c) समाधान पूर्वक जीना - उस तीन विधि में जीने से व्यवस्था में जीना बनता ही है। अध्ययन में चारों अवस्था, सहअस्तित्व आता है।

जिज्ञासाः तो ये पांचों आयाम में, क्या कम से कम तीन आयाम में भागीदारी किये बिना अध्ययन पूरा हो सकता है?

उत्तर: अध्ययन करते समय में इसका आवश्यकता बनता है। पांचों में कर लो, तीन में कर लो, दो में कर लो। जितने में करना है कर लो! यही विविधता रहेगी।

जिज्ञासाः और सामाजिक नियम में जीने का अभ्यास?

उत्तर: वह तो <u>पहले</u> से ही हो गया। वो हुआ, तभी यह (भागीदारी) वाला बताया।

जिज्ञासाः बाबा आज के दिन मैं 'स्वधन' में तो नहीं जीता हूं।

उत्तर: शनैः शनैः आपका मन स्थिर होने से, आप संतुष्ट होने की स्थिति में धीरे-धीरे स्वावलंबन की व्यवस्था बना लेंगे। धीरे-धीरे होता ही है। पुरूषार्थ से ये सब होता है हम से समृद्धि, सिद्धांत है। अभी पढ़ा लिखा व्यक्ति श्रम से सन्यास ले लिया। पढ़ा लिखा व्यक्ति श्रम करना शुरू करता है, बाकी सब करेंगे ही। आज भी पढ़ा लिखा व्यक्ति का बाकी लोग अनुकरण करते हैं, कल भी करेंगे।

जिज्ञासाः क्या परधन, परनारी/परपुरूष परपीड़ा सोचते हुए अध्ययन सफल हो सकता है?

उत्तर: कहाँ सफल होगा, नहीं होगा।

जिज्ञासाः क्या अध्ययन क्रम में मैं बौद्धिक नियम का अभ्यास करूं?

उत्तर: बौद्धिक नियम का अभ्यास होता ही है, वही अभ्यास है और कौन सा अभ्यास! अध्ययन काल में यही अभ्यास है। बौद्धिक नियम होने से व्यवहारिक नियम होता ही है, सामाजिक नियम होता ही है। बौद्धिक नियम यदि संतुलित होता है, तभी सामाजिक, व्यवहारिक नियम स्वयंस्फूर्त होता है।

जिज्ञासाः बौद्धिक नियम का अध्ययन क्रम में अभ्यास करने का मतलब है, उसकी तुलन करना, तौलना उसको? मनन प्रक्रिया में व्यवहाराभ्यास में आएगा?

उत्तर: अध्ययन के आधार पर, शब्द के, अर्थ के रूप में तौलना उसमें निश्चय पाना।

जिज्ञासाः आज के दिन दिखता है कि मनन प्रक्रिया में प्राथमिकता बनाने के लिए हम लोग जो पहले से जीए हैं वह जो विधि है वह अड़चन करता है, लगता है कि यह 'नया'आने से वह 'पुराना' छूट जायेगा।

उत्तर: पहले से अध्यास है, जीव चेतना विधि से उसको ना छोड़ने के लिए हम इसको प्राथमिकता देते नहीं है। धीरे-धीरे शरीर परिवर्तन के आधार पर धीरे-धीरे वह पकड़ में आ जाता है, यदि यह होता है तो एक पीढ़ी में बहुत है। उसके बाद युवा पीढ़ी में आ गया बहुत है। तीसरा पीढ़ी में बच्चों में आ गया बहुत हो गया।

जिज्ञासाः श्रवण पूरा होने के लिए वांङमय को कितने बार पढ़ें।

उत्तर: जब तक अर्थ समझ में नहीं आयेगा, अर्थ के रूप में अस्तित्व में वस्तु नहीं समझ में आयेगा तब तक पढ़ना है।

जिज्ञासा: तो क्या ये बारंबार पढ़ने से हमारा ध्यान उसमें बना रहता है। अर्थात, स्मृति पटल में रहेगा?

उत्तर: उतना ही! बारम्बार याद दिलाने का काम है ये, सूचना के रूप में, सूचना और भाषा। भाषा का अर्थ वस्तु, वस्तु का पहचान पांडित्य है। उसमें तदाकार होना अनुभव का शुरूआत है, प्रतीत हो गया। तदाकार हो गया, तद्रुप होना अपने आप होता है। इसमें भाषा की जरूरत नहीं है। अनुभव के पश्चात् प्रमाण स्वाभाविक है। उसको जीवन स्वीकारता है, मन स्वीकारता है, फलस्वरूप व्यक्त होता है।

जिज्ञासा: तो क्या ऐसे है कि श्रवण के बाद मनन की एक स्थिति में जब प्रौढ़ता बन जाती है, हमारा जो इच्छा, विचार, आशा है, लम्बे समय तक वस्तु में ही रमा रहता है और पुस्तक पर अभी जो निर्भरता है, छुट जायेगी।

उत्तर: पुस्तक छुटकर के सत्य के ऊपर निर्भर होगा। सत्य के ऊपर निर्भर होने पश्चात् हम समाधान पूर्वक जीना बनता है, समृद्धि पूर्वक जीना बनता है, अभयता पूर्वक जीना बनता है और सहअस्तित्व में संतुलन को बनाए रखना बनता है।

जिज्ञासा: अभी दिखता है की कुछ सूचनाएं 'मुझमें' स्मरण में है, बाकी सारा पुस्तक में ही है। वह सारी सूचना 'मुझमें' आ जाएगी तभी तो मैं उस पर ठीक से शोध कर पाऊंगा, 'मनन' कर पाउँगा?

उत्तर: वह सारा सूचना श्रवण में आने से पहले हम शोध शुरू करते हैं उसमें होता नहीं। सारा सूचना से तदाकार हो जाए तो शोध शुरू हो जाएगा। स्वाभाविक होगा, यह अधूरा में नहीं होता है। शोध क्या है? ये ठीक है कि पहले वाला ठीक है। पहला का दो विचारधारा है। भक्ति-विरक्ति को आदर्शवाद कहते हैं। सुविधा संग्रह को भौतिकवाद कहते हैं। इसमें क्या ठीक है? ये दोनों ही ठीक नहीं है। तब तो यह सहअस्तित्व वाद ठीक है, कि ये दोनों ठीक है (आदर्शवाद, भौतिकवाद) ऐसा चर्चा करने से बहुत सारा आयाम खुल जाते हैं।

जिज्ञासा: स्वयं के निरंतरता की स्वीकृति होने के लिए मुझे क्या करना होगा?

उत्तर: प्राथमिकता| अध्ययन को प्राथमिकता देने से निरीक्षण-परीक्षण की प्राथमिकता आयेगी। परीक्षण की प्राथमिकता से निकल जाने के पश्चात् प्रमाण की अभिव्यक्ति शुरू होता है। यदि प्रमाण की अभिव्यक्ति शुरू होता है तो समाज सुधरने का रास्ता बनता है। हर व्यक्ति भ्रमित अवस्था में समाज का घातक है। कहीं न कहीं दूसरे व्यक्ति को damage (घायल) कर रहा है। चाहे चाहकर या न चाहकर। वही व्यक्ति समझने के उपरान्त समाज के लिए उपयोगी हो जाता है।

जिज्ञासा: इसमें जो रूकने की जगह दिखता है स्वयं में वह यह है कि अभी जो 'होने' का स्वरूप है, अपने आप को पूरा शरीर मान के रखे हैं। "शरीर से भिन्न" मेरा कोई अस्तित्व है, इसके लिए जगह थोड़ा कम बनता है।

उत्तर: 'भिन्न' कुछ नहीं है, शरीर और जीवन का सहअस्तित्व में जीता हूँ। सहअस्तित्व विधि से यही अध्ययन है। संयुक्त रूप में जीने पर मानव का संज्ञा, जीवन का संज्ञा से निकल गया, शरीर का संज्ञा से निकल गया, मानव का संज्ञा आ गया जीवंतता के आधार पर, जीवन्त कौन बनाया, जीवन बनाया, इसकी हम छोड़ करके जी रहे हैं उसको स्मरण दिलाने की प्रयत्न है।

जिज्ञासाः ये स्मरण में तो है बाबा, इसकी स्वीकृति में परिवर्तन करने के लिए|

उत्तर: पहले स्मरण में आ जाए, वह फिर स्वीकृति में आता रहेगा।

जिज्ञासाः इस विधि से क्या क्रमशः साक्षात्कार हो कर प्रतीति होने के क्रम में ही स्वयं का निरंतरता भी स्वीकार हो जाएगा।

उत्तर: पहले जीवन और शरीर, दोनों स्मरण में आ जाए, उसका संयुक्त रूप में मानव संज्ञा है ये स्थिर हो जाए फिर आपका आगे बढ़ना बनता है उससे पहले काहे को बनेगा। शरीर को छोड़ दिया, जीवन को ले के चल दिया नहीं बनेगा। आदर्शवाद ''जीव'' को लेके चला, जो नहीं बना, भौतिकवाद ने जीवन को छोड़ दिया, शरीर को पकड़ा, उसमें भी नहीं बना। दोनों प्रयोग हो गया की नहीं? आदर्शवादी युग से भौतिकवाद युग में ज्यादा अपराध हुआ मानव जाति में, ये माना जा सकता है कि नहीं।

जिज्ञासाः क्या इसकी विधि ऐसी है कि जैसे क्रमशः साक्षात्कार हो कर बुद्धि में प्रतीति होता है तो चित्त को पता चलता है कि "बुद्धि भी एक क्रिया है"। इससे क्रमशः 'स्वयं की निरंतर' होने की जो बात है, चिंतन पूर्वक बुद्धि से शुरू हो जाता है?

उत्तर: बुद्धि से ही निरंतरता की शुरूआत होती है। बुद्धि में बोध उसी का होता है जो तदाकार होता है। दूसरा कोई रास्ता नहीं है। चाहे अभ्यास विधि हो, चाहे अनुभव विधि हो। दोनों विधि से तदाकारता बना ही है।

जिज्ञासाः तो स्वयं के 'निरंतर स्वरूप' को पहचानने की इच्छा के बिना वह (स्वयं की निरंतरता) समझ में आयेगा नहीं।

उत्तर: इच्छा के साथ ही आएगा। इच्छा नहीं होगा तो तदाकार होगा ही नहीं। प्रतीति होने वाली बात ढक जाएगा। इस आधार पर आप अपना मूल्यांकन कर सकते हो। प्रयोग करते समय भी, प्रयोग के बाद भी।

जिज्ञासाः अनुभव के पूर्व में जो प्रतीति होता है, उसमें क्या स्वयं का गठनपूर्ण स्वरूप में होने का भी प्रतीति हो जाता है।

उत्तर: हो जाता है, अस्तित्व में जो है उसी के साथ तदाकार होने पर निरंतरता है, नहीं तो नहीं होता है। अस्तित्व में जो नहीं है, उस कल्पना का कोई तदाकार नहीं होता। कल्पना ही वस्तु के साथ तदाकार होता है। वस्तु मन के साथ या वृत्ति के साथ तदाकार हो गया, ऐसा नहीं होता। चित्त ही वस्तु के साथ तदाकार होता है। अभी भ्रमित अवस्था में कल्पना के साथ तदाकार होता है, उसके बाद वस्तु के साथ होता है।

अपने ही कल्पना के साथ तदाकार होने से व्यक्तिवादी या समुदायवादी होता है। व्यक्तिवाद भोग के लिए, समुदायवाद संघर्ष के लिए है। अभी तक मानव की गति यहीं तक है - संघर्ष और युद्ध।

जिज्ञासाः भ्रमित अवस्था में जो ''मैं'' संज्ञा है, जैसे 'मैं बोलता हूँ' या 'मैंने ये देखा', "मैंने चित्रण किया", जीवन में कौन सी क्रिया अपने आप की "मैं" माना रहता है, भ्रमित अवस्था में।

उत्तर: भ्रमित अवस्था में मन, शरीर। मन का मतलब शरीर। मनमानी करने का जुगाड़ शरीर से है। नियम पूर्वक भी जीने का माध्यम शरीर है।

जिज्ञासाः जैसे मुझे अब भ्रमित स्थिति में पता चलता है कि 'मुझमें चित्रण होता है' - तो ये कौन सी क्रिया देख रहा है चित्रण को।

उत्तर: चित्रण को वृत्ति देखता है। वृत्ति को चित्त देखता है। ऐसा बन गया है यह। चित्रण को वृत्ति स्वीकारने वाला है, वही प्रिय, हित, लाभ में जोड़ लेता है।

जिज्ञासाः मान लीजिए साक्षात्कार पूर्वक मैं अपना 'निरंतर होने' को स्वीकार लेता हूँ, तब जो ''मैं'' संज्ञा है, क्या ये बुद्धि रहेगा।

उत्तर: इसके लिए बुद्धि के अनुसार चलने वाला स्थिति में आना पड़ेगा।

जिज्ञासाः ''मैं'' जो है ये बुद्धि हो जाता है?

उत्तर: बुद्धि के तद्रुप होता है।

जिज्ञासाः बुद्धि 'द्रष्टा' हो जाता है इस जगह पर? अर्थात अवधारणा में?

उत्तर: ठीक है। उसके बाद बुद्धि के लिए इष्ट बन जाता है , आत्मा। आत्मा में अनुभव होता है, अनुभव का प्रमाण होता है। प्रमाण का स्वीकृति होता है बुद्धि में, बोध होता है। संकल्प होता है, अभिव्यक्ति होने का। उसके अनुसार हम काम करना, जीना शुरू कर देते हैं।

जिज्ञासा: जितनी भी वास्तविकता साक्षात्कार होकर प्रतीत होना है, ये सारा पूरा जो हो जाता है बुद्धि में, इस स्थिति को आप अवधारणा कह रहे हैं। पूर्ण बोध की जो पूर्व स्थिति है बुद्धि की - वही अवधारणा (है)? ।

उत्तर: वही प्रतीति। एक क्रिया का 3 नाम – अध्ययन-बोध, अवधारणा, प्रतीति।

जिज्ञासा: उसको आप ने ''अवधारणा'' नाम इसीलिए दिया है क्योंकि अनुभव मूलक विधि से जो अनुभव बोध होता है वही निरंतर धारणा है। उसकी पूर्व स्थिति को अवधारणा कहा। तो अवधारणा में जो पांचों (5) सूत्र हैं, ये सारे आ जाते हैं? (सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति)

उत्तर: अवधारणा में आवश्यकता के अर्थ में रहता है। आवश्यकता क्या? सुखी होना - रहना है। सुखी होने के बाद धारणा। अनुभव मूलक विधि से धारणा बन जाता है। यही धर्म|

जिज्ञासा: अवधारणा की स्थिति में समझने के लिए शेष क्या रह जाता है?

उत्तर: समझने के लिए कुछ नहीं रहता, अनुभव प्रमाण की आवश्यकता बनता है। अनुभव प्रमाण के बाद निरंतरता का आधार बनता है। अनुभव के बाद छुटने का आधार बनता नहीं।

जिज्ञासा: अवधारणा होने से बोध होना, बोध होने से अनुभव ...बोध से अनुभव के जगह के लिए आपने अभ्यास दर्शन में एक वाक्य लिखा है 'ध्येय के मूल्य मात्र में अर्थात् अर्थ मात्र में चित्त, वृत्ति और संकल्प का निमग्न होना ही सत्तामयता में अनुभूति है ।'

उत्तर: निमग्न होने का मतलब क्या है, उसमें तदाकार तद्रुप होना, तदाकार तद्रुप परस्परता में होता है। यही है निमग्न होना।

जिज्ञासा: मतलब बुद्धि आत्मा का संकेत ग्रहण करने के लिए तैयार हो गया?

उत्तर: तैयार होना, और <u>हो जाना</u>। यही निमग्न होना, अनुभव होना, तद्रूप अवस्था में होना | बुद्धि, आत्मा को स्वीकारे रहता है, तभी यह बनता है |

जिज्ञासाः यही अनुभव का बिन्दु है। जब तक प्रमाणित करने के लिए संकल्प होता नहीं तब तक बुद्धि पूर्णतया आत्मा का संकेत स्वीकारने के लिए तैयार नहीं हुआ है, मतलब अवधारणा के बाद प्रमाणित करने का संकल्प आवश्यक है, तभी बोध और अनुभव होता है।

उत्तर: पूरा बात बोध नहीं हुआ है, वहाँ तक ऐसा रहता है। बोध पूरा होने पर अनुभव होता ही है।

जिज्ञासा: बोध 'पूरा' होने का मतलब आत्म बोध ? वही पूर्ण बोध ?

उत्तर: उसके पहले अनुभव होता नहीं | बोध होने से अनुभव होना भावी है | आत्मा सदा अनुभव करने के लिए तैयार रहता है |

जिज्ञासाः इसका तात्पर्य अवधारणा होने से बोध होगा, बोध हो गया तो प्रमाणित करने का संकल्प होगा ही। अनुभव दर्शन का जो पहला वाक्य है वह यही स्थिति है। आपने लिखा है 'अब ब्रम्ह जिज्ञासा है, मैं और मेरे के संदर्भ में निर्भ्रान्ति अर्थात् असंग्धिनता के अर्थ में ब्रम्ह जिज्ञासा है' - यही बोध पूर्वक अनुभव की आवश्यकता है?

उत्तर: अनुभव तो स्वाभाविक होता है, अवधारणा हो गया, प्रतीति हो गया उसका अनुभव होना बहुत भावी है, उसके लिए कुछ अपने की करना नहीं है। अवधारणा होने तक प्रयत्न, पुरुषार्थ जिसको कहते हैं। उसके बाद 5 क्रिया (चिंतन, बोध-संकल्प, अनुभव-प्रमाणिकता) में कोई पुरुषार्थ नहीं। वह सब परमार्थ है। परमार्थ के साथ ही काम हो जाता है।

जिज्ञासाः क्या ऐसा है कि अवधारणा या बोध के बाद जो ''पारगामियता'' का बिन्दु है यही छुटा रहता है, यही समझने के लिए अनुभव होना है। पारगामियता समझ में आने का मतलब है, "मैं भीगा हूँ" – यह अनुभव में आना?

उत्तर: ये अनुभव में आ गया तो पूरा हो गया। श्रवण किया, बोध हो गया, निश्चय हो गया, अनुभव हो गया। अनुभव हो गया, तो प्रमाण हो गया। तीन ही स्थिति है:- (1) श्रवण, (2) बोध (3) अनुभव प्रमाण

जिज्ञासाः आपके साथ जो हुआ, जैसे समाधि के बाद संयम में जाने की प्रक्रिया के लिए आप को 2 वर्ष लगे , उस समय क्या आप में भी बुद्धि में अवधारणा होती गई।

उत्तर: वही क्रिया है, वही क्रिया को तो लिखा हूँ।

जिज्ञासा: उन 2 वर्ष में जब आपको आवाज भी सुनाई दी, यह सारा वही था...अवधारणा के अर्थ में?

उत्तर: अवधारणा के बाद अनुभव ही होता है। अनुभव के बाद संयम की जरूरत ही नहीं है। संयम का फल ही मिल गया। जब तक फल नहीं मिलता है तब तक झाड़ लगाते हैं ना, वैसे ही वह भी।

जिज्ञासा: आप में जो अवधारणा हुआ और हम में जो होगा दोनों में वस्तु एक ही है?

उत्तर: वस्तु एक, फल एक, परिणाम एक, प्रभाव एक।

जिज्ञासा: जैसे विकासक्रम-विकास-जागृतिक्रम-जागृति, न्याय-धर्म-सत्य, यह सब बुद्धि में अवधारणा होता है, आप को भी ऐसा ही हुआ? पहले बुद्धि में अवधारणा हुआ?

उत्तर: पहले अवधारणा हुआ, उसके बाद अनुभव हुआ तब पुस्तक लिखे, बोले। बोलने से कुछ लोग सुने, कुछ अनसुनी करने लगे। अभी भी ऐसे ही है। अभी सर्वमानव सुन लिया ऐसा कहाँ हुआ? सर्वमानव सुने बिना इसका कोई प्रयोजन नहीं है। इतना आसान नहीं है। ये जरूर है कि समाधान, समृद्धि पूर्वक हम परिवार में जी सकते हैं। इतना तक मानव तो आ गया। समाधान हमसे वियोग होता नहीं, समझने के बाद। श्रम पूर्वक यदि समृद्धि प्राप्त करते हैं, समाधान समृद्धि पूर्वक जी ही सकते हैं जैसा मैं जी रहा हूँ। आयु के अनुसार ध्यान देना पड़ता है , आयु के अनुसार 'एक व्यक्ति' श्रमशील ना हो, वैभव कैसे व्यक्त होगा।

जिज्ञासा: 2 वर्ष बाद जब आपका संयम सफल हुआ जैसे अनुभव हुआ, अनुभव के बाद जब अनुभव बोध हुआ, क्या उस समय दृश्य आया - पत्थर था, पत्थर पिघला और परमाणु स्वचालित रूप में था।

उत्तर: वह सब अनुभव के अर्थ में ही हुआ।

जिज्ञासा: उस समय आपको अनुभव हुआ था कि नहीं, जब ये 'पत्थर पिघलने' वाला दृश्य आया तब।

उत्तर: अनुभव के अर्थ में पत्थर को देखा, पत्थर पिघलता देखा, कोई एक स्थिति में सब परमाणु स्वचालित होता हुआ देखा, ये अनुभव के अर्थ में है।

जिज्ञासा: यह दृश्य देखना अनुभव के पहले 2 वर्ष वाला अंतराल में था, या अनुभव के बाद 3 वर्ष वाला में आया।

उत्तर: अनुभव के अर्थ में 2 साल गुजरा।

जिज्ञासाः 'स्वयं का गठनपूर्ण होना', आपके लिए अनुभव में आया कि उससे पहले आया।

उत्तर: अनुभव में आया।

जिज्ञासाः 'जीवन पुंजाकार में है' - ये सब भी अनुभव में ही आया?

उत्तर: अनुभव में आया। 'अनुभव क्रम' में ये सब आ गया। पत्थर से लेकर प्राणकोषा से लेकर, प्राणकोषाओं की रचना से लेकर परमाणु में अंशों का प्रस्थापन, विस्थापन, गठनपूर्णता ये सब अनभव होने तक पूरा हो गया। उसी आधार पर हमने अध्ययन के लिए प्रस्तुत किया है।

इस प्रक्रिया को छेड़ने के लिये विगत में आदर्शवाद ने अनुमति नहीं दिया। ये ज्ञान 'प्रवचन से नहीं होगा' ये लिखा है। प्रवचन पूर्वक बोध होता है, अनुभव होता है, स्वयं स्फूर्त विधि से, ये लिखा है, हमने ।

जिज्ञासाः 'अनुभव के अर्थ में' जो ये सारा हुआ, इसको देखने वाला क्या बुद्धि था?

उत्तर: पहले दृष्टा बनता है बुद्धि, उसके बाद अनुभव होता है आत्मा में, दृष्टा बनता है आत्मा। बुद्धि में <u>बोध</u> होता है लिखा है। 'दृष्टा' होता है नहीं लिखा है।

जिज्ञासाः बुद्धि में बोध होने का मतलब बुद्धि उसको 'देख' रहा है ना।

उत्तर: बुद्धि में <u>स्वीकृति</u> हो रही है।

जिज्ञासाः उसके बाद जो अनुभव आप को हुआ, एक ही क्षण में हुआ।

उत्तर: जैसे ही अनुभव हुआ, उसके साथ जो भी पहले से बुद्धि में collect (इकट्ठा) हुआ था उसमें सहमति लग गई। भाषा में इतना ही कहा जा सकता है। सहमति लगने से सुदृढ़ हो गया।

जिज्ञासाः जैसे अभी आपने कहा कि अनुभव क्रम में आया। "अनुभव क्रम" से क्या तात्पर्य है।

उत्तर: वही क्रम, पदार्थावस्था, प्राणावस्था, जीवावस्था, ज्ञानावस्था, विकास क्रम, विकास, जागृति क्रम, जागृति ये ही क्रम है। ये सारा इकट्ठा आता है। उसको हम व्यक्त करते हैं...अलग-अलग...बुद्धि में एक-एक कर के होता है, अनुभव में <u>एक साथ</u> होता है।

जिज्ञासा: जैसे आपको एक moment (क्षण) में अनुभव हुआ, उसके बाद जो 3 वर्ष का समय है, उसमें आप रोज 12 घंटे बैठते रहे।

उत्तर: **'**स्मरण' में परावर्तित होने तक हम अध्ययन करते ही रहे!

जिज्ञासा: आपने एक बार कहा कि जब तक 'आपकी संतुष्टि नहीं हुई' तब तक वह दृश्य आता रहा।

उत्तर: वही 'संतुष्टि' का मतलब है। हमारा स्मरण में स्थिर न हो जाए, तब तक संतुष्टि क्या होगा? बुद्धि आत्मा के अनुसार काम करना शुरू करे ये हमारा स्मरण में स्थापित होगा ना। स्मरण में स्थापित होने तक हम अभ्यास करते रहे। स्मरण के लिये। उसमें समय लगा। जो अनुभव-बोध में हुआ था वह चित्रित हाने तक। चित्रित हुए बिना स्मरण में नहीं है। जैसा इधर से शरीर के साथ जो संवेदनाएं होते हैं अनुभव में पहुंचता नहीं, उसी प्रकार अनुभव जो है ना, चित्रित हुए बिना व्यवहार में नहीं पहुंचता।

जिज्ञासा: तब आप इसको बताने योग्य हुए नहीं तो बता ही नहीं सकते थे। हम लोग जिस विधि से चल रहे हैं क्या उसमें परमाणु और प्राणकोषा ये सब प्रतीति में आ जाते हैं।

उत्तर: ये सब आ जाता है। आपका अवधारणा में आएगा, अनुभव में आयेगा, प्रमाण होगा। जिस विधि से हमने अध्ययन किया प्रकृति में, उसी विधि से लिखा है - सूचना के रूप में। हमारा 'सूचना' को 'अनुभव' में परिवर्तित करना हर व्यक्ति का अधिकार है।

जिज्ञासा: उसमें जो वर्णन किया है आपने, 'रचनाा तत्व, पुष्टि तत्व' ये सारा भी हम लोगों का अवधारण में आ जाएगा?

उत्तर: आ जाएगा, आराम से। क्योंकि साक्षी है, आपके सामने। हमारे सामने कोई साक्षी नहीं था। दोनों में दूरी इतना ही है।

जिज्ञासा: जैसे आप बोलते हैं कि 5 सूत्र समझना है (सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति) मगर इसमें विस्तार में गये तो काफी सारी वास्तविकता है ।

उत्तर: सब उसमें, वह 5 सूत्र में समाया है।

जिज्ञासा: तो ये जो 'समाया' है, वही अनुभव का बिन्दु है।

उत्तर: इसीलिए अनुभव को बिन्दु कहा, अभिव्यक्ति को सिन्धु कहा।

जिज्ञासाः बाबा, ये मैंने गणित जोड़ा था कि साधना में आप 5,840 दिन थे। मतलब 50,000 से अधिक घंटा आपके साधना में लगे। समाधि देखा है आपने 8,600 घंटा। समाधि को संयम में परिवर्तित करने 8,600 घंटे लगे। अनुभव के बाद चित्रण में लाने 3 वर्ष जो है, 13,000 घंटा। आपका पूरा साधना काल में 1 लाख घंटा का 'ध्यान' आता है। हमको भी क्या इतना समय लगेगा?

उत्तर: आप लोगों को उतना जरूरत नहीं है। आप लोग ज्यादा से ज्यादा 3 महीने में समझ सकते हैं। 3000 पेज की वस्तु है। अध्ययन को करने में इसका समय जो लगेगा, उसको 3 महीने से एक वर्ष तक लगाया जाए।

जिज्ञासाः बाबा दिन में 10 पेज पढ़ते हैं तो एक वर्ष में एक बार सारे पुस्तकों को पढ़ना होता है!

उत्तर: ठीक है ना, उसके बाद 6 महीने में, उसके बाद 3 महीने में, फिर एक महीने में पूरा हो जाता है, उसके बाद दिन में 100 पेज दौड़ जाना है।

जिज्ञासाः बाबा कुछ पेज पढ़ने के बाद मेधस तन्त्र शून्य हो जाता है! बाबा आप साधना में दिन में 12 घंटा केवल ध्यान में बैठे रहते थे, मैं अपना देखता हूँ दिन में 10-15 मिनट से अधिक ध्यान लगता नहीं, बाकी समय केवल विचार और 'कर्म' में फैला रहता है।

उत्तर: 12 घंटा अध्ययन कर सकते हैं ये बात को कहा है। यदि अध्ययन करने के लिए तुल जाते हो तो 12 घंटा अध्ययन कर सकते हो। साधना नहीं कर पायेंगे। इसीलिए तो अध्ययन के लिए व्यवस्था दिया है।

जिज्ञासाः बाबाजी, तदाकार में मन और वृत्ति की क्या भूमिका होती है?

उत्तर: जैसे पानी पीना। पानी के साथ मन तदाकार होता है की नहीं। ये ''चर्मचक्षु व्यवहार'' है। वही ''ज्ञानचक्षु व्यवहार'' में होता है। पवित्रता को पहचानते हैं। ज्ञानचक्षु में होता है कि चर्मचक्षु से होता पवित्रता! मन , वृत्ति और चित्त जो है, बुद्धि के अनुरूप चलने के लिए तैयार होना ही तदाकार है।

जिज्ञासाः क्या प्रतीति को ही आप 'निदिध्यासन' कह रहे हैं?

उत्तर: प्रतीति होना ही निदिध्यासन है।

जिज्ञासाः अभ्यास दर्शन में एक बात आया है, ''श्रवण, मनन, निदिध्यासन की संयुक्त प्रक्रिया ही अध्ययन है।'' ये तीनों जब <u>एकत्रित</u> हो जाते हैं तभी अध्ययन हुआ।

उत्तर: तभी अध्ययन हुआ, तभी शब्द का अर्थ में हम जा पाए।

जिज्ञासा: उससे पहले केवल उसका अध्ययन के प्रयास में रह गए...भाषा और तर्क पर्यंत

उत्तर: वह भी कल्याणकारी है, प्रक्रिया में रहना, प्रयास में रहना एक कल्याणकारी कार्यक्रम है।

जिज्ञासा: अवधारणा को ''अनुमान की पराकाष्ठा'' कहा है आपने, ऐसा क्यों कहा है? ''अवधारणा ही अनुमान की पराकाष्ठा एवं अनुभव के लिए उन्मुखता है।'' ऐसा लिखा है।

उत्तर: पराकाष्ठा का मतलब क्या? उसके बाद कुछ अनुमान रहता नहीं। अनुमान से सच्चाई का पहचान हो जाता है। सच्चाई का पहचान तक अनमान, सच्चाई पहचान के बाद अनुमान का पराकाष्ठा। पराकाष्ठा के बाद बोध , बोध होने के बाद अनुभव।

जिज्ञासा: 'अवधारणा' शब्द का प्रयोग अध्ययन विधि में साक्षात्कार पूर्वक बुद्धि में स्वीकृति के लिए, फिर बोध के लिए और मनोविज्ञान में आपने अनुभव विधि से बोध के लिए प्रयोग किया है |

उत्तर: सब बुद्धि से सम्बंधित है |

14 जनवरी 2012, मकर संक्रांत

जिज्ञासा: कल हमने जो बात किया था की अध्ययन पहले श्रवण पूर्वक प्रारंभ होता है। सूचना का श्रवण होना मतलब वह भाषा के अर्थ के रूप में हमारे में कल्पना होना। यही श्रवण है, ये भास हुआ। इस भास के साथ हम इसमें शोध करना शुरू करते हैं।

उत्तर: जब हम तौलना शुरू करते हैं, सुन करके तब प्रिय-अप्रिय, हित-अहित, लाभ-अलाभ में है या न्याय-अन्याय, धर्म-अधर्म, सत्य-असत्य में है। उसको तौलते हैं। तौलने के पश्चात् निर्णय करते हैं कि 'ये विकास' ठीक या वह पुराना ठीक।

जिज्ञासा: जो 'अलग-अलग' सूत्र हैं, अलग-अलग जगह बताई गई है| इनके शोध में जाते हैं|

उत्तर: वह सब बात एक ही अर्थ में है। अर्थ को सोचते हैं तब प्रिय, हित, लाभ या न्याय धर्म सत्य में है, इसको तय करते हैं। तय करने पर न्याय, धर्म वाला पलड़ा भारी हो गया तो स्वीकार लेते हैं। यदि प्रिय अप्रिय वाला भाग भारी होगा, तो उसीको स्वीकारते हैं।

जिज्ञासाः इसमें जैसे सूचनाएं मिलती है, पहले ये सारा 'बिखरा-बिखरा' सा लगता है तो ये क्यों होता है? क्यों कि तुलन जो न्याय धर्म सत्य के अर्थ में नहीं हुआ रहता है, इसीलिए?

उत्तर: श्रवण में न्याय, धर्म, सत्य की भी सुनता है। प्रिय, हित, लाभ को भी सुनता है। दोनों सुना रहता है, सुनने में। उसमें तौलने जाता है दोनों 2 भाग में बंट जाते हैं। 2 भाग में बंटने से न्याय, धर्म वाला पलड़ा भारी होता है। उसको स्वीकारना पड़ता है। हर व्यक्ति में ये प्रक्रिया स्वाभाविक है। जो पलड़ा भारी पड़ता है, उसको स्वीकारता है।

हर व्यक्ति अपने मन से अपने विधि से तौलने वाला दो पक्ष को तौलता ही है। स्वीकारने के बाद आगे सोच के चित्रण के बाद, साक्षात्कार के बारे में जाता है। तुलन ना हो और साक्षात्कार में चला गया, ऐसा कोई घटना होता ही नहीं।

जिज्ञासाः क्या न्याय-धर्म-सत्य तुलन होना ही मनन है?

उत्तर: हाँ|

जिज्ञासाः जैसे ''स्वभाव'' मैंने एक शब्द सुना, ''धर्म'' सुना, ''जीवन'' सुना ये सब पहले जो 'अलग-अलग' सा लगता है और उसके बाद पता चलता है कि ये सारो में अन्तर्संबंध है ये सारा चित्रण में ही होता है?

उत्तर: ये चित्रण, तुलन के बाद ही होता है।

जिज्ञासाः आपने जो अभ्यास दर्शन में लिखा है, "वांछित वस्तु देश एवं तत्व में मन, वृत्ति, चित्त संयत होना। यही धारणा है" इसमें वांछित वस्तु क्या है?

उत्तर: तत्व क्या है? न्याय, धर्म, सत्य।

देश और काल - देश और काल में हम अमरकंटक में हैं, आप पुणे में, वह रायपुर में। देश के लिए भी अनुकूल होना ऐसा हम प्रारूप बनाते हैं। 'जीने की जगह' के साथ जोड़कर देखते हैं।

जिज्ञासाः इसमें चित्त वृत्ति ''स्थापित'' होने में जो समय लगता है इसका क्या कारण?

उत्तर: तुलन है, उसमें हम ढीला किये रहते हैं। जितना ये ढीला रहता है उतना चित्त वृत्ति स्थापित नहीं रह पाता है। इसी में समय लगता है। साक्षात्कार होने से स्थापित होता है, नहीं तो बिखरा रहता है| तुलन नहीं होने से साक्षात्कार में नहीं पहुँचते हैं|

जिज्ञासा: पढने से श्रवण होता है | श्रवण में प्रौढ़ता होने से मनन, मनन में तुलन विधि को अपनाना है ...होने से चित्त वृत्ति जो है, साक्षात्कार पूर्वक 'स्थापित' होगा ?

उत्तर: ऐसा ही तो बना है बात |

जिज्ञासा: जैसा हम लोग हैं, हम लोग समझ भी रहे हैं और 'समाज कार्यक्रम' से भी लगे हैं।

उत्तर: (न्याय-धर्म-सत्य) तुलन वाला काम को ठीक से किये नहीं रहते हैं, इसलिए चित्त, वृत्ति बिखरना है।

जिज्ञासा: जी | इसमें यह भी लगता है कि (लोकव्यापीकरण) कार्यक्रम प्रधान होने से ये (चित्त-वृत्ति स्थापित होना) होता नहीं, फैल जाता है।

उत्तर: स्वयं का संतुष्टि बनता नहीं। संसार को संतुष्टि देने जाने से स्वयं का संतुष्टि बनता नहीं। स्वयं की संतुष्टि नहीं बनने से हम विराने रहते हैं। इसलिये कहा, जो केवल पढ़ते हैं वह प्रेरक हो सकते हैं। वह स्वावलंबी नहीं हो सकते और स्वतंत्र रूप में वह समझदार नहीं हो सकते। प्रमाण नहीं हो सकते। वेतन भोगी, व्यापारी रहते ये कोई भी आदमी प्रमाण नहीं होगा। प्रेरक हो सकता है, समझ सकते हैं, प्रेरक हो सकते हैं, सुनने के बाद तुलन यदि ठीक होता है, तुलन, न्याय, अन्याय, धर्म, अधर्म, सत्य, असत्य स्पष्ट होता है। प्रिय, हित, लाभ गौण हो जाता है, तब मानो कि वह साक्षात्कार में जाएगा। नहीं तो नहीं जायेगा!

साक्षात्कार हुए बिना हम ''समझे हैं'' ये विश्वास आता नहीं। साक्षात्कार से कम में 'हम समझे' ये विश्वास ही नहीं होगा। ''सुना है'' यही कह सकता है, इमानदारी से | जैसा हम ही कहते हैं - 'वेदों में ये लिखा है'। किन्तु उसको सुना ही है | पढ़ना भी सुनना ही है। जैसा भक्ति-विरक्ति। भक्ति को तौलने के लिए हमारे पास आधार ही नहीं बनता है। क्यो तौलें? इसमें प्रिय हित लाभ, न्याय धर्म सत्य को तौलना बनता ही नहीं। इसीलिए वह वर्तमान पीढ़ी, युवा पीढ़ी में काफी दूर हो गया। उसके जगह सुविधा संग्रह आ गया। अभी हम 'विकल्प' विधि लाये हैं।

समाधान समृद्धि क्या होना चाहिए? उसकी हर व्यक्ति को तय करना है। तप करने में पार पाते हैं तभी हम आगे चल पाते हैं नहीं तो आगे नहीं बढ़ेंगे।

जिज्ञासा: कल ये बात आई थी कि अध्ययन क्रम में बौद्धिक नियम पर भी ध्यान देना है, बौद्धिक नियम को समझने जाते हैं तो मानवीय व्यवस्था को सोचना पड़ेगा?

उत्तर: ये सब एक दूसरे से जुड़ा हुआ है।

जिज्ञासाः ये पूरा बात को अगर देखें तो ध्यान में रखने की 4 वस्तु है -

(1) स्वयं का 'जीवन' होने के रूप में पहचानने का प्रयास,

(2) मूल में ४ अवस्थाएं हैं, रूप-गुण-स्वभव-धर्म सहित, इकाई व्यापक में है और ये सारा सहअस्तित्व में है।

(3) मानव संबंध, अखण्ड समाज, पूरे व्यवस्था को समझने का प्रयास

(4) मेरा शेष प्रकृति के साथ जो संबंध है उसको पहचानना, उसमें जो अन्तर्संबंध है उसको समझना।

इतने में सारा इच्छा, विचार आशा को पहले निष्कर्ष होना होगा, अभ्यास में स्थिरता होना, फिर साक्षात्कार पूर्वक इसमें स्थापित होना...

उत्तर: स्थापित होना, सहअस्तित्व रूपी व्यवस्था को समझना। व्यवस्था को प्रमाणित होने के लिये योजना बनाना, बना के जुड़ जाना।

जैसे मैं जुड़ा हूँ। 30 वर्ष की आयु में अमरकंटक आया, 30 वर्ष साधना में लगाया, 30 वर्ष साधना से मिला हुआ प्रयोजन को मानव को अर्पित करने में लगाया। 90 वर्ष हो गया।

अभी 3 वर्ष से हमारा कोई प्रोग्राम नहीं है। कोई कार्यक्रम नहीं है। ये सब तैयार करने में कितना समय लगा है आप ही सोचो!

जिज्ञासाः 'अध्ययन विधि' में आपने मनन का परिभाषा बताया था - "श्रवण पर अधिकार होने के बाद उसके अर्थ में चित्त, वृत्ति को केंद्रीकृत करना, उसे जीना"

उत्तर: तुलन में न्याय, धर्म, सत्य यदि स्थिर होता है, पलड़ा भारी होता है, प्रिय, हित, लाभ गौण होता है, तब ये चित्त-वृत्ति अपने आप नियंत्रित नहीं होगा तो क्या होगा?

चित्त में चित्रण क्रियाशील रहना जरूरी है। क्रियाशील रहना होगा तो कोई न कोई विधि को तो स्वीकारेंगे ही (न्याय, धर्म, सत्य) पलड़ा भारी होने तक ''अध्ययन'' (है) | पलड़ा भारी होने के बाद तुलन का सार्थकता तय हो गया। उसके बाद तदाकार तद्रुप होने वाली बात आती है।

जिज्ञासाः 'श्रवण' के 'अर्थ' में चित्त, वृत्ति केन्द्रिकृत करने का मतलब जो चित्रण में स्मरण आया है, और शोध पूर्वक निष्कर्ष बना है, और वृत्ति में उसके अनुरूप जो विश्लेषण हुआ है, उसके 'सार' में जाने का प्रयास, जीने का प्रयास ही केंद्रीकृत होने की प्रक्रिया है?। यही ''अर्थ'' में जाने की प्रक्रिया ही मनन है?

उत्तर: वही है! अर्थ में जाने का रास्ता यही है! न्याय, धर्म, सत्य पूर्वक ही हम चल सकते हैं। आगे कहां? साक्षात्कार। साक्षात्कार में पहुंचने के बाद पुरूषार्थ खत्म हो गया। सारा प्रयास खत्म हो गया, तर्क खत्म हो गया। बाकी सब अपने आप होता है। बाकी में अपना पुरूषार्थ लगेगा, ऐसा कुछ नहीं है। साक्षात्कार के बाद बोध अनुभव अपने आप होता है। सारा समय साक्षात्कार होने तक ही है |

जिज्ञासा: 'चित्त वृत्ति संयंत' होना साक्षात्कार पूर्वक होता है...उसके पहले उसका अभ्यास है...वही 'श्रवण' के अर्थों में जाने की प्रक्रिया को मनन कहा ...तो मनन पूर्वक 'देश' एवं 'तत्व' का निर्णय होना ... होने-रहने का अभ्यास ...

उत्तर: निर्णय होना, उसका प्राथमिकता न्याय धर्म सत्य तुलन से ही होता है, नहीं तो होगा नहीं...

जिज्ञासाः ये दिखता है कि आप के साथ इस प्रकार बैठने में मन अच्छे से लगता है, या तो शिविर या गोष्ठी लेते समय लगता है, मगर इसके अलावा मन केन्द्रित होता नहीं, बिखरा रहता है, माने शनैः-शनैः ये विकसित होकर इसमें प्रौढ़ता आएगी, क्या ऐसा है?

उत्तर: बोलते समय में हम जिस बात को लोगों को इंगित कराते हैं, उस समय में हमारा मन केन्द्रिकृत रहता ही है। मन, वृत्ति, चित्त केन्द्रिकृत होता है, इतने में काम चल जाता है, 'व्यवहार' का। वही चीज 'परमार्थक' बात होता है। जैसा अभी बताया, ज्ञान गोचर जितना भी बात है वह सब परमार्थक है। ज्ञान गोचर जितना भी बात है वह प्रमाणित होने के लिए बुद्धि आवश्यक है।

मन, वृत्ति, चित्त इतना चीज एकत्रित होने की जरूरत है। इतना एकत्रित हुआ, साक्षात्कार हुआ, बुद्धि में बोध होगा ही। यही साक्षात्कार होने का मतलब है। ये होने से मन, वृत्ति, चित्त बुद्धि ये चारों एक सूत्र में आ गया। बोध होने तक पुरूषार्थ है। अध्ययन में क्या बोध? शब्द का अर्थ बोध, अर्थ में वस्तु बोध होता ही है। कुल मिलाकर के पुरूषार्थ का मंजिल है अनुभव। बोध हाने का फल स्वरूप अनुभव होता ही है।

जिज्ञासाः क्या साक्षात्कार में जो पहला वस्तु साक्षात्कार होना है, वह सहअस्तित्व है? ''इकाई और व्यापक के अलावा तीसरी चीज नहीं है'' - ये पहचान लेना ही साक्षात्कार है?

उत्तर: पहला अस्तित्व सहअस्तित्व है।

सहअस्तित्व में जीवन और शरीर

शरीर रचना के मूल में ये बात आया - विकास क्रम

उससे पहले आता है सहअस्तित्व मे जीवन

जीवन का स्वरूप समझना - जीवन का स्वरूप समझ में आने से जीवन क्रिया समझ में आ गया।

जीवन क्रिया समझ में आने से 'जीवन विद्या' हाथ लग गया। जीवन दृष्टा होना समझ में आ गया।

जीवन दृष्टा समझ में आने से विकास क्रम, विकास, जागृति क्रम जागृति हाथ लग गया।

- साक्षात्कार में यह सब आता है।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जो 'व्यवहार के नियम' है, इनका भी साक्षात्कार पूर्वक बोध होता है।

उत्तर: अभी तो 5 सूत्र बताया, ये होता है साक्षात्कार में - अभिव्यक्ति में ये सब (बाकी सूत्र, नियम) पूरा आता है। अनुभव में ये 5 सूत्र आता है। अभिव्यक्ति में हम जितना भी बात कर रहे हैं पूरा का पूरा, ये सभी आता है।

जिज्ञासा: जैसे बौद्धिक नियम है: असंग्रह, सरलता, स्नेह, विद्या, अभय।

उत्तर: ये सब आता है, अभिव्यक्ति में आता है। सारभूत समझ में आने से इससे संबंधित सब श्रृंखला समझ में आयेगा। उसी को कहा अनुभव बिन्दु रूप में है, व्याख्या सिन्धु रूप में है।

जिज्ञासा: इसी रूप में जो सामाजिक नियम है, यह भी बुद्धि में स्वीकार होता है, सामाजिक नियम भी सार रूप में स्वीकार होगा।

उत्तर: व्यवहार से संबंधित सब व्याख्यायित हो जाता है। आचरण ही नियम। आचरण में आते हैं तो चैतन्य प्रकृति में 4 प्रकार के चेतना (जीव, मानव, देव, दिव्य)। 4 प्रकार के चेतना का आचरण अलग है। ये सब व्याख्यायित हो जाता है, सूत्र समझ में आने से व्याख्या हो ही जाता है। सूत्र समझ में आने से उसकी कैसे व्याख्या करना है ये स्वाभाविक रूप में आता है।

जिज्ञासा: पिछला अनुभव शिविर (जनवरी 2011) में आपने कहा था कि 'रूप, गुण, स्वभाव धर्म के संयुक्त रूप में साक्षात्कार होता है'। इसका क्या ये आशय है कि रूप गुण, चित्रण में होता है, स्वभाव धर्म का साक्षात्कार होता है, इसलिए 'संयुक्त' रूप से उसको कहा।

उत्तर: श्रवण में रूप, गुण रहता है, साक्षात्कार में स्वभाव धर्म रहता है।

जिज्ञासा: इसका मतलब स्वभाव और धर्म का बोध होता है, रूप और गुण तो चित्रण में रह गया।

उत्तर: जैसे की पदार्थावस्था का स्वभाव धर्म, प्राणावस्था का स्वभाव धर्म, जीवावस्था का स्वभाव धर्म, ज्ञानावस्था का स्वभाव धर्म। इन चारों अवस्था का अलग-अलग स्वभाव धर्म है। वह समझ में आ जाता है, बोध हो जाता है। बोध होन से निश्चय हो जाता है, ''यही है''। तभी सत्य समझ में आता है तो उसका अनुभव हो जाता है।

जिज्ञासाः बोध में जिस वस्तु का बोध होता है, क्या उसका 'रूप' भी उसमें समाहित रहेगा।

उत्तर: अस्तित्व में सब रहता है ना भाई, अस्तित्व में नहीं है उसका कोई बोध होता नहीं। अस्तित्व में 4 अवस्था है। चारों अवस्था में से हर अवस्था का अलग-अलग रूप, गुण, अलग-अलग स्वभाव धर्म। रूप, गुण तो चित्त में रह जाता है, चित्रण में। उससे ज्यादा रूप का काम ही नहीं है, जीवन में। स्वभाव धर्म का बोध होता है तब जो है ना, पूरा अस्तित्व का बोध हुआ।

जिज्ञासाः क्या अनुभव आंखें खोलकर होगा?

उत्तर: आंखें खोलकर रखो, चाहे बन्द रखो, अनुभव होना जीवन में है।

जिज्ञासाः कल बात आई थी कि आपको अनुभव हुआ और 3 वर्ष तक उसके चित्रित होने में समय लगा, आप संतुष्ट होने तक। क्या हमारे साथ भी ऐसे अनुभव के बाद चित्रित होने में समय लगेगा?

उत्तर: आपके केस में पहले से चिन्हित रहता है। अध्ययन विधि में चित्रण पहले ही सूचना के रूप में रहता है। केवल अनुभव होना है। इसीलिए समय की बचत (है)। अभ्यास-अध्ययन विधि में और आविष्कार-अनुसंधान विधि में जो अन्तर है वह यही है। इसी में समय का अन्तर दोनों विधि से होना है।

जिज्ञासाः स्वयं की निरंतरता पहचानने के लिये मुझमें पहले 'इच्छा' होनी पड़ेगी...कि मैं पहचानना चाहता हूं स्वयं के चैतन्य रूप को।

उत्तर: इच्छा नहीं है तो अध्ययन ही नहीं करेगा।

जिज्ञासाः इसमें भय सा लगता है, अभी का वास्तविकता को शरीर माने है...

उत्तर: 'जो हम पाए हैं', वह छूट जायेगा। इसी का भय है।

जिज्ञासाः जैसा मैंने संसार, को संबंधों को, मान के रखा है ये सारा स्वरूप बदल जायेगा, ये भय रहता है।

उत्तर: ये भी भय रहता है।

जिज्ञासाः तो ये भय शनैः शनैः अध्ययन में विलय होते चले जाएगा।

उत्तर: अध्ययन करने से जैसा बादल छंटता है छंट जाता है। छंट करके, स्वीकार हो जाता है। स्वीकार हो कर के आगे बढ़ जाता है।

जिज्ञासाः क्या इसमें ऐसा है कि श्रवण और मनन से हम चित्त और वृत्ति को बुद्धि के संकेत ग्रहण करने योग्य करते हैं। उसके बाद जो साक्षात्कार और प्रतीति होता है, अवधारणा होती है, उससे बुद्धि को आत्मा का संकेत ग्रहण करने योग्य होता है। यही श्रवण, मनन, निदिध्यासन का साधना है?

उत्तर: ठीक है। मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि का आत्मानुगामी होगा। जैसा अवधारणा बना, अवधारणा बन गया तो 'आत्मा का ज्ञान' होना शुरू कर दिया, 'आत्मा का प्रकाश' में ही हम अवधारणा को पाते हैं। 'आत्मा का प्रकाश में अध्ययन होता है', लिखा है ना? - यही है|

जिज्ञासाः अध्ययन, अधिष्ठान के साक्षी में स्मरण पूर्वक होता है| अधिष्ठान का साक्षी में 'साक्षी' का क्या मतलब होता है?

उत्तर: "आत्मा की रोशनी में ही हम काम कर रहा हूँ" - ये बोध होता है।

जिज्ञासाः जैसे चित्त में साक्षात्कार हुआ तो बुद्धि उसमें सहमत होता है, क्या बुद्धि में बोध होने से आत्मा सहमत होता है?

उत्तर: न्याय प्रक्रिया के साथ वृत्ति जैसा सहमत होता है, वैसे ही बुद्धि के साथ आत्मा। ये चारों जीवन में होने वाले स्वाभाविक क्रियाएं है।

जिज्ञासाः जैसे हम श्रवण मनन कर रहे हैं तो ये करने का निर्णय भी चित्त ही ले रहा है। जैसे चित्त ही इच्छा कर रहा है कि "मुझमें श्रवण मनन हो!"

उत्तर: तृष्णा की जगह वही है, वही तृषित रहता है। शरीर के साथ होने के लिए मन, वृत्ति, चित्त का आधा भाग ही काम कर पाता है, साक्षात्कार वाला भाग चुप हो जाता है। जैसा अभी कोई दुष्ट है, काम कर रहा है, हम चुप रहते हैं की नहीं। जीवन में दुष्टता का भाव मन, वृत्ति, चित्त तक ही है। चित्त में चित्रण तक। बाकी पांच क्रिया चुप हो जाता है। चार क्रिया ही निर्वाह करता है। पूरा जीवन 'दुष्ट' नहीं हो सकता।

जिज्ञासाः इस पूरे प्रक्रिया में श्रवण, मनन, साक्षात्कार की प्रक्रिया में समझाने वाला व्यक्ति (गुरु) की क्या भूमिका होती है।

उत्तर: समझाने वाला व्यक्ति जागृत रहता है, जागृति के अर्थ में प्रबोधन करता है।

अनुभव के बाद ये पूरा जीवन तदाकार हो जाता है, अनुभव के अनुरूप मन से लेकर बुद्धि तक, अनुभव के अनुरूप हो जाते हैं, जैसा आग में लोहा डालने से आग के तद्रुप हो जाता है की नहीं।

जिज्ञासाः अध्ययन करने वाला व्यक्ति (शिष्य), क्या अध्ययन कराने वाले (गुरु) के साथ तदाकार होता है?

उत्तर: तदाकार होने से यही होता है, उनकी बात सुनना होता है, इतना ही होता है। अध्ययन कराने वाले के साथ यदि तदाकार होता है, उस आधार पर यदि कोई करता है, सुनने का अधिकार बढ़िया बनता है, श्रवण अच्छा होता है।

जिज्ञासाः जी| मुझमें अगर 'आभास' है तो मैं किसी को 'भास' करा सकता हूँ, मुझमें 'प्रतीति' है तो दुसरे को 'आभास' करा सकता हूँ, 'अनुभव' है तो 'बोध' करा सकता हूँ।

क्या ऐसा है कि भास और आभास जो है, ये मेधस के साथ ही होता है।

उत्तर: भास आभास जो होता है, ज्ञानचक्षु से संबंधित है। भास-आभास तक मेधस का involvement (भागीदारी) रहता है।

जिज्ञासाः अभी जैसे हम सोचते हैं, जैसे मैं अभी जो भी सोच रहा हूँ चित्रण करके पूछ रहा हूँ आपसे, ये सारा मेधस के साथ ही चित्रित हो रहा है, जीवन और मेधस का संयोग में चित्रित हो रहा है।

उत्तर: इसमें दो भाग हैं, ज्ञान चक्षु, चर्म चक्षु। चर्म चक्षु से हम रूप और गुण को पहचान सकते हैं। गुण में भी कुछ भाग की। रूप में भी कुछ भाग की। ज्ञान चक्षु से पूरा भाग को ग्रहण करते हैं। उसके आधार पर स्वभाव और धर्म को ग्रहण करते हैं।

जिज्ञासाः साक्षात्कार, प्रतीति, बोध, अनुभव में तो कोई 'शब्द' नहीं है। शब्द आभास तक ही रह गया। तो साक्षात्कार, बोध होते समय मन, वृत्ति और चित्त - बुद्धि के लिये समर्पित रहते हैं?

उत्तर: बुद्धि में जो होता है उसके साथ सहमत रहता है, मन, वृत्ति और चित्त का चित्रण भाग। तब जो है ना, ज्ञान चक्षु का शुरूआत होता है। 'ज्ञान चक्षु' शुरू होने के पश्चात् अस्तित्व में शब्द का अर्थ का वस्तु दिखना शुरू करता है फलस्वरूप उसमें तद्रुप होना होता है।

जिज्ञासा: उस समय ये जब हो रहा है बुद्धि को मेधस का प्रयोग करना नहीं पड़ रहा है?

उत्तर: नहीं है। भास आभास तक brain (मेधस) का काम है।

जिज्ञासा: इसीलिए स्वभाव धर्म जो है, साक्षात्कार बोध में ही आता है उसके पहले आता नहीं। क्योंकि उसके पहले मेधस का involvement (भागीदारी) है, और मेधस है तो रूप, गुण का पुट है ही। भौतिक-रासायनिक क्रियाकलाप है ही...

उत्तर: साक्षात्कार में न्याय और धर्म है ही, ये स्वीकार होता है। स्वीकार होने का फलस्वरूप ही साक्षात्कार होता है। साक्षात्कार होने के फलस्वरूप बोध होता है।

जिज्ञासा: ये पता चलता है कि भास और आभास में रूप, गुण का आयाम रहेगा ही क्योंकि उसमें मेधस का भी भागीदारी , involvement है। अभी जो हम 'देखते' हैं, चित्त से चित्रण से ही देखते हैं ना!

उत्तर: चित्रण में भौतिक-रासायनिक वस्तु ही है और कुछ नहीं है। शरीर मूलक जितनी भी बातें सोचते हैं, रासायनिक-भौतिक वस्तु ही है। रासायनिक-भौतिक वस्तु से ही शरीर बना रहता है किन्तु 'देखने' वाली जो बात है वह है 'ज्ञानचक्षु'।

जिज्ञासा: जीवन में 'दृष्टा' कौन है?

उत्तर: उसका क्रम है मन का दृष्टा वृत्ति, वृत्ति का दृष्टा चित्त, चित्त का दृष्टा बुद्धि, बुद्धि का दृष्टा आत्मा, शरीर का दृष्टा मन है।

शरीर का मूल्यांकन मन करता है, मन का मूल्यांकन वृत्ति, वृत्ति का मूल्यांकन चित्त, चित्त का मूल्यांकन बुद्धि, बुद्धि का मूल्यांकन आत्मा करता है।

जिज्ञासा: आप अमरकंटक में साधना के लिए आने से पहले ''मैं'' संज्ञा जो था आपमें, ये क्या था?

उत्तर: ''मैं'' जो कहता रहा वह शरीर ही था।

जिज्ञासाः और साधना काल में?

उत्तर: साधना काल में भी ऐसा ही था, समाधि तक, समाधि के बाद छुट गया। उसी को कहा, समाधि के बाद भूत और भविष्य की पीड़ा और वर्तमान से विरोध नहीं।

जिज्ञासाः जैसा आपने कहा कि समाधि में आपके आशा, विचार, इच्छा चुप रहे, उसको देखने वाला कौन था? बुद्धि था?

उत्तर: वह संयम के बाद पता चला। समाधि में आशा, विचार, इच्छा चुप रहा। इसको हम स्वीकारा था। संयम के बाद पता चला कि आत्मा समाधि का दृष्टा है।

जिज्ञासाः जैसे मैं अभी आप से कोई प्रश्न पूछता हूँ, तो ये आपके चित्त तक पहुंचता है, आप जो उत्तर देते हैं ये चिन्तन सहित चित्रण पूर्वक मुझे देते हैं।

उत्तर: अनुभव मूलक चिन्तन से, जुड़ा हुआ, पूरा अनुभव ही रहता है। संयम की महिमा यही है।

जिज्ञासा: तो आप "हैं" और आप 'में' ध्वनि है, ऐसा है अभी! अभी जो ये बात हुई, श्रवण, मनन, निदिध्यासन (साक्षात्कार) की प्रक्रिया, बच्चों के साथ भी यही प्रक्रिया रहेगी ?

उत्तर: प्रक्रिया वही रहेगी, सभी का रहेगा। बच्चों में बाल्य भाषा, शिशु में शिशु भाषा, युवा में युवा भाषा, प्रौढ़ों में प्रौढ़ भाषा, वृद्ध में वृद्ध भाषा, परिपक्व भाषा, यही कहा जा सकता है भाषा के रूप में।

जिज्ञासाः बच्चों में ये सहुलियत है कि उनमें कोई पूर्व मान्यताएं नहीं है, इसलिए जल्दी पहुंचता है।

उत्तर: बच्चों के साथ ये रहेगा। उनके जिज्ञासा के अनुसार उत्तर होगा। उनके भाषा में उनको समझाना , उनकी संतुष्टि करना। अभी अपने विद्यालय में यही देखने में आ रहा है।

जिज्ञासाः जो स्वर है, ध्वनि है, इसका चित्रण हो रहा है कि साक्षात्कार हो रहा है। जैसा मैं किसी एक स्वर में बोलता हूँ, भैया दूसरे स्वर में बोलते हैं, ये स्वर का जो है, ये चित्रण होता है कि साक्षात्कार होता है, ध्वनि का?

उत्तर: स्वर का श्रवण होता है, भाषा का श्रवण पूर्वक अर्थ। अर्थ नहीं है तो भाषा भर रह गया| अर्थ पूर्वक स्वीकृति, भाषा के अर्थ में जा करके अस्तित्व में वस्तु को पहचानते हैं, तो बोध हो गया।

जिज्ञासा: प्रतीति क्या है ?

उत्तर: तदाकार होना प्रतीति है | शब्द के अर्थ के रूप में वस्तु को अस्तित्व में पहचानना, उसमे तदाकार होना | इसी का नाम प्रतीति है |

हम भास आभास में अभी तक हैं | प्रतीति तक पहंचना है | आभास विधि से सुनते हैं, प्रतीति को स्वीकारते हैं | किस विधि से ? तदाकार विधि से | क्या तदाकार ? शब्द का अर्थ होता है, अर्थ के रुप में अस्तित्व में वस्तु होता है, वस्तु के साथ तदाकार होने से हमको प्रतीति होता है, ऐसा बना हुआ है |

जिज्ञासा: माने क्रम से जो साक्षात्कार होता है, उसमे बुद्धि की सहमति भी रहता है, यही प्रतीति है | यह यदि ठीक से नहीं हो पाता, तो प्रतीति नहीं होता |

उत्तर: नहीं होता | बुद्धि स्वीकारता ही नहीं, बुद्धि बेईमान नहीं है | आशा विचार इच्छा तक ही बेईमानी है | बेईमानी का पुलंदा विचार तक ही है | शरीर को जीवन मानते हुए विचार करने तक है | जीवन का समझ आने के बाद बेईमानी खत्म होना शुरू होता है | मनुष्य जात के पास सब झूट वाइप ऑफ (मिट) गया | यह छोटा सा काम हमने किया है |

अभी आपको यही तय करना है – शरीर को केंद्र में रखकर हम अध्ययन करेंगे, या जीवन को केंद्र में ? यह निर्णय होने से आगे का रस्ता अपने आप बन जाता है |

जिज्ञासा: हमारे में पात्रता कैसे विकसित हो, की हम ‘ज्ञानगोचर विधि’ से देख पाएं ?

उत्तर: समझने की इच्छा, प्रमाणित करने की इच्छा बलवती होना| उसके लिए तो पहले से कहा है | सच्चाई का, अर्थात सत्य को, धर्म को, न्याय को इन तीनो भाग को प्रमाणित करने की इच्छा बलवती होना |

अध्ययन से पहले अनुमान होता है | अनुमान के बाद मनुष्य के साथ तदाकार होने की क्रिया संपादित होता है, फलस्वरूप साझदारी पूरा होता है

जिज्ञासा: ‘साक्षात्कार’ में ‘साक्षात’ शब्द का क्या मतलब है ?

उत्तर: वस्तु होने की, रहने की स्वीकृति | शब्द के अर्थ में जो वस्तु है, वो वस्तु का होना और रहना, इन दोनों का |

जिज्ञासा: क्या इसका ‘साक्षी’ शब्द से कोई लेन-देन है ?

उत्तर: खत्म हो गए शब्द | शब्द ख़त्म होकर शब्द के अर्थ में गए है| साक्षात्कार में

जिज्ञासा: हम वस्तु का 'साक्षी' हो गए ?

उत्तर: हम वस्तु का दृष्टा बने

जिज्ञासा: दृष्टा बन गए, मतलब 'सीधे-सीधे' उसको देख रहें है |इन्द्रिय गोचर विधि से नहीं

उत्तर: इन्द्रियगोचर विधि से होता ही नहीं, सच्चाई का दृष्टा बनना | वो बनता ही नहीं |ज्ञान गोचर विधि से ही बनता है, उतना ही बात है |

जिज्ञासा: कल्पनाशीलता तदाकार होने पर जो परिपुष्ट अनुमान होता है – यह प्रतीति है|फलस्वरूप 'अवधारणा' होती है जिसे आपने ' परिपक्व अनुमान' भी कहा है | ये बुद्धि में 'अवधारणा' होती है|

उत्तर: ये बुध्दि में 'अवधारणा' होती है| ठीक है|

जिज्ञासा: साथ में 2003 के मानव व्यवहार दर्शन में एक जगह लिखा है ,'अवधारणा में तब तक परिवर्तन होता रहेगा जब तक वो धारणा के अनुरूप न हो जाये', इसे कैसे समझें?

उत्तर: धारणा के पहले , अध्ययन जो है ना, चित्त में होता है, चित्त में जब तक रहता है तब तक बदलता रहता है|

जिज्ञासा: तो यह अवधारणा से पहले वाली स्थिति है ?

उत्तर: पहले वाली स्थिति, बदलना सब अवधारणा के पहले की|वो सब चित्त में हो जाता है| उसको क्या कहा ? 'अध्ययन' | अध्ययन में क्या है, उसको समझना पड़ेगा |

हमारे पास एक पूंजी है 'कल्पनाशीलता'| कल्पनाशीलता के आधार पर हम सुनते है , अनुमान करते है| अनुमान में पहले भास आभास नाम की चीज़ होता है| प्रतीति होने के रूप में चित्त में आता है, 'प्रतीति' का पुष्टी कब होता है? ये सच्चाई है उसको बुध्दि स्वीकार करे| न्याय- अन्याय, धर्म-अधर्म, सत्य- असत्य में गुज़र करके आया है - ये सत्य को स्वीकारना है बुध्दि को| बुध्दि के स्वीकारने के पहले उसमें बदलाव होते रहता है – चित्त में, चित्रण में | ठीक है ? बुद्धि में जो अवधारणा है, उसमें 'परिवर्तन' शब्द ठीक नहीं है, उसका पूरा होने को कहा है, शेष भाग पूरा होने से बोध होना होता है |

जिज्ञासा: तो बुध्दि उसके पहले इंतज़ार करती रहती है कि 'ऐसी स्थिति' कब बने|

उत्तर: ऐसा स्थिति बने, ऐसा पवित्र विधि बने, तब तक वो इंतज़ार करती रहती है| उसके बाद बुध्दि में बोध हो जाता है तो उसका नाम है 'अवधारणा'| अनुभव का पूर्व भूमि है अवधारणा| पहले चित्त में साक्षात्कार, उसके बाद बुद्धि में अवधारणा|

जिज्ञासा: अनुभव होने के बाद प्रमाण जो बुध्दि में जाता है तब 'धारणा' हो गया ?

उत्तर: 'धारणा'हो गया, यही सुख का स्त्रोत है| धारणा क्या चीज़ है| यही सुख का स्त्रोत है ,यही धारणा है |

जिज्ञासा: तो अनुभव पूर्वक जब बुद्धि में प्रमाण बोध हुआ तब मुझमे ये हुआ 'यही' सुख का स्त्रोत है, यही 'धारणा' है|

उत्तर: यही 'धारणा' है| मानव 'सुखधर्मी ' है| सुख का ही धारण होता है और किसी का धारण होता नहीं| सुख कैसा? उसका जब जाता है, चित्त में आता है 'समाधान' | समाधान के आधार पर समाधान का विश्लेषण होता है, तो उसके आधार पर सफल हो जाता है| इतनी ही बात है| ये ठीक हो गया, धारणा समझ में आ गया| उसके बाद प्रमाण , धारणा के बाद 'प्रमाण'| धारणा क्या हुआ? सुख के लिए 'यही रास्ता है' - ये सुनिश्चित होना| ये बुध्दि में ही होता है, बुध्दि में ही धारणा होती है | इसको जो है ना, अभी क्या कर दिया, 'धारणा' शब्द को पहले से भी उपयोग किया, इसके आधार पर हम हमारा अनुभव के आधार पर हम परिभाषा दिया| पहले जो परिभाषा दिया कैसे कहते हो | धारणा का व्याख्या दिया है 'पहनने वाला' 'उतारने वाला'| कहाँ से कहाँ पहुंचे? इसलिए हम declare (घोषणा) किये हैं, भाषा परंपरा की है, परिभाषा हमारा है | समाधान, समृधि, अभय सह-अस्तित्व को प्रमाणित करने के अर्थ में परिभाषा|

जिज्ञासा: एक जिज्ञासा है, आपने कहा 'धारणा बुद्धि में होता है', साथ ही हमने धर्म की परिभाषा भी आपसे सुनी है, की 'धारणा ही धर्म है' इसके साथ आपने ये भी लिखा है, मानव व्यवहार दर्शन में - 'धर्म की मात्र अनुभूति होती है'|

उत्तर: अध्ययन विधि से अनुभव का ही 'अवधारणा' होता है बता तो दिया अभी| अनुभव का प्रमाण होता है, प्रमाण बोध में धारणा होता है| धर्म अनुभव होकर बुद्धि में आता है |

अपन जो है ना, एक टुकड़ा लेकर के कुछ नहीं कर पायेंगे, उसको अब समेटो, माने अध्ययन का शुरुआत पठन से, पठन से होकर अध्ययन में पहुँचते है| शब्द के अर्थ को हमने अध्ययन कहा है |

जिज्ञासा: अवधारणा की जो बात हो रही थी तो उसमें, ये भी बात आई है की क्रम से जो साक्षात्कार होता है वो बुद्धि में deposit (जमा) होते रहता है|

उत्तर: ठीक है ना , वो refine (शुद्ध, सुसंस्कृत) हो करके बुद्धि में deposit (जमा) होता है, उस बुद्धि में कितना aptitude (योग्यता, पात्रता) होना चाहिए , सभी पूरा होते तक नहीं होता है अनुभव | वो package (पोटली) बना करके बुद्धि ही आत्मा को प्रशस्त करता है|

जिज्ञासा: तो जब तक ये 'package' बन रहा है उसी को अवधारणा कहेंगे ?

उत्तर: अवधारणा वही, जो package बन रहा है उसी को अवधारणा कहेंगे|

जिज्ञासा: 'अनुभव गामी'विधि से जो बोध होता है, अथवा अवधारणा है उसमे बुद्धि में संपृक्तता का बिंदु आता है ?

उत्तर: 'स्वीकृति हो चुकी है' - ऐसा आता है |

जिज्ञासा: अनुभव में ही 'संपृक्तता' का बिंदु समझ में आता है ?

उत्तर: अनुभव में ही आता है | बुध्दि में जो बोध होता है, उसका अनुभव होता ही है, फिर कहना अनुभव ही प्रमाण है | अनुभव प्रमाण क्या है, सर्व देश सर्व काल के लिए हो जाता है | अनुभव होने से क्या हो गया? (हम) सर्वदेश, सर्वकाल के लिए उपलब्धि हो गये| अभी अपन किस देश में, किस काल में रुकते है? रुकने की जगह है इसमें?

Goal (लक्ष्य) वही है| 'अवधारणा' और 'धारणा' | अवधारणा और अनुभव मूलक धारणा के बीच में हमारा पुरुषार्थ कुछ नहीं है, अपने आप से होता है| अनुभव मूलक धारणा के बाद पुरुषार्थ हमको करना है| क्या करना है? प्रमाणित करना है – इसका अभ्यास होता है | चिंतन का, व्यवहार का, कर्म का अभ्यास | ये अनुभव के बाद आता है | पहले कैसे है? हमको करना है | सत्य बोध में तीन factor (घटक) दिए है| स्थिति सत्य, वस्तु स्थिति सत्य, वस्तुगत सत्य , इसका बोध होना| बोध काहे के लिए होना ? सुख के लिए, सुखी होने के लिए बोध होना और किसी कारण के लिए नहीं |

संपूर्ण समाधान के अवधारणा हो जाने के बाद अनुभव होना स्वाभाविक है| इसीलिए अनुभव के लिए कोई उपदेश नहीं है| अनुभव के लिए कोई पुरुषार्थ नहीं है, अनुभव स्वाभविक जीवन सहज प्रक्रिया है , बोध होने के बाद अनुभव होता ही है| बोध होना पुरुषार्थ; पुरुषार्थ क्या है - अध्ययन है; अध्ययन में क्या है -तदाकार है, तदाकार के लिए क्या चीज़ है वस्तु? अस्तित्व में सहअस्तित्व रूप में और मानव के पास कल्पनाशीलता है | कल्पनाशीलता के साथ ही तदाकार होता है| सत्य के साथ तदाकार होना | तदाकार हो गया, तो हो गया | अवधारणा हो गया | यदि तदाकार नहीं हो पाया, अध्ययन नहीं हुआ, अध्ययन करो – सीताराम !!

'अध्ययन विधि' में 'श्रवण मनन निदिध्यासन' और

'अनुभव विधि' से 'धारणा-ध्यान-समाधी':

जिज्ञासाः आपने परिभाषा दिया है - ''निश्चित अवधारणा की स्थापना प्रक्रिया ही निदिध्यास है।" विगत में जो 'निदिध्यास' कहा है, और आपने जो 'निदिध्यास' कहा इन दोनों में भिन्नता क्या है?

उत्तर: निदिध्यासन का ये कहा था पहले, ज्ञान का निदिध्यासन, ज्ञान छुपा हुआ रहता है, वो प्रगट हो जाना। 'निधि' का मतलब है 'छुपा रहना'। निधि का मतलब अभी भी प्रचलन में छुपा हुआ धन को निधि मानते हैं| जैसा खनिज खोदकर निकालते हैं, वह सब छुपा हुआ धन।

जिज्ञासा: अभ्यास दर्शन के योगाभ्यास अध्याय में का एक पैराग्राफ (अनुछेद) है- उसमें 'धारणा-ध्यान-समाधी' को क्रमश: 'श्रवण, मनन और निदिध्यासन' से जोड़कर परिभाषा दिया है। उसमें 'धारणा' के लिए परिभाषा है- "वांछित वस्तु, देश, तत्व में चित्त, वृत्ति संयत होना।" यही श्रवण है, ऐसा आपने लिखा है। इस विधि से अपने श्रवण और मनन को 'धारणा' और 'ध्यान' से जोड़कर लिखा है | अब तक जो चर्चा हुई थी, उसमें आपने कहा की साक्षात्कार पूर्वक ही संयत होना होता है, और मनन और श्रवण उसके <u>पूर्व</u> की स्थितियां हैं...

उत्तर: सच्चाई होने पर संयत होता है। सच्चाई नहीं होगा तो संयत नहीं होगा। रुचि मूलक विधि से कौन सा संयत होता है? किसका होता है? ये सब एक दुसरे से जुड़ा हुआ है। अभी आपने जो पढ़ा, वो निदिध्यासन के <u>बाद</u>, संयंत होना होता है | 'योगाभ्यास' विधि से धारणा-ध्यान-समाधी को 'अनुभव विधि' के लिए लिखा है | उसमें विगत से जो श्रवण मनन निदिध्यासन की जो आशा रही, अथवा इशारा रही, उसके सार्थकता के लिए जोड़ा है | अभी आप हमारे बीच 'पठन विधि', मतलब 'अध्ययन विधि' से श्रवण मनन के लिए बात कर रहे हैं | यह यदि होता है, तो प्रतीति हुआ | प्रतीत होने से संयंत होगा, तब वो ध्यान के लिए जायेगा | अन्यथा नहीं होगा | दोनों स्थितियों में दूरी कितना है, सोच लो!

जिज्ञासा: अच्छा! इसका मतलब हम लोग पहले पठन पूर्वक, अथवा 'अध्ययन विधि' से श्रवण-मनन पूर्वक साक्षात्कार अर्थात 'निदिध्यास' तक पहुचेंगे, उसके <u>बाद</u> , 'धारणा, ध्यान' वाली क्रम शुरू होगा, अनुभव के लिए ? पहला क्रम 'अध्ययन के लिए अभ्यास' हो गया, उसके बाद, 'योगाभ्यास' प्रारंभ होगा?

उत्तर: श्रवण विधि से अवधारणा | अवधारणा विधि से अनुभव | यही है |

जिज्ञासा: अब हमारे लिए - श्रवण में सुनने के साथ जब शोध होता है तब उसमें चित्त, वृत्ति स्थापित अथवा स्थिर होता है?

उत्तर: अवधारणा के पहले स्थिरता नही होता, चित्त वृत्ति | 'शोध' होने का मतलब है- तुलन हो जाना। तुलन का स्थिरता होने से निदिध्यासन हो जाना, निश्चय हो जाना; प्रिय, हित, लाभ के स्थान पर न्याय, धर्म, सत्य स्वीकार होता है। यह होने से निदिध्यासन हो जाता है । श्रवण होना, शोध होना, न्याय धर्म सत्य का निर्णय होना, प्रतीत होना, संयंत होना | ऐसा बना है पैकेट | उसके बाद तुमने जो वाक्य पूछा, (धारणा-ध्यान...) वो जुड़ता है |

जिज्ञासा: दो कड़ी लगता है: पठन पूर्वक श्रवण-मनन-साक्षात्कार अथवा निदिध्यासन; इससे अवधारणा; फिर धारणा-ध्यान-अनुभव...को आप योगाभ्यास कह रहे हैं...

उत्तर: एक बार तो हो चुका है |

जिज्ञासाः और इसी 'योगाभ्यास' अध्याय में; में आपने जो ''धारणा'' का जो परिभाषा दिया है..

उत्तर: धारणा का दिया है, जिसमें जिसका विलगीकरण ना हो। वह उसका धारणा। चारों अवस्था में धारणा को बता दिया|

जिज्ञासा: बाबाजी, अध्ययन विधि में जो 'धारणा' बनना होंता है, चित्त वृत्ति संयंत होने से, जो आप कह रहे थे साक्षात्कार से होता है ...

उत्तर: हम जो बताया वस्तु,और विगत में जो बताया वो भेद हो गया ना...विगत में 'कोई देश-काल' में स्थापित होने को कहा है | 'न्याय-धर्म-सत्य' में होना है, हम कह रहे हैं ...कितना दूरी हो गया ?

जिज्ञासा: उसी 'योगाभ्यास'अध्याय में 'ध्यान' का परिभाषा आया है- 'धारणा पर पूर्ण अधिकार के अनंतर उसके सारभूत भाग, अथवा वांछित भाग में चित्त वृत्ति का केंद्रीभूत होना पाया गया है, जो निष्ठा एवं ध्यान का द्योतक है |" क्या यही तदाकार होने की स्थिति है?

उत्तर: तदाकार होना ही ध्यान है, <u>यही</u> है | अभी अभी बताया बावा, वहां जो लिखा है, वो अनुभव विधि को लिखा है, धारणा, ध्यान... | अभी अपन अध्ययन-विधि से सोच रहे हैं, प्रतीति के लिए | प्रतीति होने से अपन ध्यान वाले बात में लग गए...

जिज्ञासा: जी |अभी मेरे सामने साक्षात्कार के लिए ही श्रवण और मनन है...

उत्तर: वही | उसमें 'धारणा' और 'ध्यान' को लाने का कोई फायदा नहीं | वो आगे है | अभी आपके लिए मनन में श्रवण के स्थिरता के लिए सोचते हैं | अभी आपके लिए मनन जो है, तदाकार होने के पहिले कि स्थिति है; ये साढे चार, पांच (क्रिया) में होता है |

जिज्ञासा: जी | इन दो कड़ियों को मुझे अपने लिए अलग करके देखना होगा, ' अध्ययन-विधि' पूर्वक 'श्रवण-मनन-निदिध्यासन' से एक कड़ी, एवं 'अनुभव विधि' पूर्वक और 'धारणा अथवा अवधारणा-ध्यान-अनुभव' दूसरा कड़ी | दुसरे कड़ी में जो परिभाषा दिया है, धारणा और ध्यान के लिए, उससे हमें एक इशारा मिलता है, अपने 'श्रवण' और 'मनन' के लिए में | जैसे हमारे लिए, अध्ययन विधि में, पहले श्रवण पूर्वक सूचनाओं का स्थिरता आएगा, फिर उसके अर्थों में, 'श्रवण' के अर्थ में जाने का प्रयास करते हैं, वही इस भूमि में 'केंद्रीकृत करने' का मतलब अर्थात 'मनन' हुआ?

उत्तर: हाँ। 'केंद्रीकृत करने' का मतलब श्रवण के अर्थों में सोच रहे हैं, साक्षात्कार के लिए | वो होने से निदिश्यसन होता है | वही स्थिर होने से 'धारणा' कहा, अनुभव के लिए अवधारणा होता है | उस धारणा में चित्त वृत्तियों केंद्रीकृत हो जाना निष्ठा एवं ध्यान है | यही लिखा है | आपके लिए आशित वस्तु ही धारणा है, वही न्याय-धर्म-सत्य है | धारणा में सुख होना चाहिए | धारणा में मन-वृत्ति-चित्त एक ही जगह में आ जाते हैं, उसी का नाम है "धारणा" | उसमें सुख होना बहुत आवश्यक है | धारणा होने से हम ध्यान में चले गए | ध्यान होने से अनुभव भावी हो जाता है | अनुभव होने से धर्म मिलेगा, धारणा बराबर धर्म, यह लिख चुके हैं |

जिज्ञासा: और आध्यात्मवादी जिसे 'श्रवण मनन निदिध्यासन' कहते रहे, इस अर्थ में परिभाषित करने से सार्थक हो जाता है | इसीलिए इसे आपने 'धारणा-ध्यान-समाधी' के साथ जोड़कर दिया है, (जबकि) हमारे लिए यह अध्ययन-विधि में, धारणा होने के लिए लागु होता है ?

उत्तर: श्रवण से धारणा – वही कह रहे हैं

जिज्ञासा: जी | यह सब; धारणा-ध्यान- समाधि/अनुभव तो आगे की स्थिति लगती है अभी, मैं जहाँ खड़ा हूँ,वहां से | मेरे लिए पठन विधि से श्रवण एवं मनन का क्रम है अभी | आपने कहा की संयंत होना साक्षात्कार पूर्वक ही होता है | 'संयंत' होने का क्या मतलब?

उत्तर: संयंत होना मतलब अर्थ समझ में आ गया और स्थिर होने के लिए हम सोच रहे हैं।

जिज्ञासा: इसका मतलब उसके पूर्व भास, आभास हो गया है और अब स्थिरता के लिए सोच रहे है?

उत्तर: हाँ| अभी आपके लिए स्थिरता का मतलब प्रतीति के लिए सोच रहे है। पहले 4.5 क्रिया में ही तुलन का स्थिरता आता है – श्रवण के आधार पर, उसके बाद प्रतीति के लिए जाता है|

जिज्ञासा: प्रतीति के लिए जो प्रयास है उसमें भी '<u>केंद्रीकृत करने</u>' की बात है? यही मनन कहलायेगा?

उत्तर: हाँ| ये स्थिर होने के बाद प्रतीति होता है। प्रतीति होने से हमको बोध होता है। बोध स्थिर होने के लिए अनुभव होता है। भास-आभास की स्थिरता के लिए प्रतीति, प्रतीति की स्थिरता के लिए बोध| निरंतरता के लिए अनुभव।

जिज्ञासा: योगाभ्यास के उस अध्याय में आपने लिखा है 'मानवीयतापूर्ण जीवन के <u>अनंतर</u> देश एवं तत्व में चित्त वृत्ति संयंत होना पाया गया है, यही धारणा है'...

उत्तर: जीव चेतना को बनाये रखते हुए संयंत होना चाहते हो ? यह होगा ? अभी सारा गलती अपराध में ही तो लगा है आदमी| आपको बताया, न्याय धर्म सत्य तुलन हुए बिना साक्षात्कार ही होता नहीं|

जिज्ञासा: जी| आपने लिखा भी है, कि मानवीयतापूर्ण जीवन के बाद ही संयंत होता है | इसे आपने 'धारणा' कहा...ठीक ही लगता है, अध्ययन विधि से 'धारणा' की वस्तु तो मानवीयता ही होना होगा| फिर लिखा है, 'धारणा पर <u>पूर्णाधिकार</u> के अन्तर उसके वांछित भाग अथवा सारभूत भाग में केंद्रीभूत होना ध्यान है |

उत्तर: अब ठीक हुआ !

जिज्ञासा: इसका मतलब, 'अवधारणा' रूपी 'धारणा' में केंद्रीकृत हो गया तो हम 'ध्यान' में चले गए| सर्व प्रथम, सूचना के स्थिरता के लिए श्रवण, श्रवण के स्थिरता के लिए मनन, मनन के वस्तु के स्थिरता के लिए साक्षात्कार| साक्षात्कार पूर्वक संयंत अथवा स्थिरता होता है| इसपर <u>अधिकार</u> हो गया तो अवधारणा कहा|

उत्तर: इस विधि से स्थिरता की श्रृंखला बनी| स्थिर नहीं हुआ, तो कोई अवधारणा नहीं है|

जिज्ञासा: इसके सम्बन्ध में आपने व्यवहार दर्शन में लिखा है: अपराध के अभाव में आशा का प्रत्यावर्तन, अन्याय के अभाव में विचार का प्रत्यावर्तन, आसक्ति के अभाव में इच्छा का प्रत्यावर्तन| जीने के अर्थ में इसे नियमपूर्ण व्यवहार, न्यायपूर्ण विचार और आसक्ति रहित इच्छा कहा है ...

उत्तर: यही अभी आप लोगों के लिए अभ्यास है| कितने पानी में हम खड़ें हैं, स्वयं जांच लो!

जिज्ञासा: इसका मतलब श्रवण, मनन अथवा शास्त्राभ्यास, व्यवहाराभ्यास, कर्माभ्यास, चिन्तनाभ्यास पूर्वक हम साक्षात्कार करते हैं, संयंत होते हैं, न्याय-धर्म-सत्य में | यह अवधारणा हुआ 'अध्ययन विधि' से | अब 'अनुभव-विधि' या 'योगाभ्यास' विधि में इस 'धारणा' पर पूर्णाधिकार के अनंतर उसके सारभूत भाग में केंद्रीभूत होने से ध्यान या बोध में आ गए | इसके बाद, 'ध्येय के मूल्य मात्र में चित्त वृत्ति एवं संकल्प में निमग्न होना ही सत्तामयता में अनुभूति' - यह लिखा है आपने |

उत्तर: यह अब लोगिकल्ली फिट (तर्क संगत) हो गया | यह सब करना भी या नहीं, सोच लो!

जिज्ञासा: अभ्यास दर्शन में 'ध्यान' के अनन्तर अनुभव की जो बात लिखी गई है उसमें आया है "ध्येय के मूल्य मात्र में अथवा अर्थ मात्र में चित्त, वृत्ति एवं संकल्प का निमग्न होना ही सत्तामयता में अनुभूति है'' | 'ध्येय का मूल्य' मतलब क्या है?

उत्तर: निमग्न होना माने तद्रुप होना। ध्येय का मूल्य है, वस्तु का स्वभाव और धर्म...सत्य ....

जिज्ञासा: 'धर्म और सत्य' को समझने के लिए चित्त, वृत्ति एवं संकल्प का निमग्न होना होगा?

उत्तर: वही, तदाकार, तद्रुप होना।

जिज्ञासा: पुनह, Clarification (स्पष्टीकरण) के लिए, योगाभ्यास अध्याय में जो 'श्रवण-मनन-निदिध्यासन' लिखा है, वह 'धारणा-ध्यान-समाधी' के साथ जोड़ा है | सत्तामयता में अनुभूति को 'सहज समाधी' लिखा है |

उत्तर: हमारे पद्धति से | परंपरा में जो समाधी का वर्णन है, वो चित्त-वृत्ति 'निरोध' होने को कहा है |

जिज्ञासा: 'निदिध्यासन' दो अर्थों में आ रहा है - साक्षात्कार के लिए, और अनुभव के लिए | परिभाषा संहिता में निदिध्यासन के लिए आया है: 'केंद्रीकृत ध्यान,अनुभव में होना' | इसका मतलब पहले यह अध्ययन विधि में उपयोग हुआ है, फिर 'अनुभव विधि' में | आपने कहा था- 'निदिध्यासन ध्यान के अर्थ में है | वस्तु का ज्ञान के अर्थ में है' | इसका मतलब हुआ, यह साक्षात्कार से शुरुआत होता है, अनुभव में पूरा होता है | इसीलिए दो अर्थों में लग रहा है |

उत्तर: ठीक है | अभी हम समझ नहीं पा रहे हैं, इसीलिए दो अर्थ लग रहा है | एक ही अर्थों में है |

जिज्ञासा: अभी मैं उसे चित्रण में भाषा प्रधान विधि से एप्रोच (प्रवेश) रहा हूँ, इसीलिए अलग लग रहा है ?

उत्तर: वही बात है | यह सब के लिए महीन बुद्धि का उपयोग करना पड़ेगा |

जिज्ञासा: क्या प्रतीति और अध्ययन-बोध एक ही चीज को कह रहे हैं ?

उत्तर: अध्ययन-बोध और प्रतीति दोनों एक ही चीज है। बोध भी एक ही है। ये तीनों एक ही अर्थ को प्रतिपादित करता है। एक ही वस्तु के लिए अनेक शब्द प्रयोग होता है। एक शब्द से अनेक वस्तु इंगित नहीं होता।

जिज्ञासा: कर्म दर्शन में आपने लिखा है - 'अवधारणा ही सदविवेक है | सदविवेक सत्यता की विवेचना है, जो स्पष्ट है | अनुभव की अवधारणा सत्य बोध के रूप में, सम्यक बोध ही सत्य संकल्प है | सत्य में ही सम्यक बोध होता है | यही परावर्तित होकर शुभ कर्म उपासना तथा आचरण में फलित रूप में प्रत्यक्ष है' | इसके पूर्व में जो आपसे अवधारणा की बात हुई थी, वो इससे पहले की स्थिति लगती है ... और यहाँ जो लिखा है, वो बोध अथवा पूर्ण बोध के लिखा हुआ लगता है…

उत्तर: अवधारणा, बुद्धि से सम्बंधित है | अवधारणा और बोध एक ही अर्थ में है | अनुभव का अवधारणा ही सत्य बोध है | यही सम्यक बोध है | अध्ययन विधि में हम अवधारणा क्षेत्र को भरते हैं | वो स्थिर होने से धारणा कहा, साधना के भाषा में | उसको ध्यान में परिवर्तित करने से बोध में चले गए | बोध को प्रमाणित करने का संकल्प होता है, तो निम्गन होता ही है, अनुभव होता ही है | साक्षात्कार होना निदिध्यासन है | अनुभव का शुरुआत है, साक्षात्कार | साक्षात्कार के साथ साथ बुद्धि में स्वीकृतियां होती हैं, यह अवधारणा के अर्थ में है | संकल्प में परिवर्तित होने से अवधारणा है | नहीं तो नहीं है | यहीं से निष्ठा है | इसके पहले न्याय-धर्म-सत्य के प्रति प्रतिबद्धता हो जाता है -अध्ययन से | वो साक्षात्कार होने से होता है | वो भी अवधारणा के ही अर्थ में है | बुद्धि में ही संस्कार रूप में स्वीकार किया रहता है | उसी को प्रतीति कहा | वो विश्राम योग्य धारणा होता है, बोध विधि से | बोध होने से अनुभव मूलक विधि से फिर प्रमाणित होता है |

जिज्ञासा: 'न्याय-धर्म-सत्य' का तात्पर्य मानवीयता से है?

उत्तर: हाँ | प्रिय हित लाभ को अमानवीय कहा है

जिज्ञासा: आपसे यह भी सुना है की 'अवधारणा एक ही साथ होता है | बूँद बूँद की बात साक्षात्कार तक है'

उत्तर: वही बात है | बूँद बूँद से घड़ा भरता है, हम अवधारणा के लिए प्रयत्नशील हैं |

जिज्ञासा: इसीलिए आपने लिखा है 'निश्चित अवधारणा की स्थापन प्रक्रिया ही निदिध्यास है' |

उत्तर: उसी का मतलब है, अध्ययन |

जिज्ञासा: आपने यह भी कहा है कि अनुभव मूलक विधि से धारणा – बुद्धि में होता है, इसका निरंतरता रहता है | धारणा ही धर्म| धर्म ही समाधान | सुखी होने के अर्थ में धारणा | समाधान ही धारणा - इसीलिए एक ही शब्द उपयोग हुआ है ?

उत्तर: अब ठीक हो गया तुम्हारा |

जिज्ञासा: जी | अब हमारे लिए सर्वप्रथम, श्रवण से 'धारणा होने' का मतलब, चित्त वृत्तियों का स्थापित करने के लिए प्रयत्न करना, मतलब हमारा जो इच्छा विचार आशा है ..

उत्तर: उसमें तुलन क्रिया कर पाना, परिभाषा के अनुसार यदि तुलन होता है, अस्तित्व में वस्तु का ज्ञान हो गया, उसी को प्रतीति कहा है।

जिज्ञासा:- आपने कहा था कि संयत होने का मतलब इच्छा, विचार, आशा वस्तु में 'स्थापित' हो जाना

उत्तर: वही है।

जिज्ञासा: वो साक्षात्कार विधि से ही होगा ? साक्षात्कार पूर्वक जब जीने में अभ्यास करते हैं, तब होगा ?

उत्तर: बस, इतना ही |

जिज्ञासा: उसके बाद लिखा है- "धारणा पर पूर्ण अधिकार के अनंतर उसके सारभूत भाग में अथवा वांछित भाग में चित्त, वृत्ति का केंन्द्रीभूत होना पाया जाता है। जो निष्ठा एवं ध्यान का द्योतक है " - तो जो इच्छा, विचार, आशा स्थापित हो गये, उसके सारभूत भाग से क्या आशय है?

उत्तर: बोध होना |

जिज्ञासा: उपरोक्त 'ध्यान' को ही आपने 'मनन' से भी जोड़ा है

उत्तर: वो अनुभव विधि से, साधना विधि से लिखा है | अभी आपके लिए मनन <u>अध्ययन</u> के अर्थ में है | आपके लिए चित्त वृत्ति केंद्रीकृत होने का मतलब अस्तित्व में वस्तु के रुप में स्वीकार होना | शब्द को अर्थ में बदलने से अर्थ अस्तित्व में वस्तु के रुप में होना स्वीकार होता है। उसका नाम है ध्यान। इसके पहले (पत्तंजल योग सूत्र में) क्या बताया - "देश बंध चित्तसय धारणा", बताया। कोई देश हो, कोई वस्तु हो, एक नाम हो उसमें चित्त वृत्ति संयत होना लिखा है। 'तत्र

प्रत्येकतांत ध्यानम' - उसके किसी बिंदु में टिक जायें उसको ध्यान कहा है, पत्तंजल ने | हमने उसे नए ढंग से उपयोग किया है, परिभाषित किया है | विगत के बात को छोड़ दिया हम |

जिज्ञासा: अस्तित्व में वस्तु के रूप में स्वीकार होना ही साक्षात्कार है? मेरे लिए मतलब पहले अध्ययन विधि में सर्व प्रथम श्रवण स्थिर होना या टिकना पड़ेगा, उसके अर्थ में यदि मनन होता है, जैसे आपने कहा है 'तुलन की यदि सार्थकता तैय होती है' तो वस्तु का ज्ञान होता है?

उत्तर: ठीक है |

जिज्ञासा: मतलब, प्रथम चरण में अध्ययन विधि में, एक प्रकार से समझने की वस्तु का हम ग्रहण करते हैं, श्रवण करते हैं, उसपर मनन करते हैं, मनन करते हुये प्राथमिकता बनती है तो उस वस्तु के लिये हमारा प्रयास होता है; अस्तित्व में वस्तु के रुप में साक्षात्कार करते हैं।

उत्तर: अस्तित्व में वस्तु के रुप में ग्रहण नहीं होता है तो ध्यान का शुरुआत होता ही नहीं है। अभी तक ध्यान के बारे में यही है- तद्रुप हो जाना, तदाकार हो जाना। तदाकार हो जाने के बाद स्वयं का अस्तित्व व्यक्त हो गया।

जिज्ञासा: अब के समय शास्त्राध्ययन पूर्वक जो श्रवण होता है, उसमें भाषा, तर्क सहित रहता है, यह भी कई बार 'धारणा' जैसे लगता है |

उत्तर: लगता है, रहता नहीं है | साक्षात्कार के पहले नहीं होता, धारणा | यही भ्रमित होने की जगह है |

जिज्ञासा: लगता है कि जब तक 'प्रक्रिया' को लेकर शंका रहती है तब तक वस्तु के लिये हमारा ध्यान जाता नहीं; वो प्रक्रिया में ही लगा रहता है। प्रक्रिया स्पष्ट होने से 'वस्तु' समझ में आता है।

उत्तर: उसी आधार पर कहना तो ठीक है।

जिज्ञासा: बाबाजी, कल अध्ययन विधि से अवधारणा की बात हुई, जिसे धारणा भी नाम दिया, साधना के भूमि के रूप में | अनुभव के बाद जो अनुभव बोध होता है उसे ही आप धारणा बोल रहे हैं?

उत्तर: हाँ | वो कभी मिटता नहीं | निरंतर हो गया, हमेशा के लिए |

जिज्ञासा: पहले श्रवण, मनन पूर्वक 'धारणा' की चर्चा हुई थी ?

उत्तर: अवधारणा उसका नाम है। अस्तित्व में वस्तु को स्वीकारते से धारणा | सुखी होने के अर्थ में धारणा | सब एक ही क्षेत्र से सम्बंधित है, इसीलिए एक ही नाम (है) |

जिज्ञासा: इसका मतलब 'अनुभव-विधि' में, यह 'धारणा' जो है, 'ध्यान' के लिए, और 'ध्यान', 'समाधी, अर्थात अनुभव' के लिए ? इसी को आप 'अनुभव-विधि' कहे थे?

उत्तर: हाँ |अपने अनुसार। विगत के अनुसार धारणा क्या है- धारणा, ध्यान, समाधि बताया । धारणा को पहले बताया। क्या धारणा? ध्यान करना। ध्यान करने के लिए क्या धारणा? देश और काल कोई रहता है, उसमें चित्त-वृत्ति नियंत्रित होना। स्वरूप के शून्य होने को समाधी बताया (विगत में)|

जिज्ञासा: आपके एक लेख में आया है: 'अध्ययन पूर्वक ही वस्तु स्थिति, वस्तुगत तथा स्थिति सत्य सहज अवधारणा में स्पष्ट होते हैं | अवधारणा का तात्पर्य आवश्यकता सहज स्वीकृति व धारणा से है | धारणा का तात्पर्य जिससे जिसका विलगिकरण न हो, विलागीकरण न होने वाली आवश्यकता व अवधारणा मानव में सुख है |

उत्तर: वही बात है | विगत में जिसको 'धारणा' कहा और हम जो कह रहे हैं, उसमें दूरी स्पष्ट हो गया ना ?

जिज्ञासा: आप ये कह रहे हैं कि मन, वृति, चित्त जो ये समझने की वस्तु है, अर्थात 'न्याय-धर्म-सत्य' में, सहअस्तित्व के अर्थों में स्थापित होना ? मनन पूर्वक 'स्थिरता' के लिए सोच रहे हैं, मानवीयतापूर्ण जीवन को स्वीकारने से, साक्षात्कार होने से, वह 'स्थापित' हो गया, 'धारणा' के रूप में हो गया, अर्थात, अवधारणा हो गया ?

उत्तर: वही है | उसके बाद आता है ध्यान | चारों भाग मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि एक लाईन (रेखा) में आ जाये जिसे अपन संगीत कहते हैं, या उसे समन्वय कहते हैं, अथवा एकरुपता कहते हैं, उसके आ जाने से ध्यान होता है। ध्यान के बाद अनुभूति है।

जिज्ञासा: <u>इसी</u> स्थली को आपने लिखा है 'धारणा पर पूर्णाधिकार के अनन्तर उसके वंचित भाग अथवा सारभूत भाग में चित्त वृत्तियों का केंद्रीभूत होना पाया जाता है - जो निष्ठा एवं ध्यान का द्योतक है'?

उत्तर: वही है |

जिज्ञासा: ये सब होने के लिए न्याय, धर्म, सत्य इन सब का पहले निष्कर्ष होना होगा ?

उत्तर: पहले तुलन होकर निश्चित रहता है। न्याय, धर्म, सत्य कैसे तुलन में आता है? सूचना के आधार पर, शब्द से आता है। शब्द का अर्थ में जो तुलन होता है, तुलन के बाद प्रतीति होना स्वाभाविक है। फिर बोध होता है, अनुभव होता है।

जिज्ञासा: साक्षात्कार को आपने 'निदिध्यासन' कहा है, उसके बाद अनुभव को भी 'निदिध्यासन' कहा है, जैसे परिभाषा संहिता में 'केंद्रीकृत ध्यान - अनुभव में होना' ऐसा लिखा है।

उत्तर: अध्ययन विधि से निदिध्यासन, अनुभव विधि से प्रमाण का निदिध्यासन। एक क्रिया के लिए अनेक भाषा होता है, उस आधार पर कहते हैं।

जिज्ञासा: पुनह: एक बार कन्फर्म कर रहा हूँ - इसका मतलब है दो चरण में है, यह प्रोग्राम (कार्यक्रम) | प्रथम श्रवण-मनन पूर्वक साक्षात्कार या निदिध्यासन होना | इससे अवधारणा होना - इसे 'अध्ययन-विधि' कह रहे हैं आप | फिर इस 'धारणा रूपी अवधारणा' पर 'पूर्णाधिकार' से ध्यान अथवा बोध और अनुभव होना | यह 'अनुभव विधि' हुआ | इस दुसरे चरण को आपने 'धारणा-ध्यान-समाधी' भी लिखा है अभ्यास दर्शन में...

उत्तर: यह पकड ठीक है | श्रवण से धारणा तक पहुंचना है अपने को...होने से अवधारणा में आ गए | 'अध्ययन-विधि' में पुरुषार्थ है, तर्क है | 'अनुभव-विधि' में परमार्थ है, जीवन के प्यास से हो ही जाता है, अपने आप...

जिज्ञासा: उपरोक्त क्रम को जो 'श्रवण का तात्पर्य धारणा से है', 'मनन का तात्पर्य निष्ठा एवं ध्यान से है', 'निदिध्यासन का तात्पर्य सहज समाधी से है' जो लिखा है फिर....

उतर: वो विगत के सार्थकता देने के अर्थ में हो गया | आपके लिए उसे 'अध्ययन-विधि' में माना जाए |

जिज्ञासा: 'अध्ययन विधि' में 'मनन' की जो प्रक्रिया है, उसमें भी फिर 'श्रवण के सारभूत भाग में चित्त, वृत्ति केंद्रीभूत करना' अभ्यास होता है ?।

उत्तर: सारभूत वही है न्याय, धर्म, सत्य।

जिज्ञासा: हां बाबा | उसमें क्या ऐसा है कि जो 'परोक्ष' विधि से हमारे पास श्रवण रूपी जानकारी है उसको स्वयं का स्वत्व बनाने के लिए हम प्रयास करते है। 'अर्थ में जाना' यही है कि जो जानकारी है मेरे पास 'परोक्ष' है उसका मैं 'अपरोक्ष विधि' से अपना स्वत्व बनाता हूँ।

उत्तर: सूचना को शोध करना मनन है। हम जो सुनते हैं, अनुभव के पहले, उसके अर्थ को शोध करना- ये मनन है।

जिज्ञासा: इसमें भी जो हमने 'श्रवण' किया है, उसके अर्थ में चित्त वृत्ति केंद्रीकृत करना होगा?

उत्तर: अर्थ का साक्षात्कार होना, मनन के बाद निदिध्यासन। यही है |

जिज्ञासा: क्योंकि आपने इस परिभाषा ('सारभूत भाग में केंद्रीकृत होना') को आगे 'ध्यान' अथवा बोध के भूमि के लिए प्रयोग किया है | उसी का 'आंशिक स्वरूप' मनन में होगा, 'अध्ययन-विधि' में ? अर्थ में ध्यान देने की ही श्रृंखला है | इसीलिए एक जैसे लिखा है?

उत्तर: अध्ययन के लिए मन को लगाना ही ध्यान है, यह कह चुके हैं | 'ध्यान' का शुरुआत है, साक्षात्कार से ...साक्षात्कार होने से अवधारणा में चले गए, होने से 'अनुभव-विधि' में लग गए...

जिज्ञासा: जैसे पढने के लिए मन को लगाना 'आंशिक ध्यान' कहा है, आपने | साथ में चित्त वृत्ति का 'संयंत' होने के लिए केंद्रीकृत <u>करते</u> हैं, यही मनन और उसका अभ्यास हुआ | अर्थात, संयंत <u>करने</u> के लिए "<u>ध्यान देना</u>" होता है, और साक्षात्कार पूर्वक संयंत होता है | होने से अवधारणा होना - 'अध्ययन विधि' में

उसके बाद 'अवधारणा रूपी धारणा' पर पूर्णाधिकार होना, उसके सारभूत भाग में <u>केंद्रीकृत होने</u> से 'ध्यान' में चले गए ...तो '<u>ध्यान होता है</u>' और इसके बाद अनुभव में 'केंद्रीकृत ध्यान' हो गया - यह 'अनुभव विधि'

उत्तर: वही अवधारणा से अनुभव ही तो है |

जिज्ञासा: और अवधारणा पूरा होने पर ही अनुभव होता है|

उत्तर: अध्ययन-विधि से | अवधारणा के बाद बोध होना, अनुभव होना, प्रमाण होना, स्वाभाविक होता है|

इस ढंग से अध्ययन से पहले अवधारणा पूरा हुआ| वो 'धारणा' में परिवर्तित होने के लिए अनुभव मूलक विधि से लाते है हम 'प्रमाण', तब पूरा हुआ, तब धारणा हुआ| धारणा होने के बाद पूर्ण हुआ| अध्ययन पूर्ण होने का प्रमाण हो गया| उसी का नाम है 'समझ'| धारणा पूरा होने के बाद अध्ययन पूरा हुआ | यदि धारणा पूरा नहीं हुआ है तब तक अध्ययन करना ही होगा|

यह अनुभव विधि से धारणा बता दिया | यही धर्म | पहले तुम जो पूछा, वो अध्ययन विधि में बोध होने के लिए जो हम प्रयत्न करते हैं, चित्त-वृत्तियों का संयंत होना, उसे बता दिया,धारणा; अभ्यास विधि में, साधना के अर्थ में | तत्व और देश में संयंत होने से है | ठीक हो गया?

जिज्ञासा: जी | बढ़िया हो गया यह | इससे स्पष्ट हुआ की 'धारणा' की वस्तु न्याय-धर्म-सत्य ही है, और यही धर्म एवं सामाधान भी है | इसी में अध्ययन अथवा श्रवण मनन साक्षात्कार पूर्वक संयंत होते हैं, इसी में केंद्रीकृत होते हैं, बोध होता है, इसी का अनुभव होता है और इसी का अनुभव मूलक बोध होने से धर्म, धारणा हो जाता है, बुद्धि में …

उत्तर: अब ठीक हो गया |

जिज्ञासा: अभ्यास दर्शन में जो लिखा है, इसे जोड़ेंगे तो ऐसा बनेगा? अवधारणा होने से 'प्रतिबद्धता' या 'धारणा' हो गयी, बोध होने से 'संकल्प या निष्ठा' एवं 'ध्यान' हो गया…अनुभव होने से 'सहज निष्ठा' हो गया |

उत्तर: और यही अनुभव मूलक विधि से व्यक्त होना!

खंड #२: "जानने मानने" की वस्तु

स्थान: अमरकण्टक । **दिनांक:** 9-13 अक्तूबर 2013

(यह पूज्य बाबाजी के साथ अंतिम लम्बी संवाद रही । इसके बाद मार्च २०१४ में उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया)

साक्षात्कार वस्तु-'सूत्र रूप' में

बाबाजी : बताओ, क्या बात है?

जिज्ञासा : बाबाजी, इस बैठक मे मैंने जो भी अभी तक गत 5 वर्षों में जो सोचा है, उनके निष्कर्षों को आपके साथ जाँचना है और उसके साथ साथ कुछ जिज्ञासा भी है।

उत्तर : उसका आधार क्या है ?

जिज्ञासा: आपने जो लिखा है, और कहा है उसके आधार पर मैंने सोचा है, उसे पूछना है...

उत्तर : क्या सोचा है, बताओ न उसको ?

जिज्ञासा : बाबाजी, एक तो साक्षात्कार, बोध, अनुभव के लिए जो वस्तु है...

उत्तर: वो तो प्रक्रिया है !! आधार क्या है ? में पूछता हूँ आधार पता है ?

जिज्ञासा: आपके दिया परिभाषा के आधार पर मैंने जो मनन किया है, वही आधार है।

उत्तर : परिभाषा किसका किया है । परिभाषा तो किसी एक वाक्य का होता है, एक शब्द का होता है, आधार जो है ना, पूरी सार्थकता के अर्थ में होता है!! कहाँ पहुंचे ? अपन कहाँ पहुंचे? सह-अस्तित्व मूल मुद्दा, सहअस्तित्व में जीवन को समझना दूसरा मुद्दा, तीसरा मुद्दा मानवीयता पूर्ण आचरण को समझना। ऐसा तीन मुद्दा रखा है मूल में... इन तीनों मुद्दों के आधार पर सारी बात कहा है । आप कहना चाहते हो तो भी यही होगा, ये कहना चाहते हैं तो भी यही होगा। ये अब ठीक हो गया है क्या?

जिज्ञासा: जी, मूल मुद्दा जो आधार है, ये सार्थकता है, प्रयोजन है ।

उत्तर : और उसको जाँचना, सार्थकता क्या है ? सहअस्तित्व को समझना, सहअस्तित्व स्पष्ट होना, अध्ययन विधि को स्पष्ट होना, ठीक है ना, और जीवन स्पष्ट होना, और मानवीयतापूर्ण आचरण स्पष्ट होना । इन तीनों बातों को स्पष्ट करने के लिए अपन पूरा बात कहा है ।

जिज्ञासा : इसमे बाबा, आपने बार बार कहा है रूप, गुण, स्वभाव, धर्म के संयुक्त रूप में साक्षात्कार होता है ...

उत्तर : ठीक है ना, प्रकृति का साक्षात्कार ऐसा ही है ।

जिज्ञासा: तो उसमे 'रूप, गुण' वाला भाग जो है...

उत्तर: सुनो तो सही, वहीं से दौड़ लेते हैं !! रूप, गुण, स्वभाव, धर्म प्रकृति की, मानव के साथ रूप, गुण, स्वभाव, धर्म है, जीवों के साथ है, वनस्पतियों के साथ है, पदार्थ के साथ है, प्रकृति इतना ही है...यह चार अवस्था है, ठीक है ना, ये समझ में आता है ? समझ में आता है तो पुनः तो नहीं पूछोगे ?

जिज्ञासा: जी बाबा, इसमें बाबा यही पूछना था रूप गुण तो चित्रण में ही रुक जाता है ना?

उत्तर: रूप, गुण, स्वभाव, धर्म चारों चीज़ चित्रण होता है, रूप और गुण चित्रण तक ही रह जाता, इसलिए हमने इसको छोड़ दिया, जीवन को पकड़ा , जीवन क्रिया को पकड़ा और उसको स्पष्ट किया।

जिज्ञासा: बाबा आप ये कह रहे हैं रूप, गुण, चित्रण तक है स्वभाव, धर्म का साक्षात्कार होता है...

उत्तर: स्वभाव धर्म सब पता लगता है ना, न्यायान्याय, धर्माधर्म, सत्यासत्य के रूप में... समझ में आता है ।

जिज्ञासा: इसमे बाबा आपने कहा था स्वभाव धर्म का साक्षात्कार होता है, स्वभाव धर्म का बोध भी होता है और धर्म व सत्य का अनुभव होता है ।

उत्तर: धर्म का अनुभव होता है, ठीक तो है ।

जिज्ञासा: ये जो आप सूत्र कह रहे हैं, की 'धर्म की मात्र अनुभव ही होता है', इसमे सत्य भी समाया है ??

उत्तर: सब के सब समाया है, जीवन समाया है, मानव समाया है, जीव संसार समाया है, पदार्थ समाया है, रसायनिक रूप में प्राणावस्था समाया है, पदार्थवस्था जो है ना, मृद, पाषाण, मणी, धातु के रूप में पहचाना। मृद पचासों प्रकार की, मणी पचासों प्रकार की, पाषाण व धातु सैकड़ों प्रकार का, उसी में अभी विज्ञान उलझा है, विज्ञान सैकड़ों प्रकार की धातु, मणी व पाषाण के होने में उलझा है, इसी में उलझा है ।

जिज्ञासा: तो बाबा तीन सत्य आप बताते हैं - स्थिति सत्य, वस्तु स्थिति सत्य, वस्तुगत सत्य ...

उत्तर:वो तो दूसरी प्रकरण हुआ, पहले इसको पूरा कर लो!!!

जिज्ञासा: बाबा आप जब कहते हैं "स्वभाव धर्म का साक्षात्कार होता है" - उसमे तीनो सत्य समाया है की नहीं समाया है ?

उत्तर: समाया रहता है...

जिज्ञासा: बाबा, ये सारे सूत्र 'एक ही वस्तु' को इंगित कर रहे हैं ?

उत्तर: पहले एक सूत्र को पूरा करों, उसके बाद दुसरे सूत्र को लेना!!

जिज्ञासा: बाबाजी इसमे ये होता है एक सूत्र की विधि से तो ये बैठता है , जब इसमे दूसरे सूत्र विधि से बिठाने जाते हैं, तो दोनों में ताल-मेल बनता नहीं...

उत्तर: हम बात समझ में आने के लिए बताते हैं...

जिज्ञासा: वही तो, समझने के लिए ही पुछ रहा हूँ... बाबा जब स्वभाव धर्म का साक्षात्कार होता है, ये कह रहे हैं आप, तो उसमे जो तीनों सत्य है (स्थिति, वस्तु स्थिति, वस्तुगत सत्य) ये तीनों भी साक्षात्कार होता है या नहीं ?

उत्तर: होता है ना...

जिज्ञासा: तो इसमे स्थिति सत्य, वस्तु स्थिति सत्य, वस्तुगत सत्य...

उत्तर: ये समझ में आने के बाद ही बाकी सब समझ में आएगा, नहीं तो समझ में नहीं आएगा, कितने भी हम लोग रगड़ते रहेंगे शंकाएं तो बना ही रहेगा ।

जिज्ञासा: 'समझ मे आने' का तात्पर्य है, की इसका साक्षात्कार होना...

उत्तर: पहले साक्षात्कार सहअस्तित्व का होना, सहअस्तित्व में जीवन का होना , मानवीयता पूर्ण आचरण का होना, ये समझ में नहीं आता है तो कुछ नहीं समझ में आएगा । हमने पूरा 3000 पेज (३००० पृष्ठ वांग्मय) लिख कर रखा है, एक भी वाक्य समझ में नहीं आएगा, जीने में आएगा ही नहीं, समझ में नहीं आता है तो जीने में आना ही नहीं !

जिज्ञासा: जैसा आप कई बार यह बताए हैं की 'सत्य' जो है, ये अनुभव में ही समझ में आता है ।

उत्तर: धर्म और सत्य ये दोनों अनुभव में समझ में आता है ... प्रकृति में 'धर्म' को बताया है, सत्ता में संपृक्त प्रकृति को 'सत्य' बताया है - यह <u>एक ही साथ</u> आता है । अनुभव सम्मत विधि से विचार करने के लिए कहा है, जीने के लिए कहा है । इसमे कोई 'पीछे वाला' या 'भविष्य का भूत' नहीं लगा है, वर्तमान में जीने का भूत लगा है | वर्तमान को छोडकर अभी तक मरे हैं - आदर्शवाद भविष्य को लेकर मरा, और भूत(काल) को लेकर भौतिकवाद मरा है । 'भाग-विभाग' करना वहीं से शुरुआत है, भाग करने वाला पंडित अभी हमारे सामने आप एक बैठे हो, यह दूसरी बैठी है, वह एक तीसरा बैठा है...भाग विभाग करना कोई मतलब बनता नहीं है, मतलब हो तो कर लो ...! ना जीने का मतलब, ना बताने का मतलब, समझने का मतलब तो कुछ नहीं – भाग विभाग करके सोचने में..

जिज्ञासा: बाबा आप जो कहते हैं "धर्म सत्य का अनुभव होता है" - उसका मतलब ये नहीं है की उसका साक्षात्कार नहीं होगा, उसका साक्षात्कार भी होगा...

उत्तर: साक्षात्कार होने के <u>बाद</u> होता है अनुभव...

जिज्ञासा: ये स्पष्ट है, साक्षात्कार के बाद ही अनुभव होगा, उसमे कोई तकलीफ नहीं है । मैं दूसरी चीज़ पुछ रहा हूँ... जैसे आपने कहा है "स्वभाव धर्म बोध होता है" - और धर्म सत्य की मात्र अनुभूति होती है...

उत्तर: ठीक हो गया भई, सत्य क्या चीज़ है ? सहअस्तित्व परम सत्य, जीवन परम सत्य, मानवता परम सत्य, ऐसा ही है सत्य के तीन stage (चरण) । अभी अधिकांश लोगों का व्यवहार में जीने के लिए अपेक्षा है, विचार में जीने की नहीं है... जबकी, विचार में जीने के पहले अनुभव में जीना होता है, उसके बाद ही विचार में जीना होता है, उसके बाद व्यवहार में जीना होता ही है - ऐसा है, अभी के प्रचलन में 'चाहने' में और 'होने' में उल्टा सीधा है !!

जिज्ञासा: बाबा, आपने एक संवाद में कहा था "नियम नियंत्रण संतुलन के लिए तुलन पर्याप्त रहा, न्याय के लिए चिंतन पर्याप्त रहा, धर्म के लिए बोध प्रयाप्त रहा, सत्य के लिए अनुभव आवश्यक रहा"...

उत्तर: मनुष्य के विचार में न्याय धर्म सत्य का विचार होता है, यह कहा है...

जिज्ञासा: इसके पहले जो बात हुई, उसके साथ यह सूत्र कैसे बैठता है ये पूछना था मुझे, 'न्याय के लिए चिंतन पर्याप्त रहा, स्वभाव धर्म के लिए बोध पर्याप्त रहा और धर्म के लिए अनुभव आवश्यक रहा'... तो जब कहते हैं की "न्याय के लिए चिंतन पर्याप्त रहा"...

उत्तर: उसके कार्य के लिए उसके कार्य व्यवहार के लिए ...

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में...

उत्तर: अनुभव मूलक विधि से प्रमाण| अध्ययन विधि से साक्षात्कार, बोध|

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से न्याय धर्म सत्य, तीनों साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: साक्षात्कार होगा, ठीक है ना, अध्ययन के ध्यान में ये सब आता है...

जिज्ञासा: बाबा एक लेख में आया है - "चिंतन में न्याय में जागृति होती है , बोध में धर्म में जागृति होती है और अनुभव में होने से सत्य में जागृति होती है"; इसमे ये पूछना है, साक्षात्कार में न्याय में जागृति होने का तात्पर्य है की साक्षात्कार होने से हम न्याय कर सकेंगें ?

उत्तर: न्याय धर्म सत्य को बताया की नहीं... उसी के संदर्भ में लिखा है ।

जिज्ञासा: बाबा जब अध्ययन विधि से साक्षात्कार होता है?

उत्तर: इस विधि से भी होता है... अनेक विधि लगाए हैं, समझने के लिए एक विधि से नहीं हो करके अनेक विधि से होता है... समझना एक ही वस्तु है, समझाने की विधि अनेक हैं । "सत्य को समझों" - ये पहले से कह चुके हैं, कौन समझा है अभी तक ? हजारों वर्ष बीत गए हैं, क्या किया जाए? समझने की वस्तु एक होगा और समझाने की विधि अनेक होगी ...जैसे पर्वत के शिखर में शंकु स्थापित किया वो एक हुआ, और पहुँचने के लिए सारा पर्वत है कितना भी रास्ता बना लो ऐसा...!

जिज्ञासा: बाबा ये सब सूत्र एक करने के पक्ष में ही बात कर रहे हैं, अभी

उत्तर: कहाँ बात कर रहे हैं...आपका पूछने का तरीका ऐसा नहीं है... एक ही वस्तु को समझने के लिए अनेक विधि से बताया है, हमने ... ये सब विधियाँ है, पहले दो विधि हो गया है इस वार्तालाप में, ये अभी तीसरा विधि है ।

जिज्ञासा: बाबा इसमे इतना ही पूछना है जब अध्ययन विधि में साक्षात्कार होता है तो न्याय पूर्वक जीने की अहर्ता आ जाती है क्या ?

उत्तर: अनुभव से !! अनुभव की रोशनी में, उसको छोडकर कहीं नहीं पहुंचेंगे, कभी नहीं होगा ! अनुभव को छोड़कर अपन कहीं नहीं पहुंचेंगे !

जिज्ञासा: तो अनुभव के बिना ‘न्याय’ नहीं होगा ?

उत्तर: नहीं होगा ।

जिज्ञासा: अनुभव के पहले न्याय का भास् आभास प्रतीति रहता है ? ‘न्याय’के प्रतीति पूर्वक जियेंगे?

उत्तर: रहता है, ‘प्रमाण’ नहीं रहता । न्याय एक घटना है, दो व्यक्तियों के बीच होने वाली चीज है….अनुभव के बाद ही होगा।

जिज्ञासा: उसी सिलसिले में एक लेख आया है आपका, उसको भी स्पष्ट कराना चाह रहे हैं उसमे लिखा है - "चित्त में चिंतन क्रियाकलाप ही समझदारी का पहला प्रमाण होना देखा गया है " ।

उत्तर: चिंतन, चिंतन क्या होता है ? अनुभव के लिए चिंतन, अनुभव मूलक चिंतन । अनुभव मूलक चिंतन से व्यक्त होता है…

जिज्ञासा: वही पहला प्रमाण है ?

उत्तर: वही पहला प्रमाण है । पहले बता दिया अनुभव को … सब एक ही बिन्दु में जाएगा, यह जितना आप लिखे हो, १३० बिंदु का जिज्ञासा ... सब एक ही जगह जायेगा...एक लक्ष्य को अनेक विधि से बताया है, ये आपको स्वीकार होना चाहिए...

जिज्ञासा: बाबाजी, यह मेरे में स्वीकृति के रूप में है, उसे भाषा के रूप में भी कैसे हो जाए, उतना ही आपसे confirm (पक्का) कराना है ।

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: आपने उसे चौथी विधि से भी बताया है, ‘यथार्थता, वास्तविकता, सत्यता’ का साक्षातकार होता है ।

उत्तर: यथार्थता, वास्तविकता, सत्यता के रूप में भी समझाया जाता है, एक ही सत्य को...सत्य तो एक ही है, स्वभाव अलग-अलग होता है।

जिज्ञासा: चारो अवस्थाओं का स्वभाव अलग अलग होता है…

उत्तर: धर्म भी अलग अलग होता है|

जिज्ञासा: यह जो चारों अवस्थाओं का स्वभाव है, ये एक-एक करके अलग अलग साक्षात्कार होता है क्या ?

उत्तर: साक्षात्कार ‘स्वभाव’ के रूप में सम्मिलित रूप में होता है..बताने के विधि से अनेक होता है..

जिज्ञासा: तो चारों अवस्थाओं का स्वभाव सम्मिलित रूप में साक्षात्कार होगा?

उत्तर: सहअस्तित्व रूप में होता है, सहअस्तित्व एक रूप होगा की अनेक रूप होगा?

जिज्ञासा: एक रूप होगा...तो न्याय धर्म सत्य को ही आपने दूसरी विधि से यथार्थता, वास्तविकता, सत्यता कहा है ?

उत्तर: वही है ! बता तो दिया भाई, की एक ही सत्य को अनेक विधि से बताया है !! पहुँचने के मार्ग को ‘मार्ग’ ही मानना पड़ेगा...

जिज्ञासा: बाबाजी, ये ‘सारे सूत्र एक ही वस्तु को कैसे इंगित कर रहे हैं’ मुझे लगता है ये मुझे स्पष्ट हुआ है…

उत्तर: यही मुख्य बात है, मुख्य बात है समझ में आना … यह यदी समझ में आ गया, बहुत बढ़िया हो गया !

जिज्ञासा: उसमे बाबा एक पाँचवी विधि बताया आपने …

उत्तर: विधि काहे के लिए - लक्ष्य के लिए । लक्ष्य क्या है – सह अस्तित्व, सह अस्तित्व एक होता है की दस होता है ??

जिज्ञासा: एक होता है... ये सारे 'विधियाँ' या 'सूत्र' 'एक ही वस्तु' को कैसे इंगित करते हैं ये मनन पूर्वक तय होता है?

उत्तर: चिंतन विधि से तय होता है ।

जिज्ञासा: मनन से तय नहीं होगा ?

उत्तर: मनन से तय नहीं होता, अनुभवमूलक मनन विधि से प्रस्तुत किया जाता है ... किसका मनन? अनुभव का मनन ।

जिज्ञासा: अनुभव विधि से तो मनन कहा ही है आपने, अध्ययन विधि से जो "श्रवण मनन" की बात की है आपने ...

उत्तर: अध्ययन विधि से श्रवण मनन निदिध्यासन, उसके बाद अनुभव है । अनुभव विधि से श्रवण मनन विधि से जब व्यक्त होते हैं, आप जो पूछ रहे हो, अनुभव पूर्वक मनन से तय होता है....व्यक्त होने की बात कहा है, इसका प्रयोजन, तुलन का प्रयोजन व्यक्त होने के अर्थ में - सह अस्तित्व प्रयोजन है ।

जिज्ञासा: बाबाजी, इसको आप '5 सूत्रों' में भी बताते हैं सह अस्तित्व, विकास क्रम, विकास, जागृति क्रम, जागृति

उत्तर: ठीक है ना, इसको भी बताया है । सूक्ष्म में भी बताया है, स्थूल में भी बताया है , दोनों विधि से बताया है, अभी आप सूक्ष्म विधि से चाह रहे हो ... चारो विधि जो है, सहअस्तित्व के लिए कहा है ।

जिज्ञासा: तो ये सारा 'सत्य' का ही बिन्दु है ?

उत्तर: सत्य सहज बिन्दु है, 5 सूत्र...

जिज्ञासा: बाबा यह '५ सूत्र', 'स्थिति सत्य' कहलाएगा या 'वस्तुगत सत्य'?

उत्तर: सभी इसी के लिए कहा है - स्थिति सत्य, वस्तुस्थिति सत्य, वस्तुगत सत्य - सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति में पूरा होता है ।

जिज्ञासा: तो जब "5 सूत्र के साक्षात्कार बोध" की बात आप करते हैं उसमे 'न्याय-धर्म-सत्य' समाया ही है ?

उत्तर: वो समाया है ! ठीक हो गया, अब ठीक हो गया तुम्हारा बात ।

जिज्ञासा: तो बाबा, इसका निष्कर्ष ये निकलता है की कोई भी वस्तु साक्षात्कार हुए बिना बोध नहीं होगा और बोध हुए बिना अनुभव नहीं होगा ?

उत्तर: नहीं होगा ... एक तो ये भी बात है । अनुभव के बिना कुछ सच्चाई को बताया नहीं जा सकता ।

जिज्ञासा: ये जो सूत्रों को हम लोग जो "काट" देते हैं, ये 'चित्रित' करने की विधि के कारण से होता है ?

उत्तर: अभी तक परेशानी इतना ही है ! विखंडन विधि को हमने नकारा है, विकल्प में इसको नकारा है पूरा...अथा से इथी तक । (आज शिक्षा में) विखंडन विधि को आप पढ़े हो, अखंड विधि को पढ़ाया ही नहीं गया है... यही परेशानी है, क्या किया जाए? ऐसी स्थिति को क्या किया जाए ? ये जो (हमने) प्रस्तुत किया है ठीक है की गलत है ?

जिज्ञासा: आपने जो प्रस्तुत किया है उसको ठीक कर देता है, बाबा ये जो विखंडन विधि का हमको अभ्यास हो गया है ये एक चित्रित करने का अभ्यास है क्या

उत्तर: कल्पना करने का !!! चित्रण कहाँ है ?

जिज्ञासा: ठीक है, मान्यता के रूप में है, चित्रण को तो आप अनुभव मूलक विधि से ही मानते/ कहते हैं...

उत्तर: मान्यता के रूप में है । व्यक्तिगत बात मान्यता है, अथवा संविधान के रूप में मान्यता इतना ही है । संविधान से अधिक मान्यता नहीं है, सभी मान्यताएँ किसी समुदाय के सीमा में ही है ... इसलिए अखंडता के अर्थ में सभी मान्यता को तैयार करने के लिए हमने काम किया है... विकल्प को लिखा, इसमें कुछ गलत हो तो बताना...

जिज्ञासा: इसमें गलती तो कुछ दिखता नहीं.. बाबाजी, साक्षात्कार की वस्तु के लिए आपने ये भी लिखा है, अनुभवात्मक आध्यात्मवाद में आया है "साक्षात्कार अपने में प्रयोजनों का निश्चयन सहित तृप्ति के लिए श्रोत रूप में पहचान लेता है" ...

उत्तर: ठीक है, श्रोत कैसा है, उसको बताया है... अनेक विधि से । अनुभव मूलक विधि से चिंतन निष्कर्षों का होता है, अध्ययन मूलक (अनुभवगामी) विधि से साक्षात्कार होता है ।

जिज्ञासा: आप यह कह रहे हैं की प्रयोजनों का चिंतन अनुभव मूलक विधि से होता है, और अध्ययन विधि से साक्षातकार न्याय धर्म सत्य वस्तुओं का होता है?

उत्तर: अध्ययन विधि से चिंतन का अनुमान होता है, स्वीकृति होती है । अनुमान और स्वीकृति दोनों होता है - पहले अनुमान, उसके बाद स्वीकृति । स्वीकृत होने के बाद बोध हो गया, बोध होने के बाद अनुभव होता है, अनुभव मूलक विधि से "प्रमाण" होगा । उसको छोड़ना नहीं है । प्रमाण तीन ही होगा, चौथा मिलेगा नहीं...700 करोड़ आदमी ताकत लगा ले, चौथा (प्रमाण) मिलेगा नहीं, अस्तित्व में उतना ही है, उसको हम अच्छी तरह से परिशीलन किया है ।

जिज्ञासा: 'स्वभाव' को आपने 'प्रयोजन' भी कहा है ?

उत्तर: स्वभाव को प्रयोजन व्यवहार के लिए कहा है ।

जिज्ञासा: तो जब ये कहते हैं की 'प्रयोजन का साक्षात्कार' होता है ....

उत्तर: प्रयोजन का साक्षात्कार अनुभवमूलक विधि से होता है, चिंतन रूप में, व्यवहार कार्य के लिए होता है … अध्ययन विधि से हम प्रत्येक वस्तु के प्रयोजन को सोचते हैं, वो नियति क्रम के रूप में समझ में आता है । क्या समझ आता है ? विकासक्रम में कुछ वस्तु है, विकास में कुछ वस्तु है, जागृतिक्रम में कुछ बस्तु है, जागृति में कुछ वस्तु, इस ढंग से प्रत्येक वस्तु का प्रयोजन समझ में आता है । जैसे, शरीर का प्रयोजन आता है – जीवन प्रमाणित होने के लिए माध्यम है, शरीर । अभी क्या है ? भोग का वस्तु है, शरीर ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में न्याय-धर्म-सत्य वस्तुओं के साक्षात्कार में 'प्रयोजन' समाया है ?

उत्तर: सब समाया है । चारों अवस्थाओं का अनुभव होता है, उसी का लिखा है विकल्प में ।

जिज्ञासा: पुस्तकों में एक वाक्य लिखा है - "साक्षात्कार प्रयोजनों को पहचान लेता है, फलस्वरूप बोध पूर्वक सार्थकता सहित, न्याय धर्म सत्य सहज स्वीकृति ही संस्कार और बोध रूप मे जीवन में क्रिया रूपी अविभाज्य बुद्धि में स्थापित हो जाता है"...

उत्तर: ठीक है । साक्षात्कार में 'पहचानने' की बात कहा है, 'प्रयोजन का निश्चयन' अनुभवमूलक चिंतन से होता है । प्रयोजन अनुभवमूलक विधि से चारों अवस्था की व्यवस्था, उसी को प्रमाणित करने की बात है ।

जिज्ञासा: 'प्रयोजन साक्षात्कार' होने का मतलब क्या है?

उत्तर: न्याय-धर्म-सत्य ही प्रयोजन |

जिज्ञासा: इस सन्दर्भ में आपका एक लेख में आया है – ‘प्रयोजनों को पहचानना, चिंतन सहज क्रिया है | कैसा प्रयोजन? नियम, न्याय, समाधान, जीवन, जीवन का अमरत्व, शरीर का नश्वरत्व, व्यवहार के नियमों को..यही प्रयोजन | इस ढंग से, चिंतन ही अस्तित्व का, विकास का, जीवन के प्रयोजन का साक्षात्कार करता है उसके स्वरूप को स्वीकारता है | चिंतन के स्थली पर आने से स्वतंत्रता मिलना शुरू हो जाता है | चिंतन से ही जीवन का सार मिलना शुरू होता है’

उत्तर: वही बात को विस्तार से बताया है..यही साक्षात्कार का मतलब ही है

जिज्ञासा: ‘प्रयोजन’ में स्वभाव और धर्म दोनों समाहित है ?

उत्तर: सब समाया है । रूप गुण चित्रण में समाप्त हो जाता है । चिंतन (साक्षात्कार) में स्वभाव धर्म शेष रहता है, अनुभव में स्वभाव समाप्त होता है, धर्म शेष रह जाता है ।

जिज्ञासा: तो अनुभव में स्वभाव "समाप्त" होने का तात्पर्य ‘स्वभाव’, बुद्धि में स्थित हो जाता है ?

उत्तर: हाँ, निश्चित हो जाता है … जीने की विधि निश्चित हो जाती है, मतलब प्रमाण त्रय |

जिज्ञासा: ‘अध्ययन विधि’ में ‘जीने की विधि’ बोध में निश्चित हो जाता है ?

उत्तर: पहले अनुमान होता है, अनुमान में भास-आभास दोनों निहित है । उसके बाद प्रतीति में आने के बाद, बोध होना स्वाभाविक हो जाता है । बोध होने से अनुभव होगा ।

जिज्ञासा: ये जो आपने एक ही वस्तु को अलग अलग विधि से बताया है, उसको अध्ययन विधि से हमको एकत्रित करने का प्रयास करना चाहिए की नहीं ?

उत्तर: करना चाहिए । अध्ययन विधि से ही बोध होगा सर्व सामान्य व्यक्ति को । तीनों अवस्था के व्यक्ति को - ज्ञानी, अज्ञानी, विज्ञानी तीनो को ।

जिज्ञासा: जब कभी आप ये कहते हैं की ‘न्याय धर्म सत्य का साक्षात्कार होता है’ उसमे ‘जीवन’, ‘मानवीयतापूर्ण आचरण’ सब समा जाता है ?

उत्तर: सब समाया है ।

जिज्ञासा: एक और वाक्य आया है - "धर्म की मात्र अनुभूति ही संभव है" और हमने ये भी सुना है स्वभाव धर्म का साक्षात्कार होता है, बोध भी होता है, धर्म और सत्य का अनुभव होता है ...

उत्तर: धर्म का तो अनुभव होगा ही, उसके लिए एक भाषा दिया है, और अध्ययन के लिए दूसरा भाषा दिया है ।

जिज्ञासा: तो धर्म अंततः अनुभव में ही जाकर स्पष्ट होगा ?

उत्तर: अनुभव में ही स्पष्ट होगा, और कहीं होगा ही नहीं ! अभी तक कहाँ हुआ ? हज़ारों वर्ष हो गए, मनुष्य को इस धरती पर जनम लेके ...

जिज्ञासा: धर्म का अनुभव होने के पूर्व में धर्म अवधारणा में भी आ जाएगा ना ?

उत्तर: कल्पना में रहता है, कल्पना से अवधारणा तक रेहता है, अवधारणा के बाद सीधा बोध और अनुभव ही होता है । अवधारणा तक जो कुछ भी समय लगे, लगे, किन्तु अवधारणा के बाद, 'धर्म' का सीधा सीधा बोध और अनुभव ही होता है ।

जिज्ञासा: जो 'रूप गुण स्वभाव धर्म' है, उसमे "स्वभाव-धर्म" को ही आपने "न्याय धर्म सत्य" के रूप में खोल दिया है क्या?

उत्तर: यह ठीक है । रूप गुण दोनों परिवर्तित होता रहता है, स्वभाव धर्म परिवर्तित नहीं होता है ।

जिज्ञासा: पुनह: जब "न्याय धर्म सत्य" कह रहे हैं, उसी 'स्वभाव धर्म' को न्याय धर्म सत्य के रूप में खोला है आपने ?

उत्तर: प्रमाणित होता है, प्रमाणित के अर्थ में कहा है, न्याय धर्म सत्य को...

जिज्ञासा: साक्षात्कार के लिए वस्तु भी तो न्याय धर्म सत्य ही है ना ?

उत्तर: 'स्वभाव धर्म' का साक्षात्कार होता है, और 'न्याय' उसमे समाहित रहता है ।

जिज्ञासा: जो भाषा का रचना किया है आपने, उसको समझना चाह रहा हूँ ...

उत्तर: बढ़िया, भाषा को समझना ही पड़ेगा । ये अपना भाषा परंपरा की भाषा नहीं है इसको अच्छी तरह से समझना पड़ेगा । यह परंपरा की भाषा नहीं है - सूत्र रूप में ... "स्थिति सत्य, वस्तु स्थिति सत्य, वस्तुगत सत्य" संसार में कहाँ

है ? संसार में एक से अधिक संविधान बन चुका है, विद्वान बन चुके हैं .. कहाँ है सत्य ? एक आदमी भी नहीं दिख रहा है... इसके बिना 'न्याय' होता है क्या पूछो ..होता होगा तो कर लेना!

जिज्ञासा: पुनह, जो 'स्वभाव धर्म' है उसी को आपने 'न्याय धर्म सत्य' के रूप में रखा है

उत्तर: ठीक है ना, व्यवहार में आते तक 'न्याय-धर्म-सत्य' होता है, अनुभव के लिए स्वभाव-धर्म ही है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब जब आप 'न्याय' कह रहे हैं उसमे 'स्वभाव' और 'गुण' दोनों आ गया ?

उत्तर: ठीक है... अनुभव मूलक विधि से, अध्ययन विधि से नहीं । अध्ययन विधि से भास, आभास, प्रतीति विधि से अनुभव, अनुभवमूलक विधि से पूरा होता है ।

जिज्ञासा: जब "न्याय धर्म सत्य" कह रहे हैं तो 'न्याय' में स्वभाव और गुण दोनों समाया है, न्याय व्यवहार तक छूता है ?

उत्तर: हाँ, 'स्वभाव' में 'न्याय' समाया है ।

जिज्ञासा: और जब धर्म कह रहे हैं, उसमे स्वभाव समाया है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: और जब 'सत्य' कह रहे हैं, उसमे 'धर्म और स्वभाव' समाया है?

उत्तर: ठीक है । परम सत्य क्या है ? सह अस्तित्व - सहअस्तित्व में स्वभाव धर्म दोनों समाया है, यही मुख्य बात है, उसको अच्छी तरह से समझना चाहिए ।

जिज्ञासा: बाबा जब "स्वभाव-धर्म" का भाषा प्रयोग होता है, तब धर्म को आपने धारणा कहा है ना, धारणा ही धर्म है...

उत्तर: सुख को धर्म कहा है, ज्ञानावस्था का धर्म सुख, जीवावस्था का धर्म आशा, प्राणावस्था का धर्म पुष्टि, पदार्थावस्था का धर्म होना, पदार्थावस्था को शाश्वत कहा, अभी तक किसी ने नहीं कहा। 'परिवर्तनशील है, ये तो चला जाएगा' - ऐसा माना आध्यात्मवाद ।

जिज्ञासा: बाबा सुबह जब हम बैठे थे, तब आपने कहा था "न्यायान्याय, धर्माधर्म, सत्यासत्य विधि से स्वभाव धर्म समझ में आता है'' - तो ये तुलन विधि को आप इंगित कर रहे हैं ?

उत्तर: तुलन विधि से ये पता लगता है हम क्या कर रहे हैं, उसमे पता लगाने जाता नहीं कोई अभी...

जिज्ञासा: तो जब 'न्याय धर्म सत्य' कह रहे हैं, 'स्वभाव धर्म' को ही ‘न्याय-धर्म-सत्य’ के रूप में व्यवहार काल में आपने खोला है ...

उत्तर: “स्वभाव-धर्म” जो है, “धर्म-सत्य“ के रूप में समझ में आना चाहिए, 'होने' के रूप में ऐसा ही है । न्याय जो है, व्यवहार में, कार्य में, सब में पता लगता है, व्यवहार कार्य में नियम, रूप और गुण दोनों समझ आता है । स्वभाव धर्म, यह दोनों, अनुभव से आता है, न्यायान्याय, धर्माधर्म, सत्यासत्य के रूप में आता है दूसरी विधि से आता ही नहीं ।

जिज्ञासा: ‘न्याय’ का साक्षात्कार और बोध होता है, अध्ययन विधि से ?

उत्तर: पहले साक्षात्कार से अध्ययन, उसके पहले भास-आभास; उसके पहले पठन, उसके पहले अपेक्षा, बस...

जिज्ञासा: ‘न्याय के बोध’ की भी बात कहा है ना आपने, न्याय का बोध होता है ?

उत्तर: न्याय धर्म सत्य तीनों एक “group” (समूह) है, अनुभव का; projection (प्रक्षेपण) है ... अनुभव (जब) कार्य-व्यवहार में आता है, तो न्याय होता है, विचार में आता है तो धर्म होता है, अनुभव में आता है तो सत्य होता है -ये तीन ही प्रमाण है, व्यवहार प्रमाण, विचार प्रमाण, अनुभव प्रमाण ।

जिज्ञासा: “रूप गुण स्वाभाव धर्म” जो कहा है आपने, यह इकाई के साथ है, चारो अवास्था के साथ, इसमें जब 'धर्म' को समझने जाते हैं, अस्तित्व धर्म को, साथ में 'सत्य' भी समझ आता है....क्योंकि अस्तित्व धर्म समझने के लिए व्यापक वस्तु को समझना ही पड़ेगा, इकाई व्यापक में संपृक्त होने के आधार पर दोनों साथ मी ही समझ आता है, इस अर्थ में 'धर्म' और 'सत्य' साथ में है । इसीलिए, रूप गुण स्वाभाव धर्म सूत्र में 'सत्य' समाहित है, और इस विधि से चारो अवस्था का स्वाभाव-धर्म अलग अलग बताया है, और मानव के जीने/व्यवहार के अर्थ में न्याय-धर्म-सत्य सूत्र बताया है, इस सूत्र में ‘धर्म’ का तात्पर्य मानव धर्म, समाधान, व्यवस्था से है, इसमें बाकी सब (चारों अवस्था) समाया है, क्योंकी मानव धर्म = सुख = समाधान = चारों अवस्था के साथ व्यवस्था ... इस विधि से ‘न्याय-धर्म-सत्य’ व्यवहार के लिए सूत्र है, तुलन विधि है; न्याय-धर्म-सत्य के सार रूप में साक्षात्कार होता है, स्वभव-धर्म का साक्षात्कार होता है....

उत्तर: यह पकड़ ठीक है ।

जिज्ञासा: आपसे ये भी सुना है की "एक-एक वस्तु का बोध होता है"...

उत्तर: सभी वस्तु का बोध होता है न, समझ में आता है - चार group (समूह) में, सारे अस्तित्व का, चारों अवस्थाओं का स्वभाव धर्म पता लगता है, रूप गुण स्वभाव धर्म यह चारों चीज समझ में आता है, इस अर्थ में कहा है।

जिज्ञासा: उसमे से 'धर्म' अनुभव में जाता है ?

उत्तर: धर्म अनुभव में, बोध में स्वभाव-धर्म, चित्रण में चारों (रूप गुण स्वभाव धर्म)

जिज्ञासा: जैसे आपसे जब बात करते हैं तो लगता है की आपके लिए वस्तु 'जुड़ा' हुआ है पर मेरे लिए तो भाषा के रूप में चित्रित हो कर 'कटा हुआ' सा लगता है..?

उत्तर: बद दिमाग को ये आने वाला नहीं, सुलझा हुआ दिमाग के लिए है यह !!! सुलझा हुआ दिमाग से अध्ययन और प्रमाणित करना है । इसकी आवश्यकता है की नही, पहले देख लो, आवश्यकता है तो मूड पटको !

जिज्ञासा: सुलझा हुआ दिमाग से क्या तात्पर्य, की तुलन ठीक से हो पाना ?

उत्तर: सुलझा हुआ अध्ययन से !

जिज्ञासा: जैसे आप बोलते हैं की 'क्रम से साक्षात्कार होता है ...'

उत्तर: साक्षात्कार चिंतन का, चित्त का काम है, चित्रण जब अवधारणा के ऊपर में जाता है उसका नाम होता है चिंतन...

जिज्ञासा: प्रतीति या साक्षात्कार क्रम से होता है ?

उत्तर: क्रम से ही होता है, क्रम का मतलब मानव, मानवत्व को समझ कर के होता है, उसके पहले होगा नहीं..मानवत्व के साथ सब समझ आता है ।

जिज्ञासा: विखंडित विधि से सुनना भी अभ्यास हो गया है, आधुनिक शिक्षा में ?

उत्तर: आपके वक्तव्य से सब टुकड़ा टुकड़ा में होता है, ऐसा लगता है... जुड़ने के जैसे आप सुनते ही नहीं हो, विखंडित करने के जैसे ही आप सुनते हो...

जिज्ञासा: जी। उसी को ठीक करने का प्रयत्न है । क्रम को पुनह: बतायिए...

उत्तर: रूप गुण स्वभाव धर्म यह क्रम है .. चारों अवस्था का अलग अलग रूप गुण स्वभाव धर्म क्रम है, ये एक दूसरे से जुड़ा हुआ है ... 'अध्ययन विधि' से अलग अलग दिखता है किन्तु 'ज्ञान विधि' से ये सब जुड़ा है, 'अनुभव विधि' से जुड़ा है, तब अपने को समझ आता है । मख्खी के रूप और गुण को स्वभाव और धर्म से अलग करके कैसे समझोगे? नहीं समझ आएगा ।

जिज्ञासा: आप यह कह रहे हैं की वस्तु एक है, जुडा है, उस '<u>जुड़े हुए</u>' का क्रमशः स्पष्ट हो जाना ही "क्रम से साक्षात्कार" का मतलब है ?

उत्तर: चारों अवस्थाओं के प्रत्यंगों को समझना ही समझदारी है ।

जिज्ञासा: इसी रूप में 'न्याय धर्म सत्य दृष्टि' एक ही साथ है ? अर्थात, यह 'अलग अलग' होता नहीं?

उत्तर: एक साथ ही अनुभव में आता है, अनुभव के बाद जीने में आता है ... यह अलग अलग होता ही नहीं है । रसायनिक भौतिक स्थिति में रूप व गुण परिवर्तनशील है...इसीलिए अपना शरीर में रूप और गुण परिवर्तित होता ही रहता है और, आशा, विचार, इच्छा, बोध, संकल्प, अनुभव में परिवर्तन नहीं होता इसी के आधार पर ये आत्मा का वस्तु है, ये कहना बनता है...

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जब हम 'तुलन' करते हैं .....

उत्तर: "अध्ययन विधि" व "अनुभव विधि" अलग अलग है । हमारा ये अभिव्यक्ति 'अनुभव विधि' से हुआ है, 'अध्ययन विधि' प्रस्तुत किए हैं, अनुभव मूलक विधि से चलकर अध्ययन विधि को हम प्रस्तुत किए हैं ।

जिज्ञासा: न्याय धर्म सत्य दृष्टि तुलन में 'एक साथ' क्रियान्वित होते हैं, या 'एक के बाद एक' आता है ?

उत्तर: एक के बाद एक होता ही है ... 'अध्ययन विधि' से न्याय पहले होगा, 'अनुभव विधि' से सत्य पहले होगा...

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य अध्ययन विधि में तुलन में पहले न्याय फिर धर्म फिर सत्य दृष्टि विकसित होगी ?

उत्तर: ठीक है

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य तुलन में ये तीनों दृष्टियाँ एक के बाद एक विकसित होते हैं, फिर साक्षात्कार में ये इकठ्ठा ही आता है ?

उत्तर: क्रम से होता है का मतलब इतना ही है | न्याय-धर्म-सत्य विधि से यह बोध होता है, अवधारणा में आता है । अवधारणा में आता है मतलब हमने ठीक पढ़ा, समझा | अवधारणा में नहीं आता है मतलब हमने <u>कुछ भी</u> नहीं पढ़ा, <u>कुछ भी</u> नही समझा !!! कितना कठोर शब्द है यह ! इसे रखूँ की नहीं ?

जिज्ञासा: बिलकुल रखिये....आवश्यक है, नहीं तो हम लोगों में अपने ही विधि से सोचने का मनमानी बना रहेगा...। जो क्रम से साक्षात्कार होता है उसी को आपने "बूंद बूंद से साक्षात्कार होता है" कहा है ?

उत्तर: बूंद बूंद से घड़ा भरता है, हाँ ।

जिज्ञासा: जो भी वस्तु साक्षात्कार होगा वो बुद्धि में 'उसी क्षण' स्वीकृत हो जाता है ?

उत्तर: जो साक्षात्कार होता है बुद्धि में जाता ही है, अनुभव में जाता ही है, प्रमाण होता ही है, परंपरा होता है ।

जिज्ञासा: आपने 1999 में आंवरी आश्रम की रेकोर्डिंग में 'स्वर के साक्षात्कार' का उदाहरण दिया था, जो ऐसा वस्तु है जो दो component (भाग) में है, उसका अलग-अलग साक्षात्कार होता है...

उत्तर: क्षणिक रूप में होता है । उतना ही साक्षात्कार होता है, क्षणिक होने के आधार पर...

जिज्ञासा: इस उदाहरण में जो भाग या 'अर्थ'; 'चित्रण में नहीं समाया', वो साक्षात्कार हुआ ?

उत्तर: चित्रण भौतिक रसायनिक वस्तु का होता है, बोध अभौतिक वस्तु का होता है । 'ज्ञान' अभौतिक है ।

जिज्ञासा: क्या स्वर एकमात्र ऐसी वस्तु है जो साक्षात्कार क्षणिक रूप में होता है, पर बोध नहीं होता?

उत्तर: जो बोध में नहीं आता है, वो स्वत्व नहीं बनेगा, चित्रण तक रह जाता है ।

जिज्ञासा: जब साक्षात्कार हुआ, तो हम क्रम से न्यायान्याय, धर्माधर्म, सत्यासत्य का दृष्टा बन जाते हैं । इसमे दृष्टा कौन बन रहा है ? बुद्धि, चित्त का दृष्टा बन जाता है?

उत्तर: आत्मा दृष्टा है ।

जिज्ञासा: अनुभव के पहले ?

उत्तर: अनुभव के पहले बुद्धि दृष्टा होता है, इन दो के अलावा 'दृष्टा पद' होता नहीं ।

जिज्ञासा: जब प्रतीति होना शुरू कर दिया, तो बुद्धि चित्त का दृष्टा हो जाता है ?

उत्तर: बुद्धि में बोध होता है, बोध होने से दृष्टा बनता है, नहीं तो नहीं बना । बोध होने से प्रमाणित होता है, प्रमाणित होने के लिए अनुभव होगा, अनुभव प्रमाण होने से परंपरा बनेगा।

जिज्ञासा: जैसे ही प्रतीत होना शुरू होता है, तो बुद्धि चित्त के चित्रण का दृष्टा बन जाएगा की नहीं ?

उत्तर: चित्त में रूप गुण स्वभाव धर्म चारों का चित्रण होता है, इन चारों वस्तु का दृष्टा बनता है, चित्त । चिंतन में आने से रूप गुण समाप्त होता है, स्वभाव धर्म बचता है । दो बचकर बोध में जाता है, बोध में एक (स्वभाव) समाप्त होकर एक ही, 'धर्म' अनुभव में जाता है ।

जिज्ञासा: समाधानात्मक भौतिकवाद में एक पैरा आया है जिसमें ऐसे कुछ लिखा है 'सर्वप्रथम चयन आस्वादन में जागृति होना पाया गया है, फिर तुलन व विचार में जागृति होता है, फिर चिंतन चित्रण में जागृति, पश्च्यात बोध में जागृति, अनुभव में पूर्ण जागृति ...क्या मानव में जागृति क्रम यही है ?

उत्तर: जागृति क्रम यही है । जागृति का प्रमाण, जागृति क्रम का अभ्यास - इसे समझो ।

जिज्ञासा: जीव चेतना में जीते हुए मनुष्य में भी जो अंतर दिखते हैं वो इन्ही जागृति क्रम के अनुसार, कारण है ?

उत्तर: अभी लोग अपनी कल्पना करते हैं, मान्यता में चलते हैं, एक भी आदमी अभी तक समझा नहीं है...इतना पर्याप्त है ?

जिज्ञासा: जीव चेतना में जीते समय जो 'इच्छा' होती है .....

उत्तर: वो सब विचार तक ही रह जाता है । उसको छोडकर हम चल दिये – उसका पुराण हमने बहुत नहीं लिखा है...

जिज्ञासा: इसमे कुछ इच्छाएँ दिखती हैं जो आस्वादन के लिए ज्यादा काम करते हैं, जैसे चित्त जो है, ज्यादा आस्वादन के लिए काम कर रहा है...

उत्तर: सहमत रहता है, काम कहाँ करता है चित्त ? काम करता है विचार, वृत्ति ।

जिज्ञासा: बाबाजी, तीन प्रकार की इच्छाएँ दिखती हैं.... a) बाहर से कुछ पाने की इच्छा, b) करने के रूप में कार्यक्रम की इच्छा, c)स्वंय जागृत होने या समझने की इच्छा - ये तीन श्रेणी में अपने में इच्छाएँ दिखती हैं...

उत्तर: वो तो पहला सब गुंडा-गोल रहता है, सब अलग अलग रहता है, सब घुला हुआ रहता है, उसके बाद अलग होकर चित्त में आता है, उसके बाद 'वास्तविकता' रहने से बोध में आता है ...

जिज्ञासा: चिंतन क्रिया का अध्ययन विधि में कार्यरूप क्या है ?

उत्तर: अध्ययन विधि से अनुभवगामी, और अनुभवमूलक विधि से प्रमाणगामी। अध्ययन विधि से चिंतन नहीं होता है, साक्षात्कार होता है, उसी का नाम अवधारणा होता है ।

जिज्ञासा: चिंतन क्रिया ही अध्ययन विधि में साक्षात्कार के रूप में काम करता है?

उत्तर: उसी का नाम अवधारणा है । चिंतन अनुभव का ही होता है । अपन अनुभवगामी – अनुभवमूलक दो बात अलग अलग है की नहीं, ये तय करना पड़ेगा । यदि युद्ध मुक्ति, संघर्ष मुक्ति, अपराध मुक्ति, गलती मुक्ति, भ्रम मुक्ति ये सब होना चाहते हो, तो समझना ही पड़ेगा ।

जिज्ञासा: "समझने" का क्या मतलब है ? 'अवधारणा' में आ गया ?

उत्तर: सर्वप्रथम अवधारणा में आ जाए, बोध में आ जाए । बोध होता है तो अवधारणा हुआ, बोध में नही आता है तो कोई अवधारणा नहीं हुआ । बोध होता है तो, अनुभव होता है । अध्ययन से अवधारणा नहीं हुआ तो कुछ भी समझे नहीं, मात्र कल्पना है, अनुमान है...

जिज्ञासा: वस्तु को समझने को जो क्रम है, उसमे 2 भाषा आया है ....

उत्तर: क्रम तो बता दिया आपको – सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति । जागृति क्रम में हम मानव हैं , जागृत होना शेष हैं । जागृति का प्रमाण रूप क्या होता है इसे लिख दिया है - ये होते तक प्रयत्न है ।

जिज्ञासा: आपसे सुना है पहले सहअस्तित्व स्पष्ट होगा, दूसरा सह अस्तित्व में जीवन समझ में आना फिर तीसरा मानवीयतापूर्ण आचरण समझ में आना … जो आपने अभी '5 सूत्र' बताया है, वो इसी ३ समझ का सम्मिलित स्वरूप है ?

उत्तर: सहअस्तित्व, जीवन, मानवीय आचरण alltotal (पूरे में) बताया है, 5 सूत्र detail (विस्तार) में बताया है...detail, total में भाग होगा, उसी विधि में कहा है, उसी विधि में रूप गुण स्वभाव धर्म कहा है । सहअस्तित्व समझ में नहीं आया है, इसलिए ये रोग राटा है….जी करके ही अनुभव होगा, दूसरी कोई विधि ही नहीं हैं, हमारे अनुसार...यदी होगा तो बताना ...

जिज्ञासा: आपने यह भी लिखा है, "जीवन ज्ञान के प्रकाश में ही सहअस्तित्व दर्शन सुलभ हुआ है" ?

उत्तर: जीवन ज्ञान का मतलब है जीवन समझ में आ गया ।

जिज्ञासा: इस क्रम में पहले सहअस्तित्व स्पष्ट होगा, साक्षात्कार होगा उसके बाद जीवन, फिर आचरण स्पष्ट होगा ?

उत्तर: उसी क्रम में होगा ...प्रमाण होगा, फिर परंपरा बनेगा ।

जिज्ञासा: ये तीनों में से ऐसा नहीं है की 'एक के बाद एक' होगा... एक होने से 'दूसरा' खुलेगा...दूसरा खुलने से 'पहले वाला' और स्पष्ट होगा, खुलेगा - ऐसा चक्रीय क्रम है ?

उत्तर: ऐसा ही है, अध्ययन ऐसा ही है । साक्षात्कार इसी क्रम से होगा । साक्षात्कार नहीं होने से वही - खाना पीना...आहार निद्रा भय मैथुन - इसी में रहेगा आदमी । इसके अलावा आगे नहीं जायेगा ...

जिज्ञासा: और एक भाषा आया है - 'परमाणु में विकास और जीवन ज्ञान से सम्पन्न होने के उपरांत ही अस्तित्व दर्शन होता है'

उत्तर: अस्तित्व दर्शन का मूल सूत्र बताया है, ये समझना पड़ेगा । परमाणु भौतिक है । जब हम परमाणु को समझ लेते हैं तब स्थिति समझ में आता है, उसके पहले नहीं । आप लोग परमाणु का अध्ययन किये हैं, किन्तु परमाणु समझ में नहीं आया, अंदाजा से कुछ भी कहते हैं तो कुछ का कुछ हो जाता है । इस प्रकार के विज्ञान को पढ़कर हम विद्वान हुये हैं, आज का संसार ऐसा ही है ।

जिज्ञासा: परमाणु में विकास व जीवन ज्ञान सम्पन्न होना मतलब ये पहले साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: पहले यही होगा सहअस्तित्व को समझने के लिए...

जिज्ञासा: परसों आपके साथ में जो चर्चा हुआ उसमे गत्यावरोध का कारण क्या रहा ?

उत्तर: गत्यावरोध यह रहा, आपने अध्ययन विधि और अनुभव विधि को मिलाकर जो प्रश्न बनाए, उसका कोई अर्थ नहीं है... अध्ययन के लिए प्रश्न हो सकते हैं, अनुभव के लिए प्रश्न हो सकते हैं| दोनों को मिलाकर नहीं । अध्ययन व अनुभव अलग है – अध्ययन, 'अभ्यास' है; व अनुभव प्रयोजन है । हमने कुछ अध्ययन के लिए कहा है, कुछ सूत्र अनुभव मूलक विधि से जीने में आना है, उसके लिए कहा है, उसे समझना पड़ेगा ।

जिज्ञासा: यह विडियो-ऑडियो रिकॉर्डिंग की आगे क्या उपयोगिता है ?

उत्तर: इसका बहुत महत्व नहीं है ! स्वयं समझने का महत्व है । आपको जो अब जरूरत है – अभ्यास| अभ्यास के बाद अनुभव, प्रमाण व परंपरा । प्रमाण के लिए अभ्यास, उसके लिए अनुभव … अनुभव होता है तो प्रमाण होता ही है, ये 'रिकॉर्डिंग' में कोई प्रमाण नहीं होता ।

जिज्ञासा: ऐसा लगता है जब आपके साथ अभी बैठते हैं तो हर समय मुझे अपने को 'शून्य' बनाकर बैठना पड़ेगा, जैसे अभी कुछ पढ़कर पहले से निष्कर्ष बने हैं, आपके साथ उस समय तालमेल बैठाने जाता हूँ तो बातचीत फँसता हैं...

उत्तर: तालमेल बनाना ही होगा नहीं तो कोई प्रयोजन ही नहीं है । आज का अध्ययन में प्रयोजन नहीं है...आज प्रोद्योगिकी किस बात की ... पैसे के लिए, पैसे से कुछ होता नहीं , पैसे से केवल अपराध ही हाथ आता है, मेरे अनुसार ।

जिज्ञासा: मुझे लगता है मेरा जो तरीका है वो ज्यादा विश्लेषणात्मक है, और इस बार उससे ऊपर उठना चाहता हूँ ।

उत्तर: पूरा विश्लेषण किस बात का है - अत्याधुनिक विचार, और ऐसा विचार परम्परा अपराध की है, अपराध के लिए विश्लेषण नहीं करना है । आज का विश्लेषण सब अपराध के लिए है, पैसे के लिए विश्लेषण, पैसा अपराध के लिए … पैसे से आदमी सामान्य नहीं हो सकता ।

अवधारणा सहज वस्तु – विस्तृत चर्चा

सत्य/अस्तित्व दर्शन

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में "व्यापक वस्तु है, और ये पारदर्शी है" - ये साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: अनुभव से होता है, अनुभव से पारदर्शी है, ये पता लगता है - कैसे? सब (प्रकृति) इसमे डूबे, भीगे, घीरे हैं इससे पता लगता है । चारों अवस्था डूबे, भीगे, घीरे हैं, इससे पता लगता है ये पारदर्शी है, पारगामी है, परावर्तित भी है । यहाँ परावर्तित मतलब सभी इकाइयों में प्रभावशील है, क्रिया के लिए मूल ऊर्जा, व्यापक ऊर्जा व साम्य ऊर्जा के रूप में काम किया है ।

जिज्ञासा: अनुभव के पहले ये साक्षात्कार में आता है ?

उत्तर: साक्षात्कार में नहीं आता, अनुभव में ही आता है । साक्षात्कार में केवल सुना रहता है...यह बात अनुभव की ही बात है । जो सुनते हैं, वो सब साक्षात्कार में आता है… जो सुनते नहीं हैं, वह साक्षात्कार में नहीं आता ...

जिज्ञासा: जैसे इस बात को मैंने आपसे कई बार सुना है...

उत्तर: ठीक है ना…जो एक दूसरे को सुनने मे आया है, वो सब साक्षात्कार में आता है, ये सुनने के रूप में स्वीकार होता है । बोध की जितनी भी बात है वो सब का सब "स्वीकार होने" में रहता है, अनुभव के लिए जितनी भी बात रहता है वो सब "स्वीकार रहने" में रहता है, साक्षात्कार में रहता है ।

जिज्ञासा: जैसे व्यापक वस्तु है, पारदर्शी है, यह मेरे स्वीकृति में तो है….

उत्तर: साक्षात्कार अनुभव नहीं है ! आप ऐसा बात कर रहे हो जैसे साक्षात्कार होने से अनुभव हो गया !!! साक्षात्कार अनुभव नहीं है …!

जिज्ञासा: मैं ये परिशीलन करने का प्रयास कर रहा हूँ की 'आभास' और 'प्रतीति' में अपने में अंतर कैसे करें ?

उत्तर: साक्षात्कार ही प्रतीति है। प्रतीति क्या है - जो साक्षात्कार हुआ, उसके बोध और अनुभव की प्रतीति होना ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जब व्यापक वस्तु साक्षात्कार होता है, तो 'ये व्यापक है', 'पारदर्शी' व 'पारगामी है', तीनों एक साथ होता है या एक के बाद एक ?

उत्तर: एक साथ होता है, जब कभी साक्षात्कार होगा, एक साथ होगा ।

जिज्ञासा: पहले व्यापक है, यह साक्षात्कार हुआ बाद में पारगामी हुआ ऐसा नहीं ?

उत्तर: ऐसा नहीं होता । वो टुकड़ा नहीं होता। एक पकड़ में आया तो तीनों पकड़ में आया

जिज्ञासा: टुकड़ा हो रहा है मतलब स्मरण में ही है, साक्षात्कार हुआ नहीं ?

उत्तर: स्मरण में नहीं होता है, साक्षात्कार होने के बाद ही स्मरण है । सुना हुआ का कोई स्मरण नहीं है, इसलिए ये सब यंत्रों का उपयोग करते हैं ... ऑडियो विडियो यन्त्र, क्योंकी स्वयं में नहीं रहता...

जिज्ञासा: अच्छा! जो हमेशा के लिए हो गया, उसे आप 'स्मरण' कह रहे हैं ! और जो 'शब्द' के आधार पर श्रवण है....

उत्तर: श्रवण शब्द के आधार पर स्वीकार है । शब्द समझ में आता है, 'श्रवण' कहलाया - शब्द का <u>अर्थ चित्रित</u> होना - इसी का मतलब है "सुनना", भास् होना । 'श्रवण' होने से मन में मनन होता है, मनन होने से विचार होता है, निदिध्यासन होने से साक्षात्कार हो जाता है । श्रवण मनन निधिध्यासन इन तीन बातों का अर्थ इतना ही है । श्रवण सुनने से, मनन उसके अर्थ को, प्रयोजन को समझने से, निदिध्यासन उसका साक्षात्कार होने से...इसी को दुसरे भाषा में भास, आभास, प्रतीति कहा है । यह भाषा विगत परंपरा की है, परिभाषा हमारा दिया हुआ, नया ।

इससे अच्छा क्या लिखा जा सकता है ? इसीलिए कहता हूँ, लिखने के बारे में आदर्शवाद, आध्यात्मवाद के रूप में भारत में जो लिखा है, इससे ज्यादा अच्छा लिखा नहीं जा सकता !! अभी हम सब सुनते कहाँ हैं? कहाँ कुछ पकड़ में आता है...उसको मार दिया, कूट दिया, पछाड़ दिया, पीट दिया, यही लिखते है, सुनते हैं...इससे हमको क्या मिलना है ? आप ही सोच लो ! उसके लिए सभी १६-२० वर्ष पढ़ते हैं, प्रयोजन न होने के लिए पढ़ते हैं....प्रयोजन होने की विधि अभी निकली है, इस विकल्प के रूप में...इसको समझने में कुछ समय लगता है !

जिज्ञासा: व्यापक वस्तु के बारे में पिछले कुछ वर्षों में मैंने काफी सोचा है ....

उत्तर: व्यापक है, इसे पहले स्वीकारना श्रवण का मतलब, यदि स्वीकारना होता है तो मनन होता है - इसका प्रयोजन क्या है? - तब उसका विस्तार सब समझ में आता है, उसका अवधारणा हो जाता है, ये निदिध्यासन हुआ।

जिज्ञासा: ‘मनन’ व ‘निदिध्यासन’ में क्या अंतर है ?

उत्तर: निदिध्यासन में वस्तु अस्तित्व में साक्षात्कार हुआ रहता है, मनन उसके <u>पहले</u> की प्रक्रिया है, न्याय-धर्म-सत्य तुलन विधि से मनन पूरा होता है - साक्षात्कार में कल्पना और तर्क समाप्त हो जाता है, उसके पहला कल्पना है ।

जिज्ञासा: पूरे दिन यदी देखता हूँ "ये व्यापक वस्तु है" - ये बीच बीच में में ‘भूल’ जाता हूँ!!

उत्तर: उसका प्राथमिकता नहीं है, उसको प्राथमिकता में लाना पड़ेगा, प्राथमिकता नहीं होने से इसको (सत्य को) भूल करके काम करना बनता है ....

जिज्ञासा: ‘इकाई स्वंय क्रिया है, और अविनाशी है’, ये भी अध्ययन विधि से साक्षात्कार में आएगा ?

उत्तर: आ जाता है..उसी आधार पर - व्यापक वस्तु समझ में आने के आधार पर आएगा । ये पदार्थावस्था की वस्तुएं शाश्वत है, ये खत्म नहीं होता, परिवर्तित होता है - ये समझ में आता है । परिवर्तन जो है, जैसा चंद्रमा में पदार्थावस्था है, वैसा धरती में नहीं है धरती में जैसा है वैसा शनी में नहीं है, गुरु में नही है, मंगल में नहीं है... ।

जिज्ञासा: इकाई ‘दो ही प्रकार’ की होता है - जड़ व चैतन्य - ये स्वीकृति भी साक्षात्कार है ?

उत्तर: ये साक्षात्कार में आता है ।

जिज्ञासा: क्योंकी, ‘मात्र तर्क’ से ये भी बंता है की प्रकृति ‘3 प्रकार का भी हो सकता है’...

उत्तर: ठीक है, नहीं होता है ।

जिज्ञासा: ऐसा तर्क शेष है, मतलब वो साक्षात्कार हुआ नहीं ?

उत्तर: तर्क बचा है का मतलब साक्षात्कार के पहले की सीढ़ी में खड़ा रहता है... साक्षात्कार में तर्क नहीं है। साक्षात्कार हो गया, तो बोध व अनुभव अपने आप होना है, उसमे पुरुषार्थ नहीं है । सारा पुरुषार्थ साक्षात्कार तक की है।

जिज्ञासा: इकाई का व्यापक वस्तु के साथ जो संबंध है की डूबा भीगा घिरा है .....

उत्तर: वो तो साक्षात्कार के बाद ही, बोध में, पूरा होता है ।

जिज्ञासा: अभी ये मेरे कल्पना में तो है... इसका तर्क मुझे स्वीकार होता है

उत्तर: कल्पना में रहने से कोई मतलब नहीं है, वही भूलना होता है - कल्पना को ... वही बोल रहा हूँ भाई, कल्पना में कौन सा विश्वास करोगे, कल्पना बदलता रेहता है ...कल्पना के क्षेत्र में जितना भी फस्ता है, वो सब भौतिक वस्तु, रासायनिक वस्तु ।

जिज्ञासा: मुझे इसका तर्क तो स्वीकार हो गया, मैं इसके अलावा कुछ और बोल नहीं सकता, लेकिन ये 'साक्षात्कार हो गया' ये कहना बंता नहीं ? मतलब ये केवल मेरे मान्यता में है ?

उत्तर: मान्यता में ही है, ऐसा मान सकते हैं ।

जिज्ञासा: ये तीनों qualification (अर्हता) - भीगा, डूबा, घीरा ये अनुभव में ही आएगा ?

उत्तर: ये अनुभव में ही पूरा होता है । श्रवण मे सुनने में आता है, निदिध्यासन में स्वीकार होता है, बुद्धि में बोध होता है, अनुभव में प्रमाण हो जाता है।

जिज्ञासा: इस वास्तविकता के प्रति मैंने मात्र 'मनन' किया है, या 'निदिध्यासन' हुआ है, इसे मैं कैसे जांचू ?

उत्तर: जैसे अवधारणा हुआ, तर्क समाप्त होता है । तर्क जब तक जिन्दा है अवधारणा नहीं हुआ । अवधारणा होने से विश्वास होता है, जीने की इच्छा होती है, प्रवृत्ति होता है ।

जिज्ञासा: ऐसा 'स्वीकारना' तो कई बार आस्थावश भी हो सकता है ?

उत्तर: हमारा ऐसा कौन सा बात है, जो सोचे बिना हम बोलता हूँ उसको आपको प्रमाणित करना पड़ेगा !! चेक करने (जांचने) की विधि है - साक्षात्कार होते तक तर्क रहता है, पुरुषार्थ वहीं तक है; बोध और अनुभव में कोई तर्क नहीं है । अनुभव के बाद यह कह रहा हूँ ....व्यापक वस्तु है, यह तर्क संगत विधि से पता लगता है...अवधारणा होते तक...साक्षात्कार हो गया तो तर्क समाप्त हो जाता है, बोध और अनुभव बचा रहता है - अवधारणा होता है तो बोध होता ही है, बोध के बाद अनुभव होता ही है।

जिज्ञासा: यदि कोई वास्तविकता का साक्षात्कार हुआ तो ये "ऐसा ही है" - यह हर समय वर्तमान में दिखेगा ?

उत्तर: सतत ऐसा ही दिखेगा उसको याद नहीं रखना पड़ेगा ।

जिज्ञासा: आपको हर समय दिखता है ?

उत्तर: जब पूछते हों तब दिखता है, जो पूछते हैं, वो दिख जाता है - उसका अनुभव । अनुभव का रास्ता दिखता है, इसमे सामने वाला कहाँ है, ये पता लग जाता है ।

जिज्ञासा: ये तो हमारे साथ अब भी होता है - जैसे किसी के साथ बात करते समय कोई पूछता है तो ये पूरी बात मुझे याद आ जाती है, मेरे सामने 'खुल' जाता है, मैं उसको बोल देता हूँ ...

उत्तर: अभी संसार के अनुसार बोलना मान्यता है । विकल्प के अनुसार बोलना जिज्ञासा, निश्चय होने के पश्चात अवधारणा, अवधारणा के पश्चात कोई तर्क नहीं, अस्तित्व के ऊपर कोन सा तर्क करोगे !! जूता बनता है, इसीलिए (उसका) अस्तित्व है ! कहाँ बनता है ? न तर्क संगत बनता है, न युक्ति संगत बनता है न व्यवहार संगत बनता है ...

जिज्ञासा: आपके एक लेख में आया है यदि अवधारणा होता है तो 'मैं जी सकता हूँ'... यह आ जाता है

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: 'जीना <u>चाहता</u> हूँ' ये आभास है ?

उत्तर: जीना चाहता हूँ ये अभी भी है (अध्ययन में), "जी सकता हूँ", 'जीऊँगा' ये आता है अवधारणा में – एक कदम आगे बढ़ गए, एक पगड़ी पहुँच गए इसमें; 'जी लेना, प्रमाणित कर लेना' - ये अनुभव है । अनुभव के बिना जी करके प्रमाणित होना होता नहीं ।

जिज्ञासा: इसे मैं एक बार समेट लेता हूँ: साक्षात्कार, या अवधारणा होने से, अथवा जांच:

a) अस्तित्व में वस्तु के प्रती 'निश्चय' होना - तर्क समाप्त होना,

b) सतत उसका ध्यान बने रहना, स्मरण बने रहना

c) उस आधार पर जीने की इच्छा होना, प्रवृत्ति होना – 'जी सकता हूँ', 'जीऊँगा' ये आता है

d) ऐसा 'वस्तु' सार्वभौम वस्तु है, सार्वकालिक-निरंतर रहने वाले वस्तु हैं - अस्तित्व, जीवन, जीवन जागृति, इत्यादी

उत्तर: ठीक है । इसमें जोड़ लो - बोध और अनुभव होता है, मतलब अवधारणा हुआ, नहीं तो नहीं हुआ ।

जिज्ञासा: 'प्रत्येक इकाई प्रकाशमान है और एक दूसरे पर प्रतिबिम्बित है' ये भी साक्षात्कार की वस्तु है ?

उत्तर: हाँ, होता है । वो साक्षात्कार के साथ drop हो जाता है (रुक जाता है), पूरा रासायनिक भौतिक संसार का कार्यक्रम drop हो जाता है, जीवन का कार्यक्रम शेष रहता है, ये बोध होता है, अनुभव होता है...उसके पहले

रासायनिक भौतिक कार्यक्रम चित्रण में आता है, अवधारणा में नहीं आता है । रासायनिक भौतिक कार्यक्रम सब चित्रण में समा जाता है, बोध में उसका प्रयोजन आता है...रासायनिक भौतिक वस्तुओं का प्रयोजन क्या होता है ? जीवन की उपयोगी है – शरीर से लेकर (भौतिक-रासायनिक) वस्तु के रूप में ... शरीर भी उयोगी है, जीवन के लिए, उसी प्रकार, शरीर के उपयोगी के रूप में आता है – सारा भौतिक वस्तु

जिज्ञासा: जो श्रम गति परिणाम है .....

उत्तर: ये सब रासायनिक भौतिक वस्तु के साथ है – श्रम गति परिणाम! 'भौतिक गति' और 'बौद्धिक गति' दोनों है, निश्चय होते तक हम दोनों को लेकर चलते हैं – रासायनिक-भौतिक और जीवन .. जब निश्चय होता है, तर्क समाप्त हो जाता है, तर्क समाप्त होता है तो रासायनिक भौतिक वस्तु reject हो जाता है (नकार देते हैं) ।

जिज्ञासा: समाधानात्मक भौतिकवाद में आपने 'श्रम' को 'स्वभाव व धर्म' से जोड़कर बताया है...

उत्तर: वो भौतिक परमाणु के लिए बताया है; न्याय-धर्म-सत्य विधि से आचरण में धर्म को बताया है, समाधान को सुख बताया है, सुख को मानव का धर्म बताया है ।

जिज्ञासा: "परमाणु में श्रम-गति-परिणाम होता है" ये बोध में नहीं आएगा ?

उत्तर: नहीं ! विकासक्रम चित्रण में आता है ...ये तो विकास क्रम में, जब परमाणु में क्रियाशीलता 'क्यों कर रहा है', देखने पर उसके प्रयोजन में निकलता है, यह सब ।

जिज्ञासा: इसको बुद्धि नही समझता है ?

उत्तर: बुद्धि नहीं !! मन समझता है । मन को कुछ समझने की वस्तु है, विचार को कुछ समझने की वस्तु है, चित्त-चित्रण को कुछ समझने की वस्तु है, अवधारणा में कुछ समझने की वस्तु है, बोध में कुछ समझने की वस्तु है, अनुभव में कुछ समझने की वस्तु है ।

जिज्ञासा: जैसे चित्त में चित्रण में, आपने मानव व्यवहार दर्शन में 8 क्रियाओं का वर्णन किया है, उसमे श्रम गति परिणाम भी आता है - रूप गुण गणना काल विस्तार श्रम गति परिणाम - इस विधि से....

उत्तर: अनुभव के बाद, अनुभव के बाद रखो उसको, जो लिखा है, उसको...

जिज्ञासा: फिर अनुभव के पहले क्या रेहता है इसमें, चित्रण में ?

उत्तर: स्वीकार करने के लिए, श्रवण करने के लिए, यह अवधारणा के लिए अनुकूल हुआ इसीलिए कह रहे हैं । अवधारणा के बाद अनुभव होता है, उसके बाद ऐसा ही जीना होता है, इसी के लिए जीना होता है - अनुभव और बोध का कोई भाषा नहीं है – 'बोध' ही है, 'अनुभव' ही है ।

जिज्ञासा: क्या 'सम विषम मध्यस्थ गुण' - तीनों साक्षात्कार की वस्तु है ?

उत्तर: सम विषम नहीं है, सिर्फ मध्यस्थ ही अवधारणा की वस्तु है, आपका विज्ञान 'मध्यस्थ' को नहीं मानता ।

जिज्ञासा: क्या 'व्यवस्था' का अवधारणा होने से 'मध्यस्थ' समझ में आता है ?

उत्तर: हाँ ! परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था समझ आने से मध्यस्थ समझ में आता है, सुखपूर्वक जीना समझ में आने से मध्यस्थ समझ में आता है...न्यायपूर्वक जीना बनता है तो मध्यस्थ समझ में आता है - उसके अलावा नहीं होता है ।

जिज्ञासा: 'परमाणु में मध्यस्थ क्रिया होता है' - ये अवधारणा में आता है ?

उत्तर: मध्यांश को मध्यस्थ क्रिया नाम दिया है, ये अध्ययन विधि में अवधारणा में नहीं आएगा । अनुभव के बाद आएगा।

जिज्ञासा: क्योंकि आत्मा स्वंय मध्यस्थ क्रिया है, इसीलिए आत्मा में अनुभव के बाद ही आएगा ?

उत्तर: हाँ, जड़ परमाणु में मध्यस्थ क्रिया है - इस बात को समझना अनुभव के बाद ही होता है । अनुभव में, जीवन में मध्यस्थ क्रिया होता है आत्मा, समझने वाला, उसी के आधार पर सब (परमाणुओं) में मध्यस्थ क्रिया को बताया है... तर्क संगत विधि से।

जिज्ञासा: इसका मतलब 'मध्यस्थ क्रिया' के साथ-साथ 'मध्यस्थ बल' और 'शक्ति' समझने से "मध्यस्थ" समझ में आता है ?

उत्तर: हाँ! इतना ही बात है... 'मध्यस्थ शक्ति' समझ में आने से उसका सुदुपयोग दुरुपयोग दोनों समझ में आता है, अभी तक दुरुपयोग किया ।

जिज्ञासा: क्या 'बल-शक्ति' समझना ही 'स्थिति-गति' समझना है ? अर्थात, 'अस्तित्व में स्थिति गति होता है' - क्या ये अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: नहीं आएगा । अस्तित्व में निरंतर इसकी व्यवस्था है – ऐसा पता लागता है, और उसका सुदुपयोग व दुरुपयोग के अर्थ का अध्ययन होता है ।

जिज्ञासा: 'परमाणु अस्तित्व की सबसे छोटी व्यवस्थित इकाई है' - क्या ये अवधारणा में आता है ?

उत्तर: अवधारणा में भौतिक परमाणु नहीं आता, ये तर्क में पूरा हो जाता है । जीवन परमाणु ही अवधारणा में आता है।

जिज्ञासा: आपने संयम काल मे जो 'स्वचालित वस्तु' को देखा और उसे 'परमाणु' नाम दिया वो क्या था ?

उत्तर: सबको देखने की अर्हता आती है भाई ! देखने की अर्हता एक अलग चीज़ है, 'होना' अलग चीज़ है । चित्त में चित्रण में देखा इसको ... जीवन भर एक दृश्य बन जाता है...

जिज्ञासा: इसका मतलब अनुभव से आत्मा और बुद्धि में देखने की एक क्षमता बनती है...इससे चित्रण में ये (भौतिक-रासायनिक वस्तु) चित्रित होता जाता है ।

उत्तर: बस, बस...ऐसा ही होता है ! बुद्धि से बन जाता है । यह ठीक हो गया !

जिज्ञासा: 'परमाणु में मध्यांश का होना, परिवेश का होना' जो सूचना आपसे मिली इसीलिए वो चित्रण के रूप में मुझे स्वीकार हुआ है, क्योंकि मुझमें पहले से विज्ञान की मान्यता बनी रही ?

उत्तर: वो कुछ तक स्वीकार हुआ है, कुछ दूर तक नहीं हुआ है, इसीलिए परेशानी है !!

जिज्ञासा: क्योंकी परमाणु को मैंने 'देख' लिया है, ऐसा मैं इस समय नहीं बोल सकता । विश्वास तो होता है, कि 'परमाणु कोई वस्तु है' पर मैंने "देखा है" ये मेरे अधिकार में नहीं है...

उत्तर: इसीलिए हम कहता हैं, आपका अधिकार को समझने के लिए, उसका निर्णय करने के लिए, आपको पहले स्वयं अनुभव करना पड़ेगा, उसके पहले सब बक बक है ..जैसा बकरी करता है, बकर बकर ...!

जिज्ञासा: परमाणु में जो गतियाँ है - घूर्णन गति , वर्तुलात्मक गति ये भी अनुभव के बाद ही दिखेगा ?

उत्तर: अनुभव के बाद ही दिखेगा

जिज्ञासा: उसके पहले मान्यता होगी... चित्रण तक ही रहेगा ।

उत्तर: हाँ चित्रण में ही drop (रुक) रहता है, बता दिया आपको...

जिज्ञासा: 'सारे परमाणु अंश एक जैसे होते हैं' ये भी अनुभव के बाद आएगा ?

उत्तर: हाँ...क्रिया के आधार पर हम अंशों को रखा है, ऐसे देखने पर 122 अंश समझ में आता है - जीवन परमाणु में ।

जिज्ञासा: जीवन परमाणु का 122 अंश भी अनुभव के बाद समझ आएगा ?

उत्तर: हाँ । अभी विज्ञान ने गणितीय विधि से विखंडन के आधार पर परमाणु का अध्ययन किया है, हम अनुभव के आधार पर कहते हैं, क्या ठीक रहेगा, हर मनुष्य सोचें !

जिज्ञासा: इस अध्ययन प्रक्रिया में क्या ऐसा है, की आपके जीवन में जो अनुभव मूलक "चित्र रचना" हुआ, वही भाषा के रूप में परिभाषा है, और उस 'चित्र रचना' को जब हम ग्रहण करते हैं, मान्यता के रूप में जब मुझमें चित्रित हो जाता है, तो वो मेरे लिए "श्रवण" हुआ ?

उत्तर: ऐसा ही है । आपके लिए श्रवण है, मेरे लिए चित्रण है - इसलिए सत्य क्या है, उसको समझने के लिए सतसंग की बात आती है – इसी कारण से।

जिज्ञासा: जो भी श्रवण हुआ, अलग अलग चित्र "मान्यता" के रूप में मुझमें आता है...इनमे अंतर्संबंध बनके जो "एक संयुक्त चित्र" बनता है यही मनन है?

उत्तर: ये मनन से लेकर चित्रण तक है, मनन का चित्रण चित्त ही करता है, दूसरा कोई करता नहीं ।

जिज्ञासा: मनन प्रक्रिया में आपने "तुलन का प्रयोग होता है" - ये भी कहा है ?

उत्तर: तुलन का विचार के रूप में रहता है ...

जिज्ञासा: ऐसा लगता है कि, तुलन करने से जो श्रवण हुआ इनमें (चित्र में) अंतर्संबंध स्पष्ट होता जाता है और एक "सम्मिलित चित्र" बनते जाता है ?

उत्तर: वो भी बनता है । वो ठीक है, अभी तक वैसे ही है ।

जिज्ञासा: जैसे मैं सम्पूर्ण दर्शन के प्रत्येक पक्ष को बता पाता हूँ, समझा पाता हूँ । परंतु ये अवधारणा नहीं है? इसे मैं 'अवधारणा' मानूंगा तो यहीं पर रुक जाऊंगा ?

उत्तर: ये अवधारणा नहीं है...ये चित्रण तक चलता है, अवधारणा इसके बाद है | चित्रण के बाद अवधारणा बंता है जीवन में, जीवन गतियाँ, जीवन क्रियाएं, जीवन प्रयोजन - ये सब अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: "अस्तित्व दर्शन" कि अवधारणा में क्या आता है ?

उत्तर: "होना" आता है, होने का अर्थ पूरा आता है

जिज्ञासा: "प्रकृति है, व्यापक वस्तु है" – ये अवधारणा में...

उत्तर: यह आता है

जिज्ञासा: तो 'प्रधान अवधारणा' तो "जीवन कि निरंतरता" ही है ?

उत्तर: वो तो वही है - विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति ये चार भाग में...

जिज्ञासा: ये चार भाग पहले मनन में आयेगा, फिर अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: सुनने में आता है श्रवण में, श्रवण से मनन, निदिध्यासन – यह अध्ययन विधि से । पुनह: अनुभव के बाद 'मनन' होता है – अनुभव का मनन।

जिज्ञासा: 'विकासक्रम में भूखे व अजीर्ण परमाणु होता है' - ये अवधारणा में आ जाएगा ?

उत्तर: ये सब तर्क संगत विधि से आता है, अनुभव के बाद ।

जिज्ञासा: 'विकासक्रम' अवधारणा में आने का क्या तात्पर्य है ? उसमें क्या आएगा ?

उत्तर: विकासक्रम अवधारणा में नहीं आता, चित्रण में ही आता है... जागृतिक्रम, जागृति ही अवधारणा में आता है – यहीं से दो भाग हो गया ।

जिज्ञासा: परन्तु, आपसे ये भी सुना है की "सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति" – जो पाँच सूत्र है, ये सारा साक्षात्कार होगा, ऐसा कहा है ?

उत्तर: यह चित्रण के संयुक्त रूप में होगा ...

जिज्ञासा: इसके सार रूप में ही अनुभव में आ जाएगा ?

उत्तर: अस्तित्व, जागृतिक्रम, जागृति आता है अनुभव में, 'विकास क्रम' चित्रण तक रुक जाता है ।

जिज्ञासा: विकासक्रम अनुभव में आता है ?

उत्तर: अनुभव के बाद समझ आता है ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य यह हुआ, की 'समझने' एवं 'जीने' के सम्पूर्ण वस्तु के रूप में अस्तित्व दर्शन से मानवीय परंपरा तक आपने जो भी लिखा है, यह विचार-चित्रण से लेकर अनुभव तक पूरे जीवन में जो समझ में आता है, इसे लिखा है ?

उत्तर: अनुभव के बाद जो समझ में आता है वो लिखा है ।

जिज्ञासा: 'प्राणकोषा होता है', ये भी अवधारणा कि वस्तु है कि चित्रण तक ही रुक जाता है ?

उत्तर: चित्रण तक तर्कसंगत विधि से आ जाता है ।

जिज्ञासा: इसमें प्राण सूत्र, रचना विधि ये सब चित्रण तक...

उत्तर: यह सब, चित्रण तक – सब तर्क संगत विधि से आ जाता है ।

जिज्ञासा: ये सब आपके बोलने से मुझमें केवल मान्यता बना है, मैंने प्राणकोष को स्वयं 'देखा' तो नहीं है, परन्तु तर्क संगत लगता है?

उत्तर: ठीक है ना...अभी मान्यता के रूप में है, बाद में जीने में प्रमाण ... अनुभव प्रमाण का क्या करोगे ? अनुभव का पैसा से कोई लेन देन नहीं है...हमारा लिखा हुआ पुस्तक का जो पैसा आता है, उसका एक भी हम छूता नहीं हूँ...

जिज्ञासा: 'पदार्थावस्था से ही प्राणावस्था का प्रगटन हुआ', ये साक्षात्कार की वस्तु है या तर्क में आएगा ?

उत्तर: साक्षात्कार के बाद तर्क संगत विधि से आता है । क्योंकी चित्रण में रसायनिक भौतिक वस्तुओं का स्वरूप समाहित रहता है, और उधर से अनुभव आता है, इन दोनों के योगफल में "ऐसा होता है" - ये समझ में आता है, तो अनुभव के साथ तर्क शामिल होता है । अभी अधिक लोग तर्क को पसंद करते हैं, अनुभव को नहीं करते – प्राथमिकता की बात कहें तो!!

जिज्ञासा: 'विकासक्रम' के संदर्भ में अभी जो भी आपसे चर्चा हुआ, उसमें ऐसा बन रहा है, आपमें जो अनुभवमूलक चित्रण हुआ, उसका 'श्रवण' करने से ये तर्क मुझमें स्वीकार हो जाता है, इसके आधार पर विश्वास बनता है, तो मैं आगे उसका अध्ययन करता हूँ...यह ठीक है ?

उत्तर: ठीक है । स्वंय में विश्वास, स्वंय समझदार होने का विश्वास, प्रमाणित करने का विश्वास। ये दो बात के लिए विश्वास, प्रमाणित नहीं होता है, तब तक हम चित्रण में ही हैं ।

जिज्ञासा: जैसे परमाणु है, प्राणकोषा है, ये सब समझने के लिए मैं और सोचूँ की ऐसा मान लूँ की "ये सब अनुभव के बाद ही समझ में आएगा"... ?

उत्तर: वो ठीक है, यह सब आपके अध्ययन में होना चाहिए । अनुभव के बाद प्रयोजन समझ में आता है, प्रयोजन सहज प्रक्रिया समझ आता है, वही व्यवस्था है ।

जिज्ञासा: जैसे पुष्टि तत्व है, रचना तत्व है, उसे मैंने 'देखा' तो नहीं है; फिर भी ठीक लगता है...यह भी अनुभव के बाद ही समझ में आएगा ?

उत्तर: अनुभव के बाद तर्कसंगत विधि से बहुत सारा चीज आ जाता है - इसीलिए इसे संयुक्त रूप में लिखा है ।

जिज्ञासा: जो विकासक्रम के बाद "विकास" है - विकास में क्या ये समझ आता है की 'जड़ ही विकासपूर्वक चैतन्य बना है'... 'विकास' समझने का मतलब गठनपूर्णता समझ में आना ? क्या ये अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: ऐसा ही है । गठनपूर्णता अवधारणा में आयेगा ।

जिज्ञासा: 'जीवन का निरंतरता'; गठनपूर्णता समझ में आने के बाद आता है ?

उत्तर: हाँ, गठनपूर्णता समझने के बाद, उसके पहले नहीं !

जिज्ञासा: मैं पुस्तकों के सीमा से 'अभरना' चाहता हूँ, इसलिए 2 वर्ष बाद, तय्यारी करके अब के बार आपके साथ बैठ रहा हूँ...

उत्तर: अनुभव मूलक विधि से बात करना आता है, तो पुस्तक की जरूरत नहीं होती। हमारे पास पुस्तक कहाँ है ?

जिज्ञासा: आपके पास तो नहीं है पुस्तक ...

उत्तर: पुस्तक की रचना करते हूँ इसलिए, की शिक्षा में आ जाए, शिक्षा में प्रयोजन पूरा हो जाए ... इसलिए लिखता हूँ - हर मनुष्य समझे, परंपरा बने ।

जिज्ञासा: मुझे अपने जिज्ञासा के विधि में क्या सुधार करना है?

उत्तर: प्रश्न-उत्तर में गति बढ़ाना पड़ेगा नहीं तो प्रश्न ही प्रश्न रह जाएगा । उत्तर ज्यादा होना चाहिए, प्रश्न कम होना चाहिए । आदमी जात कहाँ पहुंचा दिया देखो ! 'प्रश्न का अनुसंधान कर रहे हैं' - ऐसा भी सुना है ।

जिज्ञासा: प्रश्न ज्यादा क्यों हो रहा है? मैं ज्यादा विश्लेषण करता हूँ, इसलिए ?

उत्तर: विश्लेषण सब 'puzzle' (पहेली) है, वह कोई 'निश्चय' नहीं है .. अभी आधुनिक शिक्षा पाए हुए लोग, पढे हुए, अनिश्चितता के पक्ष में हैं, अनिश्चयता को ज्यादा विश्लेषण करते हैं, "सुनेगें" नहीं । जबकी, यह "सीधे" श्रवण - मनन - निदिध्यासन - अनुभव की बात है । सुनना है, समझना है, इसी का नाम अध्ययन है । करना है, समझना है, तब तो अनुसंधान है ।

जिज्ञासा: आज सबेरे अस्तित्व, विकासक्रम, विकास पर बात हो गयी...'जागृतिक्रम' के साक्षात्कार में क्या आता है ?

उत्तर: साक्षात्कार होता है जागृतिक्रम का, रासायनिक भौतिक संसार का चित्रण होता है - जीवन का 'अध्ययन' होता है ।

जिज्ञासा: "जागृतिक्रम" किस स्वरूप में साक्षात्कार होता है ? इसमे क्या समझ आता है ?

उत्तर: जीवन व जीवन का कार्यक्रम का ।

जिज्ञासा: जीवों में जो 'जीवनीक्रम' की बात किए हैं क्या ये भी साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: 'जीवों में जीवनीक्रम होता है' - यह साक्षात्कार की वस्तु है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: क्या 'स्वंय के जीवन स्वरूप होने' का साक्षात्कार होने के बाद ही 'जीवों में भी जीवन है', ये मुझे ज्ञान होगा?

उत्तर: जीवन और जीवन क्रियाओं का बोध होता है, अनुभव में आता है।

जिज्ञासा: 'मानव आज तक जीवों से अच्छा जीने का प्रयास किया, मानव ने मनाकर को साकार किया', क्या ये भी साक्षात्कार का बिन्दु हैं ?

उत्तर: नहीं हैं । जीने का जो प्रयास है, शरीर को जीवन मानकर जीते है । ज्ञान (होने) के पहले हम भी ऐसे ही थे, शरीर को तो जीवन मानते रहे... जबकि ये (शरीर) जीवन नहीं है, ये बात ज्ञान होता है, यही बोध में आता है ।

जिज्ञासा: मानव में 'आशा, विचार, इच्छा बंधन होता है' - ये साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: इसमें कुछ साक्षात्कार की वस्तु नहीं है । चित्रण की वस्तु है...ये सारे बंधन रसायनिक भौतिक वस्तुओं के साथ हैं ।

जिज्ञासा: जैसे मुझे अपने में स्पष्ट रूप में दिखता है, की मेरे में विचार बंधन, इच्छा बंधन है...

उत्तर: ये रसायनिक भौतिक वस्तुओं के साथ है ।

जिज्ञासा: ये सारा साढ़े चार क्रिया में निपट जाता है, चित्रण तक ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: भ्रमित मानव में "प्रिय हित लाभ दृष्टियाँ होती है" - क्या यह साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: नहीं। न्याय धर्म सत्य का साक्षात्कार होता है । जीवन में चित्रण तक एक "समझ" है, उसके बाद अनुभव तक एक "समझ" है । प्रिय हित लाभ चित्रण तक समझ में आता है ।

जिज्ञासा: जी । परन्तु, 'प्रिय हित लाभ दृष्टियाँ होती है वृत्ती में', ये तो आपको अनुभव के बाद ही समझ आया ?

उत्तर: हाँ । पहले तो जिक्र ही नहीं है इसका...बहुत सारा बात नहीं है, आध्यात्मवाद में ।

जिज्ञासा: 'वृत्ती में 6 दृष्टियाँ होती हैं, वृत्ति का कार्यस्वरूप' - ये साक्षात्कार ही है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: भ्रमित मानव में 'आहार निद्रा भय मैथुन, यही चार विषय है', यह चार विषयों को स्वंय में पहचानना साक्षात्कार है ?

उत्तर: ये चित्रण है । विषय रासायनिक भौतिक वस्तु है, शरीर जो है रासायनिक भौतिक रचना है, यह चित्रण तक ही है ।

जिज्ञासा: अमानवीय स्वभाव - दीनता हीनता क्रूरता, स्वयं में पहचान लेना ...

उत्तर: ये कोई साक्षात्कार नहीं है । दीनता हीनता क्रूरता अतृप्ति की वस्तु है व धीरता, वीरता उदारता, दया कृपा करुणा तृप्ति की वस्तु है, इसका साक्षात्कार होता है । 'तृप्ति' के संबंध में दूसरे (अमानवीय स्वभाव) का समीक्षा हो जाता है, कलपनशीलता में ही।

जिज्ञासा: मेरा लक्ष्य "जागृति" है ये निश्चित हो गया है, इस लक्ष्य को स्वयं में पहचान लेना साक्षात्कार है ? अर्थात, 'जीवन लक्ष्य जागृति है', इसका पहचान ये साक्षात्कार है ?

उत्तर: नहीं, ये आपका जिज्ञासा है ।

जिज्ञासा: आपने जो दर्शन प्रकट किया, उसके आधार पर मेरे में जागृति की यह जिज्ञासा है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: "जागृतिक्रम" के बाद "जागृति" के साक्षात्कार में क्या आता है ?

उत्तर: जागृति का तो साक्षात्कार ही होगा , उसमे न्यायान्याय धर्माधर्म सत्यासत्य आएगा ।

जिज्ञासा: 'क्रियापूर्णता, आचरणपूर्णता' भी साक्षात्कार में आता है ?

उत्तर: 122 आचरण का साक्षात्कार होता है – भक्ति से लेकर न्याय धर्म सत्य तक साक्षात्कार होता है - अनुभव के बाद ।

जिज्ञासा: "जागृति" का साक्षात्कार का मतलब जीवन में जो भी क्रियाएँ हैं, उसका साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: 'विकसित चेतना' समझ में आता है ।

जिज्ञासा: जैसे जागृत व्यक्ति के सान्निध्य में आने से, "ये व्यक्ति जागृत है" - ये पहचान लेते हैं ...

उत्तर: जब पहचानना चाहेंगे तब होता है... जागृति के बाद ही वास्तविक पहचानना हो पाता है...'जागृत व्यक्ति', 'भ्रमित व्यक्ति' को समझ में नहीं आता।

जिज्ञासा: आप जागृत व्यक्ति है, ऐसा होना हमने तो स्वीकार लिया है... ?

उत्तर: स्वीकार लिया, ये आपकी दया है !! हमारे जैसे जागृत व्यक्तियों को आप स्वीकारेंगे ऐसा कोई नियम नहीं है... !!!

जिज्ञासा: मैं आपको जागृत व्यक्ति के रूप में स्वीकार पा रहा हूँ, ये मुझमें कौन सी क्रिया में हो रहा है....यह पहचानना चित्त में है या वृत्ती में ?

उत्तर: चित्त में । स्वीकारना चिंतन में, अस्वीकार करना चित्रण में होता है । जैसे कई लोग हमें चित्रण से देखते हैं, नकार देते हैं...

जिज्ञासा: मानवीय स्वभाव, "धीरता वीरता उदारता है", क्या ये भी "जागृति" के साक्षात्कार में आएगा ?

उत्तर: न्याय धर्म सत्य का साक्षात्कार होता है, बता तो दिया आपको - 'न्याय' के आधार पर ही धीरता वीरता उदारता है ।

जिज्ञासा: जागृत व्यक्ति का जो परिभाषा आपने दिया है - जब मैं आपका निरीक्षण परीक्षण करता हूँ, तो दिखता है की ये सारी परिभाषाओं के आधार पर ही आप जीते हो । ये जो मैंने आपमें पहचाना, ये साक्षात्कार है ?

उत्तर: यह आपका 'अध्ययन' है । साक्षात्कार इसके आगे है ।

जिज्ञासा: जैसे, आपके आचरण को देखने से कई बार लगता है की "यह आपने करुणा किया, दया किया, धीरता किया, वीरता किया.." ?

उत्तर: ये सब चीज़ें हमारे प्रति आपकी स्वीकृति है ।

जिज्ञासा: ये सब मेरा अनुमान ही है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से क्रियापूर्णता व आचरणपूर्णता का अवधारणा होता है ?

उत्तर: होता है ।

जिज्ञासा: चित्त में जो साक्षात्कार होता है, क्या बुद्धि में 'तक्षण' स्वीकृत होता जाएगा ?

उत्तर: ऐसा ही है ।

जिज्ञासा: जो 5 सूत्र हैं; सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति ये 'स्थिति सत्य' में आता है की ये 'वस्तुगत सत्य' है ?

उत्तर: विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति यह वस्तुगत सत्य; सहअस्तित्व यह स्थिति सत्य; स्वभाव और व्यवहार, वस्तु स्थिति सत्य है।

जिज्ञासा: ये 'तीनों सत्य' अध्ययन विधि से साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: हाँ|

जिज्ञासा: ये 'एक साथ' साक्षात्कार होगा की 'पारी पारी' से ?

उत्तर: एक साथ|

जिज्ञासा: "सत्य" सब एक साथ साक्षात्कार होगा, तो जो "एक के बाद एक, अथवा 'क्रम' से जो साक्षात्कार होने की बात आप कहते हैं, वो क्या है ?

उत्तर: क्रम से, एक के बाद एक - सहअस्तित्व, जीवन, जीवन जागृति ये तीनों अलग अलग अवधारणा में आता है, बोध में इकठ्ठा आता है, अनुभव में ये निश्चित वस्तु ही होता है, सहअस्तित्व ही होता है ।

जिज्ञासा: जो 'अलग अलग' साक्षात्कार होता है इसमे समय का अंतराल भी होता है? जैसे आज कुछ हुआ, 10 दिन बाद कुछ…

उत्तर: वही वही....साक्षात्कार के लिए समय लगता है । ये प्राथमिकता के अनुसार होते जाता है...

जिज्ञासा: आपने अनुषंगीयता की बात की है...

उत्तर: प्रमाणित करने के क्रम में अनुषंगी...अस्तित्व में है, अस्तित्व दर्शन में अनुषंगी है ।

जिज्ञासा: जैसे प्राणावस्था बीजानुषंगी है... ये सामान्य रूप से पेड़ पौधों को देखकर भी स्वीकार हो जाता है । इससे अधिक इसमें कुछ साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: नहीं, यह चित्रण में पूरा हो जाता है । जब पदार्थावस्था रसायनिक वस्तुओं में परिवर्तित होता है तब वो तर्कसंगत होता है।

जिज्ञासा: जीवावस्था वंशानुषंगी है, ये भी उसी विधि से समझ में आएगा ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: पदार्थावस्था में 'परिणामनुषंगीयता' है, परमाणविक स्तर पर जैसे 'परमाणु में मात्रा भेद से गुण भेद होता है' - ये अध्ययन विधि से साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: ये तो चित्रण में पूरा हो जाता है - भौतिक रसायनिक दोनों वस्तु ।

जिज्ञासा: 'नियम नियंत्रण संतुलन' का अध्ययन विधि से साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: हाँ । बता तो दिया, नियम-नियंत्रण-संतुलन, न्याय-धर्म-सत्य 6 चीज, साक्षात्कार होता है ।

जिज्ञासा: नियम-नियंत्रण-संतुलन इकठ्ठा साक्षात्कार होता है, की क्रम से ?

उत्तर: नियम नियंत्रण संतुलन चारों अवस्था के साथ साक्षात्कार है, ये समझना पड़ेगा; न्याय धर्म सत्य मनुष्य के आचरण के रूप में है ...

जिज्ञासा: क्या व्यापक वस्तु के होने से ही नियम नियंत्रण संतुलन है ?

उत्तर: व्यापक वस्तु <u>में</u> होने के आधार पर, व्यापक वस्तु में कोई 'विकार' नहीं होता, सारा विकार प्रकृति में होता है चारों अवस्था में ।

जिज्ञासा: पदार्थावस्था में जो क्रियाशीलता है, ये सामान्य रूप में भी हमको स्वीकार हो जाता है ?

उत्तर: प्रत्येक वस्तु का भास् आभास होता ही है ... चाहत के रूप में सबको जागृति स्वीकार होता है, क्रिया के रूप में पदार्थावस्था स्वीकार होता है ।

जिज्ञासा: आत्मा और बुद्धि 'गति' का दृष्टा बनता है क्या ? अध्ययन विधि में क्या बुद्धि 'गतियों' का दृष्टा बनता है ? जैसे - 'अस्तित्व में गति हो रहा है'; ये चित्रित तो होता है मुझमें ।

उत्तर: ये चित्रण में भी आता है, बुद्धि में भी आता है । 'जीवन का गति' - बुद्धि में आता है, 'प्रकृति का गति' - चित्रण में आता है ।

जिज्ञासा: 'प्राणावस्था स्पंदनशील है' - ये साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: नहीं । यह चित्रण तक आता है ।

जिज्ञासा: स्पंदनशीलता को कैसे पहचानेंगे - स्वंय के ही शरीर में यह पहचान में आ जाता है ?

उत्तर: प्राणावस्था का स्वंय के शरीर में भी पता चलता है, एक वनस्पति के पत्ते में भी पता लगता है और झाड़ों में भी पता लगता है ।

जिज्ञासा: मात्र आँखों से देखने से तो पता नहीं लगता की ये 'स्पंदनशील' है ?

उत्तर: पहले अध्ययन करना होगा, फिर जीना होगा, तब पता लगता है ।

जिज्ञासा: 'जीवों में संवेदनशीलता है' - ये साक्षात्कार की वस्तु है?

उत्तर: ये साक्षात्कार की वस्तु नहीं है, चित्रण की वस्तु है ।

जिज्ञासा: 'मानव में संज्ञानशीलता है' - ये साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: 'वस्तुगत सत्य' साक्षात्कार होने का क्या ये तात्पर्य है, की प्रत्येक इकाई में रूप-गुण-स्वभाव-धर्म, 'अविभाज्य' है, ये समझ में आना ?

उत्तर: हाँ, उतना ही बात है ।

जिज्ञासा: यह समझने के लिए आपके दिए परिभाषा के श्रवण मनन से होता है ?

उत्तर: वह पर्याप्त है ।

जिज्ञासा: पदार्थावस्था में जो "अस्तित्व धर्म" कहा है, उसकी जो परिभाषा दिया है, उसमें "होने" के साथ 'विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति' भी परिभाषा में आया है । इसका तात्पर्य 'पांचो सूत्र' मिलाकर "अस्तित्व धर्म" है ?

उत्तर: हाँ । पूरा अस्तित्व, सत्ता में संपृक्त प्रकृति |

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य यह हुआ, की "अस्तित्व धर्म" में सत्ता का 'होना' और प्रकृति का 'प्रगटन', ये दोनों है

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: 'इकाई व्यापक वस्तु में बदलता नहीं' - ये साक्षात्कार में स्पष्ट हो जाएगा या अनुभव में ही स्पष्ट होगा ?

उत्तर: इकाईयां परिवर्तित होते हैं, नाश नहीं होते। अध्ययन विधि से चित्रण में आ जाता है ।

जिज्ञासा: आपने कहा है की "भीगे रहने" का अनुभव होता है - तो भीगे रहने के अनुभव होने के साथ ही ये ज्ञान होगा की 'प्रकृति व्यापक वस्तु में परिवर्तित नहीं हो रहा है'... क्या उसका 'अंतिम बिन्दु' अनुभव में है ?

उत्तर: ये स्वाभाविक है । ज्ञान अवस्था एक अवस्था है, ये पता चलता है ।

जिज्ञासा: प्रकृति की अविनाशियता भी अनुभव में ही आएगा ?

उत्तर: अनुभव में समझ में आता है – सहअस्तित्व समझ में आता है, बता तो दिया!

जिज्ञासा: प्राणावस्था में पुष्टि धर्म साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: नहीं । मनुष्य की तृप्ति का साक्षात्कार होता है ।

जिज्ञासा: 'पुष्टि धर्म' - चित्रण में ही आ जाता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: पुष्टि धर्म में 'पुष्ट' क्या हो रहा ? प्राणसूत्र ?

उत्तर: प्राण सूत्र और रचना का होना, पुष्टि ।

जिज्ञासा: रचना 'पुष्ट' हो रहा है ये तो सामान्य रूप से भी दिखता है...

उत्तर: प्राणसूत्र के बिना रचना नहीं है ।

जिज्ञासा: परन्तु आपसे पहले सुना है की "चारों अवस्थाओं का धर्म अनुभव में आता है"... तो पुष्टि धर्म भी अनुभव में आना चाहिए ?

उत्तर: अनुभव ज्ञान होने से पुष्टि धर्म समझ में आता है

जिज्ञासा: इसका मतलब यह अनुभव मूलक जीवन में चित्रण के रूप में आता है ?

उत्तर: हाँ, चित्रण के रूप में आता है

जिज्ञासा: इस धरती के अलावा जो अन्य धरतीयां है, क्या वहाँ भी प्राणकोषा का स्वरूप ऐसा ही है, जैसा इस धरती पर है ? उनमे भी प्राणसूत्र, पुष्टितत्व, रचनातत्व यह सब मिलेगा ?

उत्तर: कहीं भी होगा, यही है ।

जिज्ञासा: 'प्राण सूत्र, रचना विधि, रचना तत्व' को समझना ये "रूप गुण" की सीमा में है, या "स्वभाव धर्म" की सीमा में ?

उत्तर: प्राण सूत्र का जो बात है, वह तर्क से समझ में आता है । स्वभाव धर्म अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: मानव का सुखधर्मी होना क्या ये अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: ये तो सामान्य रूप में भी स्वीकार हो जाता है... तो 'सुखधर्मीयता' का भास, आभास, प्रतीति, अनुभूति चारों हो

जाएगा?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: क्या "वस्तु स्थिति सत्य" का भी साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: वस्तु स्थिति सत्य के रूप में भी मानव में सुख धर्म है, यह पता लागता है । अध्ययन में चारों अवस्था का होना, ये पता लगने के बाद, होता है । अध्ययन विधि से चारों अवस्था का अध्ययन होने के बाद होने से होता है यह।

जिज्ञासा: आपने इसको (वस्तु स्थिति सत्य को) "देश दिशा काल" ऐसे परिभाषित किया है । क्या इसमें "देश", व्यापक वस्तु समझ में आने के बाद ही समझ में आएगा ?

उत्तर: हाँ, उसके पहले नहीं आएगा । ये सब अनुभव के बाद स्पष्ट होने वाली बात है ।

जिज्ञासा: क्या बुद्धि में काल होता है, या बुद्धि काल का दृष्टा होता है ?

उत्तर: चित्रण से ही समझ लेते हैं, काल को ।

जिज्ञासा: बुद्धि और आत्मा केवल 'वर्तमान' का ही दृष्टा होते हैं ?

उत्तर: हाँ ।

सत्य/जीवन

जिज्ञासा: अपने अध्ययन में दिखता है की 'अस्तित्व दर्शन' सम्बन्धी सारी वस्तुएँ कल्पनाशीलता पूर्वक तर्क में आ जाता है, परन्तु 'जीवन ज्ञान' होने में गति को कैसे बढ़ाया जाये ?

उत्तर: अस्तित्व में ही जीवन ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण समझ में आता है । उसको जागृति के साथ जोड़कर लिखा है । जीवन ज्ञान ही प्रधान है ।

जिज्ञासा: जीवन क्रियाओं के बारे में आपने जो लिखा है उसे मैंने पढ़कर सोच तो लिया है, उसको 'क्रियारूप' मे अपने में पहचानने के लिए गति को कैसे बढ़ाया जाये?

उत्तर: जीवन का अनुभव होने से होगा ।

जिज्ञासा: जीवन या 'स्वंय को जीवन स्वरूप' में साक्षात्कार करने के लिए तरीका अध्ययन विधि से निरीक्षण परीक्षण ही है ?

उत्तर: हम अपने निरिक्षण परीक्षण करने से होता है, जो दुसरे आदमी का परीक्षण करने जाता है, वह आदमी फस जाएगा । "हम जीवन ज्ञान के बिना सटीक जी नहीं पाएंगे", यह आने से जीवन ज्ञान के लिए प्राथमिकता बनता है ।

जिज्ञासा: जीवन क्रियाओं की परिभाषा के अनुसार 'अपनी ही क्रियाओं का निरीक्षण परीक्षण करने' से ही जीवन समझ में आएगा ?

उत्तर: हाँ। इसीलिए लिखा है ।

जिज्ञासा: इस सन्दर्भ में आपने 'जागृति विधि साधना' नाम से लेख लिखे हैं, जिसमें वृत्ति, चित्त, बुद्धि एवं आत्मा क्रमश: दृष्टा होने की बात है | क्या इसी अर्थ में है ?

उत्तर: वही है |

जिज्ञासा: जैसे 'वृत्ती मन का व चित्त वृत्ती का दृष्टा होता है', ये सारा मैंने 'श्रवण' तो कर लिया है, पर स्वंय में ये दृष्टा कैसे बनेगा?

उत्तर: इच्छा के अनुसार ।

जिज्ञासा: 'स्वंय को जीवन रूप में देखने' की क्षमता को कैसे बढाऊं ? इच्छा को प्रबल कैसे बनाऊ?

उत्तर: तुलन विधि से, न्याय धर्म सत्य का तुलन से पता लगता है...उसी से होता है । जीवन की महिमा क्या है, ताकत क्या है, पता लगता है ।

जिज्ञासा: क्या 'जीवन' को समझने के लिए किसी जागृत व्यक्ति का सान्निध्य चाहिए? केवल पुस्तक पढने से तो जीवन समझ में नहीं आएगा ?

उत्तर: साहित्य को समझने के लिए मनुष्य चाहिए । आदमी को आदमी ही समझाएगा, समझने वाला जिज्ञासु होना चाहिए, तब समझाने वाला सफल होता है, अन्यथा नही होता है ।

जिज्ञासा: 'जीवन स्वरूप' में स्वंय को पहचानने के लिए ये अड़चन लगता है की अभी तो मैंने अपने अस्तित्व को शरीर के साथ जोड़कर मानकर रखा है

उत्तर: इसी लिए कुछ समझ में नहीं आता है !!! जीवन को अलग समझना ही पड़ेगा ... 'जीवन शरीर चलाने वाला है', ऐसा समझना ही पड़ेगा !

जिज्ञासा: जीवन संबंधी सूचनाओं को अपने में 'बारंबार दोहराने' से इसमे मदद मिलेगा ?

उत्तर: हाँ, बिलकुल मदत होगा ... वही विधि है ।

जिज्ञासा: 'शरीर में कर्मेन्द्रिय व ज्ञाननेंद्रियौ का मैं द्दष्टा हूँ' - ये बार बार देखने का अभ्यास उपयोगी है ?

उत्तर: हाँ । कर्मेन्द्रिय ज्ञाननेंद्रियों द्वारा मानव जीवन के लक्ष्य के अनुसार काम करना है ।

जिज्ञासा: इस बीच में पांचों संवेदनाओं का आस्वादन अपेक्षा तो बना ही रहता है, तो जब तक शरीर से तदाकार होकर आस्वादन में लगे रहेंगे, तब तक 'जीवन' भी समझ में नहीं आएगा, ऐसा लगता है...

उत्तर: जीवन समझ में आए बिना संवेदनाओं का नियंत्रण होगा नहीं, किसी का नहीं होगा! जीवन शक्तियों को समझने के बाद वो संतुष्ट होने के बाद, संवेदनाएँ नियंत्रित होती है ।

जिज्ञासा: तब तक संवेदनाएँ अनियंत्रित ही रहेगी ?

उत्तर: तब तक मनमानी रहता है ।

जिज्ञासा: भारत में एक पुराना मान्यता रहा है की आस्वादन अपेक्षा गलत है ? क्या इसको दमन करना होगा ?

उत्तर: आस्वादन अपेक्षा स्वास्थ्य के अर्थ में ठीक है, इसके लिए स्वास्थ्य का ज्ञान होना पड़ेगा ।

जिज्ञासा: अस्वादन के 'उपेक्षा' से कुछ नहीं होगा ?

उत्तर: नहीं, दबाने से कुछ काम नहीं चलता, दमन करने से कुछ नही होता ।

जिज्ञासा: 2010 के एक संवाद में आपने कहा था, की 'अनुभव में ही जाकर जीवन का शरीर से दूरी पता चलता है, साक्षात्कार में नहीं' ?

उत्तर: दूरी का मतलब ही नहीं है, साक्षात्कार में ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जब जीवन का साक्षात्कार होता है, तो उसमें क्या स्पष्ट होगा ?

उत्तर: शरीर के स्वास्थ्य के बारे में, पांचों संवेदनाओं का उत्तर मिलता है ।

जिज्ञासा: एक जगह आपने लिखा है "इंद्रिय संयोग के अर्थ का साक्षात्कार होता है", क्या यही है?

उत्तर: इंद्रियों को नियंत्रित करने के अर्थ में साक्षात्कार होता है, अनुभव के बाद इंद्रियों के संयम के लिए, नियंत्रण के लिए ज्ञान होता है ।

जिज्ञासा: क्या अध्ययन विधि से साक्षात्कार में 'गठनपूर्णता' आ जाता है .....

उत्तर: गठनपूर्णता का अनुभव करने से ये नियंत्रण की बात आती है...

जिज्ञासा: 'जीवन गठनपूर्ण स्वरूप में है' - ये अवधारणा में आता है ?

उत्तर: ये अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: इस सन्दर्भ में आपने कहा था की 'इसके पूर्व में परमाणु का साक्षात्कार होना आवश्यक है' ?

उत्तर: चित्रण के रूप में जड़ परमाणु का ज्ञान हो जाता है, उसके बाद अनुभव विधि से जीवन परमाणु का अनुभव होता है ।

जिज्ञासा: जड़ परमाणु के बारे में आपने जो कुछ लिखा है, उसके आधार पर मैं उसे चित्रित करने का प्रयास ही कर सकता हूँ...अनुभव के पहले...

उत्तर: जीने के अर्थ में

जिज्ञासा: आपने एक संवाद में कहा था, "अध्ययन विधि में गठनपूर्ण परमाणु है, इसकी ये ये महिमाएँ, प्रक्रियाएँ हैं ये सब बोध हो जाता है"...

उत्तर: बुद्धि को बोध होता है, अनुभव जीवन परमाणु का ही होता है ।

जिज्ञासा: क्या 'स्वंय का ही गठनपूर्ण स्वरूप' होना अवधारणा में आ जाएगा?

उत्तर: हाँ|

जिज्ञासा: आपने यह भी कहा था - "परमाणु के ज्ञान के बिना गठनपूर्णता का कल्पना भी नहीं आता है" - क्या ये भौतिक परमाणु की बात कर रहे हैं आप ?

उत्तर: जीवन को समझे बिना गठनपूर्णता बताना बंता नहीं ।

जिज्ञासा: जीवन ज्ञान के सन्दर्भ में आपने कहा था की "पहले आचरण को लेकर स्वीकृतियाँ होती है शुद्ध संस्कृति का, उसमें हमारा जीवन और शरीर का ज्ञान होता है, संस्कार के आधार पर"

उत्तर: संस्कार क्या है... आचरण; और आचरण ही संस्कार है...

जिज्ञासा: क्या 'मानवीय आचरण' का जो अवधारणा बनेगा; उसके आधार पर भी 'जीवन ज्ञान' का रास्ता खुलता है ?

उत्तर: अनुभव के बाद जीवन को स्पष्ट करना बनता है, इतने को रखो । अध्ययन विधि को अनुभव मूलक विधि से प्रस्तुत किए रहता है, इसलिए होता है ।

जिज्ञासा: जैसे, अध्ययन विधि में 'नियम' और 'आचरण' - इन चीजों का साक्षात्कार होगा, उसी से जीवन ज्ञान का भी रास्ता खुलेगा ?

उत्तर: ठीक है यह ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जैसे 'आभास' में वृत्ति का प्रत्यावर्तन होता है, वैसे ही 'साक्षात्कार' में चित्त का प्रत्यावर्तन होता है ?

उत्तर: हाँ, होता है ।

जिज्ञासा: जब चित्त का प्रत्यावर्तन होता है तब क्या चित्त, बुद्धि को 'पहचानता' है ?

उत्तर: हाँ ,चित्त, बुद्धि और आत्मा को पहचानता है ।

जिज्ञासा: अनुभव होने के पहले ही? उस समय आत्मा में अनुभव नहीं रहता है ?

उत्तर: अनुभव होने में समय रहता है, उसी समय से चित्त, बुद्धि और आत्मा को पहचानता शुरू कर देता है ।

जिज्ञासा: क्या चित्त में साक्षात्कार का दृष्टा आत्मा रहता है ? - यही अध्ययन के परिभाषा में 'अधिष्ठान का साक्षी' है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: क्या साक्षात्कार में चित्त जो है, 'बुद्धि की वस्तु' को ही पहचानता है ?

उत्तर: बुद्धि का (अलग से) कोई वस्तु होता ही नहीं है... अवधारणा ही बुद्धि में आता है, और अवधारणा ही अनुभव में जाता है ।

जिज्ञासा: 'प्रकृति और स्वंय की निरंतरता' वाली बात अवधारणा मे ही स्पष्ट होगी ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: इसका मात्र कल्पना और तर्क रहने से ...

उत्तर: वो केवल सुनने के अर्थ में है। अनुभव के बिना बताया नहीं जा सकता... authenticity (प्रामाणिकता) से यदी बात करना हो, अनुभव मूलक विधि से ही हो पाता है ।

जिज्ञासा: अस्तित्व दर्शन, जीवन और आचरण की जो साक्षात्कार है, ये एक के बाद एक क्रमशः होता है...जैसे एक खुलने से दूसरा खुलेगा ?

उत्तर: हाँ । अवधारणा आचरण मे नहीं आता है, 'अवधारणा' ही रहता है । अनुभवमूलक विधि से ही अवधारणाएँ आचरण में प्रमाणित होता है ।

जिज्ञासा: 'न्याय' व 'मानवीयता पूर्ण आचरण' पहले अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: ये अवधारणा में नहीं आता, अनुभव के बाद व्यवहार में आता है ।

जिज्ञासा: बाबाजी, जैसे मानवीयता का अवधारणा होगा, तो इसका प्रतीति पूर्वक तो जियेंगे?

उत्तर: प्रतीति ठीक है | अभ्यास के रूप में रहता है, प्रमाण नहीं |

जिज्ञासा: जब स्वभाव-धर्म का साक्षात्कार होता है, उसमे मानवीय स्वभाव का भी साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: होगा, मानवीय स्वभाव का ही साक्षात्कार होगा, जीवों का नहीं । मानव का ही जीवन का, आचरण का साक्षात्कार होता है ।

जिज्ञासा: जैसे जीवों का स्वभाव क्रूर-अक्रूर है, यह साक्षात्कार नहीं होता ?

उत्तर: वो तो तर्कसंगत विधि से बता दिये , मानव की क्रूरता को जीवों से जोड़ दिये ।

जिज्ञासा: इसका मतलब चारों अवस्थाओं के स्वभाव में से, सिर्फ 'मानवीय स्वभाव' का ही साक्षात्कार होता है बाकी तीनों अवस्थाओं का स्वभाव चित्रण में ही समाप्त हो जाता है ?

उत्तर: पदार्थ, प्राण व जीवों का स्वभाव तर्क संगत विधि से आ जाता है, चित्रण तक ।

जिज्ञासा: अनुभावात्मक आध्यात्मवाद में आपने लिखा है की 'अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था को जानने, मानने, पहचानने, निर्वाह करने के आशयों से अवधारणा सहज रूप में ही जीवन स्वीकार हो जाता है'

उत्तर: बहुत बढ़िया, ठीक लिखा है !

जिज्ञासा: मतलब अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था को समझने के क्रम, में जीने के आशय में, ही जीवन भी स्पष्ट हो जाएगा ?

उत्तर: अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था चित्रण में होता है, अनुभव के बाद चारों अवस्था का चित्रण होता है, अभी जीवों का चित्रण होता है ... अभी तक जो हुआ है, जीवों के सदृश्य जीने का चित्रण है ।

जिज्ञासा: कुछ लोगों को 'शरीर से भिन्न कोई चीज़ है' - यह दिख जाता है, जैसे भूत प्रेत वगेरह को देख लेते हैं ...

उत्तर: वो भूत प्रेत को पालने वाला ही करता है…

जिज्ञासा: ये सब को देखना जीवन ज्ञान के लिए कोई मदद नहीं करता ? अर्थात, शरीर से भिन्न कोई वस्तु है, इसपर विश्वास होने में मदद करता है?

उत्तर: कुछ नहीं । ये सब बर्बाद होने का काम करता है... भूख से मरा हुआ भूत, पीड़ित होकर मरा हुआ प्रेत ।

जिज्ञासा: अनुभावात्मक आध्यात्मवाद में लिखा है "जीवन में होने वाली सामान्य क्रियाएँ शक्ति और बल के रूप में अध्ययन से बोध और निश्चयन होता है"... मतलब 'बल' और 'शक्ति' साक्षात्कार होने के लिए, हमें प्रत्यावर्तन-परावर्तन क्रियाओं को पहले समझना पड़ेगा जीवन में ?

उत्तर: वो तो अध्ययन विधि से है, बता दिया । अनुभव के पहले परावर्तन करना बेवकूफी है … बात तो कर सकते हैं पर कोई निश्चय नहीं कर पाएंगें, निश्चय करने की स्थिति अनुभव के <u>बाद</u> ही होता है |

जिज्ञासा: जीवन में जो प्रत्यावर्तन परावर्तन क्रिया है इसी को आपने बल और शक्ति कहा है ना ?

उत्तर: अनुभव के बाद ग्रहण करना प्रत्यावर्तन, प्रस्तुत करना परावर्तन ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से ये (प्रत्यावर्तन-परावर्तन) अवधारणा में कैसे आएगा ?

उत्तर: अध्ययन विधि से अवधारणा होता है, बोध होता है । अनुभव होने की बाद होता है यह ... आप अनुभव से <u>पहले</u> चाहते हो इसे ! हम सब अनुभव के बाद लिखा हूँ – परावर्तन प्रत्यावर्तन ।

जिज्ञासा: 'जीवन में बल-शक्ति होता है' - ये अध्ययन विधि से अवधारणा में आता है या नहीं ?

उत्तर: बल और शक्ति अवधारणा में ही आएगा, अनुभव के पहले ।

जिज्ञासा: आपसे सुना है वृत्ती मन का, व चित्त वृत्ती का दृष्टा होता है तो "मन वृत्ती चित्त क्रियाएँ होती है" ये भी साक्षात्कार में आएगा ?

उत्तर: अवधारणा में ये क्रियाएँ नहीं आएगा, वो अनुभव के बाद समझ में आता ।

जिज्ञासा: अवधारणा में 'स्वंय का निरंतर होना' - इतना ही आएगा ?

उत्तर: आता है ।

जिज्ञासा: जैसे चयन आस्वादन होता है...

उत्तर: वो नहीं आता, चयन करना अभी अभ्यस्त है, इसीलिए होता है । अभी अध्ययन में चयन में इतना ही है, न्याय धर्म सत्य को चयन करना... इससे अनुभव तक पहुँच जाएंगें अन्यथा नहीं पहुंचेगें ।

जिज्ञासा: (अध्ययन) लक्ष्य मूलक और मूल्य मूलक आस्वादन से ही होगा ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: दर्शन के संपर्क में आने के पहले 'मुझमें चित्रण क्रिया होता है' यह लगता नहीं था अब इसको शोध करते करते लगता है , मैं विश्लेषण भी करता हूँ, मुझमें चित्रण भी होता है ।

उत्तर: विचार और चित्रण तो अब करते ही रहे, वो तो होता ही है, वेद विचारों का चित्रण हम (साधना से पहले) करते ही रहे ।

जिज्ञासा: अभी श्रवण मनन विधि से इतना पहचान में आता है कि मुझमें ये ये (क्रियाएँ) हो रहा है ।

उत्तर: "श्रवण मनन निदिध्यासन" ये वेद विचार का दिया भाषा है... निदिध्यासन में अवधारणा होता है, ये हमारा दिया हुआ भाषा है; निदिध्यासन में पंडित होता है ऐसा पहले के परंपरा में लिखा है, हम लिखते हैं, अनुभव में पंडित होता है - दोनों में दूरी इतना ही है !!

जिज्ञासा: मेरी अभी की जो स्थिति है, उसमें मुझमे जो परावर्तन क्रिया है - जैसे चित्रण है, विश्लेषण, चयन है...

उत्तर: वो ठीक है, कल्पना के रूप में सही है, अनुभव के रूप में नहीं है ।

जिज्ञासा: इसमें जो स्थिति क्रिया है जैस 'तुलन' मुझमें होता है ...

उत्तर: लिखा हुआ को प्रस्तुत करते हो ...

जिज्ञासा: ये क्रियाएं 'सीधे-सीधे' तो मुझे नहीं दिखता…

उत्तर: धीरे धीरे दिखेगा, अनुभव के बाद सब दिखेगा … 'अनुभव' के लिए प्रयत्न कब किया आपने, इसका भी आकलन करो…

जिज्ञासा: मतलब ज्यादा परावर्तन में गया हूँ, प्रत्यावर्तन में कम गया हूँ ?

उत्तर: कम गया… प्रत्यावर्तन में सुना है, समझा नहीं है, समझना ही प्रत्यावर्तन है, सुनना प्रत्यावर्तन नहीं है…प्रत्यावर्तन रहता तो अवधारणा हो जाता है, अभी अपन अनुभव के लिए बात करते…!!!

जिज्ञासा: मुझे अवधारणा नहीं है, यह तो स्पष्ट है | एक और वाक्य आया है - "जीवन शक्ति और बल भी अपने में अक्षय होना जीवन क्रिया और उसकी निरंतरता समझ में आता है, और अवधारणा सुदृड होता है" ।

उत्तर: वो जीवन की निरंतरता के लिए source (स्रोत) बताया …

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में 'जीवन की निरंतरता' - ये चित्त में साक्षात्कार हो जाता है ?

उत्तर: हाँ, अवधारणा के रूप में आ जाता है ।

जिज्ञासा: "मैं अमर हूँ" - ये इसी के साथ आएगा ?

उत्तर: अध्ययन से…

जिज्ञासा: अध्ययन से जीवन का अविनाशियता भी समझ में आ जाता है ?

उत्तर: जीवन अविनाशी है, इस बात को समझ लेता है, अवधारणा में .. | अवधारणा में ' जीवन अलग वस्तु है', 'शरीर' अलग वस्तु है' यह साक्षात्कार होता है । इसपर विश्वास होता है ।

जिज्ञासा: इसी सन्दर्भ में आपके एक लेख में आया है:'जीवन का अमरत्व' चित्त में पहचान में आता है, साक्षात्कार होता है । इसी प्रकार शरीर का नश्वरत्व तथा व्यवहार के नियम भी चित्त में ही पहचाने जाते हैं । जीवन पर विश्वास के लिए जीवन का चित्त में साक्षात्कार होने पर शरीर के प्रति मोह टूट जाता है । जीवन शरीर का पोषण संरक्षण करता है । जीवन को शरीर मानना जीवन का अवमूल्यन है, जो कुंठा, आदि का कारण है ”

उत्तर: वही बात है । जीवन का साक्षात्कार बहुत आवश्यक है ।

जिज्ञासा: जीवन का होना, स्वयं का निरंतर होना, इसका स्पष्ट पहचान के बिना 'न्याय, धर्म, समाधान' कोई स्पष्ट नहीं होगा, ऐसा लगता है ...

उत्तर: कुल भ्रम इतना ही तो है – शरीर को जीवन मान लेना ।

जिज्ञासा: इसमें 'स्वंय के जीवन स्वरूप' में होने को बारम्बार कल्पना करते रहने से भी अवधारणा होने में मदद मिलेगा क्या ?

उत्तर: हर समय, हर परिस्थिति में मदत मिलता है ।

जिज्ञासा: इसी रूप में 'व्यापक वस्तु के होने' पर ध्यान को निरंतर बनाये रखने से मदत मिलता है...

उत्तर: सच्चाई पर निरंतर ध्यान देना...सच्चाई का सूचना बारम्बार हमारे मन में पहुँचते रहना... । व्यापक वस्तु पर बारम्बार ध्यान, जीवन, जीवन क्रिया पर ध्यान ।

जिज्ञासा: जैसे जीवन के स्वरूप में अपने को कल्पना करूँ तो उसमें हांथ पैर वगेरह होता नहीं... केवल पून्जाकर होता है... तो अपने बारे में ऐसा सोचने में मदद मिलेगा?

उत्तर: नहीं, ये तो नियति विधि से रासायनिक भौतिक क्रिया बनी हुई है, शरीर के रूप में...

जिज्ञासा: जैसे, अभी मैं अपने आप को इस आकृति के रूप में ही पहचानता हूँ ये जो शरीर है, इसके साथ ...

उत्तर: शरीर नियति विधि से समझ में आता है अनुभव के बाद, अनुभव के बिना नहीं होता है । यही तो जकड़फन्दा है... 'शरीर के साथ जीवन' है की 'जीवन के साथ शरीर' है ? ये आज तक कहाँ तय हुआ ? । शरीर है, जीवन है - जीवन शरीर को चलाता है, जब तक चलाता है जीवित दिखता है जब शरीर को छोड़ देता है, मरा हुआ मानते हैं ।

जिज्ञासा: 'मैं शरीर से भिन्न हूँ' - इसको बारंबार दोहराने से मदद मिलेगा ?

उत्तर: ये दो अलग अलग है, इसको स्वीकारना ही होगा। स्वीकारने के लिए कितना करना है आप ही सोच लो !

जिज्ञासा: इसमें अपने ही 'सांस को देखना' या 'सम्वेदानाओं को देखने' में कोई मदद नहीं मिलेगा ?

उत्तर: ये तो ज्ञान की बात है... ज्ञान अनुभव में पूरा होता है और अध्ययन से समझ में आता है ।

जिज्ञासा: जीवन समझने के लिए, "अपने ही सांस को देखने" का अभ्यास कोई काम करेगा ?

उत्तर: नहीं ! अध्ययन से !!

जिज्ञासा: जैसे "शरीर से संवेदना आ रहा है, इसे मैं देखते रहूँ" - यह अभ्यास मदत करता है ?

उत्तर: अध्ययन !!! पचास बार ढपला बजा चुके हैं – अध्ययन से ही होता है !!!

जिज्ञासा: एक जगह आपने लिखा है "शरीर रचना और शरीर सीमाओं के संदर्भ में भले प्रकार से पारंगत होना जीवन को जानने मानने के क्रम में एक आवश्यकता है"

उत्तर: शरीर को स्वस्थ रखने के लिए जितना अध्ययन चाहिए, वो अध्ययन से प्राप्त करना चाहिए ।

जिज्ञासा: शरीर कैसे काम करता है ये सारा समझ लेना चाहिए ?

उत्तर: हाँ , अभी तक शरीर कैसे काम करता है वो विदेशों में तय हुआ –ऐसा सुनते हैं । हमारे देश में औषधी तय हुआ, इसको (आयुर्वेद को) हम पढ़ा हूँ ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में स्वंय का निरंतर होना और गठनपूर्ण होना ये दोनों अवधारणा में आ जाता है ?

उत्तर: अवधारणा में आता है, अध्ययन में आता है |

जिज्ञासा: यहाँ पर "अध्ययन में आता है" का मतलब श्रवण मनन में आता है ?

उत्तर: हाँ । निदिध्यासन में अवधारणा होता है... ये वैदिक विचार के अनुसार नहीं है, ये हमारा दिया हुआ (परिभाषा) है

जिज्ञासा: "मैं आत्मा हूँ और यह मेरा है" - यह आत्मा में, अनुभव में ही स्पष्ट होगा ?

उत्तर: जीवन में मध्यंश ही अनुभव करता है, इसके आधार पर "मैं आत्मा हूँ" ।

जिज्ञासा: ये अनुभव में ही स्पष्ट होगा ?

उत्तर: हाँ, अनुभव से ही होगा । अध्ययन से बोलना बनता है ।

जिज्ञासा: और अवधारणा में 'स्वंय को चैतन्य प्रकृति' के रूप में पहचान लेंगें ?

उत्तर: अनुभव से ।

जिज्ञासा: और अवधारणा में ?

उत्तर: अनुभव से | अवधारणा, जीवन का एक अंग है, जीवन का ही एक प्रक्रिया है, ये समझ में आता है

जिज्ञासा: 'मेरे में यह क्रियाएँ हैं', 'ये सारा क्रियाएं मुझसे अविभाज्य है' - ये भी अवधारणा में आयेगा ?

उत्तर: हाँ, आता है ।

जिज्ञासा: बुद्धि में 'स्वंय की निरंतरता' को स्वीकारे बिना, "मानवीय आचरण का अवधारणा" बन सकता है?

उत्तर: मानवीय आचरण समझ में आने के बाद इसकी निरंतरता समझ में आती है, अनुभव की ...

जिज्ञासा: जैसे वृत्ती मन का दृष्टा होता है, और चित्त वृत्ती का दृष्टा होता है तो चित्त को मन की क्रियाओं का भी पता चल जाता है क्या ?

उत्तर: वो तो स्वाभाविक है... मन का दृष्टा वृत्ति, वृत्ती का चित्त, चित्त का बुद्धि और बुद्धि का दृष्टा आत्मा होता है

जिज्ञासा: इसका मतलब आत्मा 'नीचे के' सभी क्रियाओं का दृष्टा हो जाता है ?

उत्तर: हो जाता है, चित्त बाकी दोनों (वृत्ति और मन) का दृष्टा है ।

जिज्ञासा: चित्त में जो चित्रण हो रहा है, ये भी 'आत्मा' को पता चलता है ?

उत्तर: चित्रण में विचार क्या है, मन क्या कह रहा है, ये दोनों निहित रहता है ।

जिज्ञासा: आपमें ये चीज़ें हर समय बनी हुई है ? हर समय आपको पता चलता है की 'आपके जीवन के कौन से क्रिया में क्या हो रहा है' ?

उत्तर: हाँ , जागृत व्यक्ति को सब क्रिया का पता रहता है ।

जिज्ञासा: जैसे 122 आचरण आपने बताएं हैं, ऐसे 122 आचरण का हर क्षण आपको पता रहता है, अपने आप में ?

उत्तर: सब साक्षात्कार रहता ही है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जीवन का जो साक्षात्कार होता है उसमें 'स्वंय का क्रिया समुच्चय' होना, ये साक्षात्कार में आ जाता है क्या ?

उत्तर: स्वंय के जीवन को देख लिया तो उसमें और कुछ नहीं बचता ।

जिज्ञासा: अनुभव दर्शन में आया है "मैं आत्मा हूँ, और यह मेरा है" - इसमें "यह" में बाकी सारा प्रत्यावर्तन और परावर्तन क्रिया समाया है क्या ?

उत्तर: दोनों समाया है ।

जिज्ञासा: "प्रामाणिकता" की शक्ती "मैं" में शामिल है या "मेरे" में ?

उत्तर: 'मैं' ही प्रमाणित होता है ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य "द्दष्टा" के रूप में अनुभव (आत्मा) ही रहता है, वो प्रमाणित होता है ?

उत्तर: वो प्रामाणित होना, संसार के लिए ...

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से 'जीवन' का साक्षात्कार होने के बाद अनुभव होने से जीवन में और क्या अधिक दिखता है ?

उत्तर: आत्मा का जागृत होना बचा रहता है ।

जिज्ञासा: इसी को आपने 'जागृतिपूर्णता' कहा है ?

उत्तर: हाँ |

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जो अवधारणा होता है, उसके साथ ही क्या बुद्धि कलपनशीलता का द्दष्टा बन जाता है ?

उत्तर: बुद्धि जो है, अवधारणा मात्र होने से 'द्दष्टा' कहाँ होता है ? <u>बोध</u> होने से होता है !! अनुभव होने की स्थिति में ही बोध होता है । अनुभव होने के पहले बोध होता ही है, बोध नहीं होता है तो अवधारणा नहीं हुआ !!!

जिज्ञासा: जी ... मेरा ये सब पूछने का आशय है की अवधारणा को अपने में कैसे पहचानू? अवधारणा हुआ है की नहीं एक एक बिन्दु में ? अपने में निरीक्षण के लिए कैसे देखूँ ?

उत्तर: बोध और अनुभव होता है, मतलब अवधारणा हुआ, नहीं तो नहीं हुआ!!

जिज्ञासा: भ्रमित स्थिति में जो मानव होता है, उसमें जीवन का कौन सा क्रिया अपने को "मैं" माने रहता है ?

उत्तर: साढ़े चार क्रिया में ही काम करता है, कल्पना को 'अपना है', माना रहता है, मन को ही मानता है...

जिज्ञासा: जब मुझ ये दिखता है की "चित्रण हो रहा है", मुझमें उस चित्रण को कौन सा क्रिया देख रहा है ?

उत्तर: अभी मन की जो कल्पना रहती है, उसका चित्रण करता है । चित्रण को देखता ही नहीं है... देखता तो अवधारणा न हो जाये! 'देखना' कहाँ बनता है.... ये सब भाषा है... भाषा तक है, विद्वता तक है ।

जिज्ञासा: 'विचार' को देखने का मतलब है की 'चित्रण' विचार को देख रहा है ?

उत्तर: अवधारणा होता है तो चित्रण और विचार दिखता है । अभी कहाँ होता है ? किसी को नहीं होता है ...

जिज्ञासा: परन्तु, आज भी हम लोग 'कुछ सोचते हैं' - ये तो पता चलता है ?

उत्तर: सोचते हो, यदी उसके साथ in parallel (समानांतर) सुनते हो, उसके आधार पर; तो जो सुनते हैं, वो सोचना बनता है । जो नहीं सुनते, उनसे कहाँ बनता है ? जैसे, जो हमको नहीं सुने है, आप अभी जैसे लिखे हो, वैसा लिखना उनसे कहाँ बनता है ?

जिज्ञासा: मानव व्यवहार दर्शन में आया है - 'केवल वृत्ति और मन के संयोग के स्थिति में मानव जीवन में कल्पना का कार्य सम्पादित होता है' - हमे जब स्वप्न होता है, उस स्वप्न को कौन देखता है?

उत्तर: देखता है मन ही...यदी अनुभव होता है तब मन की तृप्ति होती है - मतलब मन भी मान लेता है अनुभव को ….भ्रमित अवस्था में ही स्वप्न होता है, जागृत व्यक्ति को स्वप्न होता ही नहीं .. हमको तो स्वप्न आता नही ।

जिज्ञासा: साधना में आने के पहले आपको स्वप्न आता था?

उत्तर: होता था, खूब देखा ...

जिज्ञासा: हमारा चयन अस्वादन भी मान्यता से चालित है अभी, मनमानी रहता है | स्वप्न और सुशुप्ती की अवस्था में क्या अंतर है ?

उत्तर: स्वप्न में हम क्या कर रहे हैं उसका ज्ञान रहता है, निद्रा (सुशुप्ती) में यह ज्ञान नही रहता ।

जिज्ञासा: जिसको 'गहरी नींद' कहते है, वह निद्रा में ही होता है?

उत्तर: हाँ |

जिज्ञासा: स्वप्न में मेधस भी काम करता रहता है इसलिए सुबह थकावट लगती है ?

उत्तर: हाँ, ठीक है ।

जिज्ञासा: हमारे लिए 'स्वप्न' अधिक अच्छी स्थिति है, या निद्रा ?

उत्तर: भ्रमित व्यक्ति का कोई भी बात ठीक नहीं है !! हम मान लेते हैं, ठीक है….कोई भी बात ठीक नहीं है...सच्चाई तो यही है …

जिज्ञासा: जी । हमको अभी जो ध्वनि सुनाई देती है ये चित्रण तक पहुंचता है ?

उत्तर: ठीक है ना ... सभी चित्रण होता है मन के द्वारा, मन स्वीकारता है, तभी चित्रण होता है, नही तो नहीं होता है ।

जिज्ञासा: बुद्धि और आत्मा में कोई 'ध्वनि' नहीं है ?

उत्तर: नहीं .. उसमे पहुँचने की वस्तु ही नहीं रहता है !

जिज्ञासा: आप जो भी ध्वनि सुनते हैं तो हर समय उसका दृष्टा बने रहते हैं ?

उत्तर: हम सुनता हूँ, हम जीता हूँ, जीने के अर्थ में सार बात को डालता हूँ, जागृति के अर्थ में डालता हूँ... जागृति के लिए वस्तु रहेगा, तब तो होता है ...

अभी आपको 'वस्तु मिल गया' वाला बात, हुआ की नहीं हुआ - यही देख रहे हैं अब । उसी में गड़बड़ी है....अवधारणा के जगह में ।

अभी संसार में, आप लोगों ने सुन लिया, ध्वनि पकड़ लिया, फोटो पकड़ लिया, तो "अवधारणा" हो गया ऐसा चल देते हैं ... मान लेते हैं ।

जिज्ञासा: जी । मुझे अवधारणा नहीं है, यह स्वीकार है । आवर्तनशील अर्थशास्त्र में सुख की परिभाषा दिया है "तुलन विश्लेषण के साथ चयन और आस्वादन संतुलित होने की स्थिति" ।

उत्तर: ठीक है । अभी मन स्वीकारता है, लिखना और पढ़ना.... अभी अर्थ को नहीं समझा है ।

जिज्ञासा: शांति को लिखा है: "चिंतन, चित्रण के साथ तुलन, विश्लेषण का संतुलन" । शांति का क्या यह मतलब है की जो चित्रित किया, उसे विश्लेषित कर पा रहे हैं ?

उत्तर: न्याय-धर्म-सत्य को विश्लेषित कर पाना... अवधारणा के पहले नहीं होने वाला है (शांति) ।

जिज्ञासा: 'सुख' भी अवधारणा के पहले नहीं होगा ?

उत्तर: नहीं ।

जिज्ञासा: और संतोष का मतलब, "बुद्धि-ऋतंभरा के अनुसार चिंतन-चित्रण होना " ?

उत्तर: अवधारणा के बाद ... ये सब अवधारणा होने से अपने आप हो जाता है ।

जिज्ञासा: मात्र आनंद छूटा रहेगा ?

उत्तर: वो तो अनुभव से होगा, अवधारणा होता है तो अनुभव होता है, बता तो दिया ....

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में 'सुख शांति संतोष' - एक साथ, एक ही क्षण में होगा, या धीरे धीरे होगा ?

उत्तर: अवधारणा के बाद होगा, चित्रण से नहीं होता है । यह इकट्ठा होता है, जागृति इकठ्ठा होता है | अनुभव से होता है, व्यक्त होना धीरे धीरे होता है ।

जिज्ञासा: एक आदमी भ्रमित स्थिति में रहते हुए, शरीर से निकल सकता है ?

उत्तर: नहीं ।

जिज्ञासा: अवधारणा की स्थिति में ?

उत्तर: कभी हो जाता है ।

जिज्ञासा: अनुभव के बाद ?

उत्तर: निकल सकते हैं ।

जिज्ञासा: तो मानव, देव मानव, दिव्य मानव तीनो शरीर से निकल सकते है ?

उत्तर: अनुभव के बाद निकल सकते हैं, बता तो दिया !

जिज्ञासा: कर्म दर्शन में लिखा है देवात्मा, दिव्यात्मा की विचरण क्षमता में अंतर होता है...

उत्तर: तीनों अलग-अलग विधि से प्रमाणित करते हैं ।

धर्म

जिज्ञासा: धर्म की परिभाषा "सर्वतोमुखी समाधान" आया है, और सर्वतोमुखी समाधान को लिखा है 'हर दिशा आयाम कोण परिप्रेक्ष्य में प्रयोजनों को जानना' । इसमें दिशा को लिखा है ह्रास और विकास । यहाँ ह्रास और विकास, "विकासक्रम , विकास, जागृतिक्रम, जागृति" के संदर्भ में है क्या ?

उत्तर: ये जागृति के बाद होता है ।

जिज्ञासा: ये समाधान अनुभवमूलक बोध में होता है ?

उत्तर: अनुभव बोध से ही होता है ।

जिज्ञासा: क्या यही "धर्म बोध" है ?

उत्तर: हाँ, अनुभव बोध में ही ये तीन प्रमाण हो जाता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन में समाधान को हर दिशा कोण आयाम परिपेक्ष्य में, मैं जांचू, की अनुभव के बाद ये अपने आप हो जाएगा ?

उत्तर: अनुभव के बाद हर दिशा कोण आयाम परिपेक्ष्य में समाधान खुद प्रस्तुत करता है ।

जिज्ञासा: (मानव)धर्म बराबर सर्वतोमुखी समाधान है, इसका अवधारणा होता है ?

उत्तर: सर्वतोमुखी समाधान = धर्म मानव का, ये अनुभव के बाद समझ में आता है । समाधान अनुभव के बाद ही होता है, (मात्र)अध्ययन से होता नहीं । पठन से तो बहुत दूर है, धर्म अवधारणा में नहीं आता, धर्म का अपेक्षा बनता है अवधारणा में, अनुभव के बाद धर्म स्पष्ट होता है - सर्वतोमुखी समाधान रुप में ।

जिज्ञासा: अनुभव के पहले धर्म का भास् आभास प्रतीति रहता है ?

उत्तर: रहता है, प्रमाण नहीं होता ।

जिज्ञासा: जो परिभाषाएँ दिये हैं, एक परिभाषा के अंदर दूसरी चीज़ की परिभाषा समाया है, जैसे 'नियम' में 'नियंत्रण' का परिभाषा मिल जाता है .... इस प्रक्रिया को कैसे समझे?

उत्तर: दूसरी परिभाषा समाया नहीं है, संबन्धित है... एक दूसरे से, अखंडता से पूर्णता, व्यापकता से पूर्णता, सब एक दूसरे से जुड़ा है ।

जिज्ञासा: धर्म को 'अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था भी कहा है', तो 'अखंड समाज' का अध्ययन विधि से साक्षात्कार होता है क्या ?

उत्तर: समाधान का साक्षात्कार होता है, समाधान होने से सब समाधानित व्यक्ति इकठ्ठा होने से अखंड समाज है ।

जिज्ञासा: हम जब अध्ययन विधि से चलते हैं, "अखंड समाज है" - ये बुद्धि में बोध होगा, की बोध के फलन में चित्रण में आएगा?

उत्तर: अनुभव होने के बाद प्रमाणित होगा, अनुभव के बाद ही अखंड समाज है उसके पहले नहीं है । अनुभव के पहले जितने भी प्रकार (के समाज) हैं, सब बर्बाद होने की है ।

जिज्ञासा: जैसे मैं अध्ययन कर रहा हूँ, मुझे अखंड समाज का प्रतीति होगा की नहीं ?

उत्तर: क्यों नहीं होगा ! न्याय-धर्म-सत्य प्रतीति होगा, उसके बाद अनुभव होगा, फिर अखंड समाज होगा ।

जिज्ञासा: अखंड समाज की 'वस्तु', बुद्धि में स्पष्ट होगा की प्रतीति के फलन में चित्रण में आएगा ?

उत्तर: 'अखण्ड समाज' जागृति के बाद चित्रण है, बुद्धि सम्मत, प्रमाण सम्मत ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से चलने पर अखण्ड समाज को स्वीकारने के लिए मुझे पहले स्वंय को 'जीवन' रूप में पहचानना पड़ेगा, उसके बाद ही वो स्पष्ट होने का रास्ता बनेगा ?

उत्तर: अनुभव के बाद प्रमाण रूप में स्पष्ट होगा ।

जिज्ञासा: अभी अपने अध्ययन के लिए पूछ रहा हूँ ?

उत्तर: 'अखंड समाज' के लिए 'अध्ययन विधि' सहायक नहीं है, 'अनुभव विधि' सहायक है । अध्ययन से अनुकरण होता है, यह चित्रण तक है, स्वीकृति है ।

जिज्ञासा: जो न्याय धर्म सत्य का हमको प्रतीति होता है, इसमें 'धर्म' के प्रतीति में क्या क्या वस्तु समाया है | धर्म प्रतीति होने का तात्पर्य क्या है ?

उत्तर: धर्म के प्रतीति के लिए आपको बता तो दिया: समाधान = मानव धर्म ।

जिज्ञासा: समाधान को आपने लिखा है - "अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था" ।

उत्तर: अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था भी 'धर्म' के अंदर आता है ।

जिज्ञासा: इसमें (धर्म में) सिर्फ मानवीय स्वभाव है, या शेष तीनों अवस्थाओं का स्वभाव, नियम, नियंत्रण, संतुलन सब समाया है ?

उत्तर: सिर्फ मानवीय स्वभाव है, शेष अवस्थाओं का नहीं । नियम, नियंत्रण, संतुलन मनुष्येत्तर प्रकृति के साथ है, मानव के साथ न्याय-धर्म-सत्य - इसे समझने के क्रम में संतुलित होता है, समझने के बाद प्रमाण होता है । जैसे आप हैं, आप संतुलित होने के अर्थे में ही हैं, अभी प्रमाण नहीं है, प्रमाण के साथ संसार के लिए स्रोत बनते हैं ।

जिज्ञासा: 'न्याय धर्म सत्य' का प्रतीति होने में 'स्वंय का सुखधर्मी' होना भी साक्षात्कार हो जाता है क्या ?

उत्तर: न्याय धर्म सत्य का साक्षात्कार होता है, तभी आदमी अनुभवगम्य होता है, अन्यथा नहीं होता ।

जिज्ञासा: "मेरा धर्म सुखधर्मी है" - ये भी साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: यह नहीं आता है, पहले न्याय धर्म सत्य आएगा, उसके बाद 'धर्म' को जब प्रमाणित करने जाते हैं तब ये बनता है - समाधान ।

जिज्ञासा: जब साक्षात्कार की वस्तु "न्याय धर्म सत्य" कह रहे हैं, उसमे 'न्याय' व 'सत्य' तो स्पष्ट हो रहा है, पर 'धर्म' में निश्चित रूप में क्या क्या वस्तु समाया है, ये स्पष्ट नहीं हो रहा है... ?

उत्तर: समाधान = मानव धर्म = सुख = परंपरा ऐसा बना है ।

जिज्ञासा: 'धर्म' समझ आना मतलब मानव लक्ष्य 'समाधान समृद्धि अभय सहअस्तित्व है' यह भी साक्षात्कार होता है अध्ययन विधि से ?

उत्तर: समाधान होता है । समृद्धि की बात चित्रण तक ही आ गया...

जिज्ञासा: इसीलिए पूछ रहा हूँ, क्योंकि 'विवेक' में मानव लक्ष्य आता है, और विवेक को साक्षात्कार से जोड़ा हैं मैंने...

उत्तर: विवेक सम्मत विधि से चित्रण को कर लेने से समृद्धि की आवश्यकता बनता है ।

जिज्ञासा: 'विवेक सम्मत विधि से चित्रण' का तात्पर्य जीवन का अमरत्व - जीवन क्रिया, शरीर का नश्वरत्व, व्यवहार के नियम को ध्यान में रखते हुए मनन करना...." नित्य-अनित्य" विधि से ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: व्यवहार के नियम - बौद्धिक नियम , प्रकृतिक नियम, सामाजिक नियम ये कहाँ तक है ?

उत्तर: सब चित्रण तक ही है ।

जिज्ञासा: परन्तु आपने 'व्यवहार के नियम का बोध होता है' ऐसा भी कहा है ?

उत्तर: नियम बोध है ।

जिज्ञासा: ‘नियम बोध ‘में क्या आएगा ?

उत्तर: न्याय धर्म सत्य के संयुक्त स्वरूप में 'नियम' होता है, इसलिए ‘नियम’ को ‘बोध’ की जगह में रखा है ।

जिज्ञासा: जिसको आप 'विवेक' कहते हैं, ये अध्ययन विधि में साक्षात्कार में आएगा ?

उत्तर: साक्षात्कार में आएगा....

जिज्ञासा: जैसे ही जीवन का प्रतीति होगा, तो ही विवेक आएगा उसमे ?

उत्तर: हाँ, ठीक है ।

जिज्ञासा: क्या विवेक ही ‘अस्तित्व दर्शन’ और ‘जीवन ज्ञान’ को ‘मानवीयता पूर्ण आचरण’ से जोड़ता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: इसी सन्दर्भ में आपके एक लेख में आया है:

“चिंतन क्रिया जीवन में विवेचनात्मक प्रक्रिया है । विवेचना स्वयं प्रयोजन व् उसकी क्रम बद्धता को पहचानने व् निर्वाह करने की प्रक्रिया है । यह प्रक्रिया शरीर यात्रा और जीवन तृप्ति के संतुलन अथवा संतुलन बिंदु को पहचानने के अर्थ

में नित्य क्रियाशील है । जीवन का अर्थ व्यवहार में अभयता, समाधान, समृद्धि, एवं सहअस्तित्व ही है । यह चिंतन से निष्कर्षात्मक तथ्य रूप होने की अभिव्यक्तियाँ है ।"

उत्तर: चिंतन का मतलब इतना ही है । यह अनुभव के बाद होता है ।

जिज्ञासा: उसके पहले यह अवधारणा में आएगा ? अर्थात "विवेक" ही इससे (चिंतन से) जुड़ता है ?

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब, "ज्ञान-विवेक-विज्ञान" जब कहते हैं, उसमे मानवीयतापूर्ण आचरण 'विज्ञान' है? "ज्ञान" में अस्तित्व दर्शन और जीवन प्रधान, इसके आधार पर विवेक, विवेक के आधार पर मानवियातापूर्ण आचरण? मात्र जो 'आनंद' मूल्य है, वो अनुभव में...

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: मानव व्यवहार दर्शन में आया है "विवेकात्मक अध्ययन से जीवन का अमरत्व, शरीर का नश्वरत्व, व्यवहार के नियमों का बोध होता है साथ ही मानव लक्ष्य, जीवन मूल्य स्पष्ट होता है"...

उत्तर: क्या बात है ! अनुभव गामी विधि से, अध्ययन के लिए मदत यही है ।

जिज्ञासा: तो 'विवेकात्मक अध्ययन' का मतलब "क्या नित्य है क्या अनित्य है" इसको ध्यान में रखते हुए मनन करना?

उत्तर: मुख्य बात यही है ।

.... ज्ञानी, अज्ञानी, विज्ञानी तीनों को जागृत होना पड़ेगा। केवल 'अज्ञानी' जागृत होगा ऐसा नहीं है ...अज्ञानी सुगमता से जागृत होगा, ज्ञानी और विज्ञानी ...इन्ही की प्राण संकट है ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य विवेक में 'नित्यानित्य वस्तु' का ज्ञान समाया है, तथा इसके आधार पर 'मानवीयता का संरक्षण ही लक्ष्य है जो मानव लक्ष्य है'- यह आ जाता । और इस के लिए व्यवहार के नियम (बौद्धिक, सामाजिक, प्राकृतिक) आवश्यक हो जाता है । इसे प्रमाणित करना मानवीय दृष्टी, विषय-स्वभाव, गुण द्वारा है, यह मानवीय आचरण हुआ, विज्ञान हो गया । यही मूल्य चरित्र नैतिकता, अथवा न्यायपूर्ण व्यवहार, धर्मपूर्ण विचार है ।

..विज्ञान तर्क से सम्बंधित लगता है, प्रक्रिया से... इसमें काल, क्रिया, निर्णय प्रक्रिया, फल प्रयोजन का निर्णय समाया है ....

उत्तर: विज्ञान मतलब प्रमाणित करने की विधियाँ – काल, क्रिया, निर्णय ।

जिज्ञासा: विवेक में जो तीन नियम है: बौद्धिक, सामाजिक, प्राकृतिक, इसी को विज्ञान विधि से क्रिया, काल, निर्णय विधि से विश्लेषण करने जाते हैं, तो: “कैसे करेंगे? कब करेंगे ? करना है या नहीं ?” इस निर्णय में जब आते हैं, तो यही ३ नियम (बौद्धिक, सामाजिक, प्राकृतिक) क्रम से अध्यात्म-विज्ञान एवं मनोविज्ञान; व्यवहार-विज्ञान और भौतिक/पदार्थ विज्ञान के रूप में आता है .... तथा ‘आध्यात्म विज्ञान’ एवं मनोविज्ञान से समाधान; ‘भौतिक विज्ञान’ से समृद्धि; तथा ‘व्यवहार विज्ञान’ से अभय एवं सह-अस्तित्व प्रमाणित होता है .... विवेक और विज्ञान में ऐसा सम्बन्ध दिखता है ....

उत्तर: विवेक विज्ञान का पैकेट पूरा हो गया । अपन बहुत समय लेते हैं...

जिज्ञासा: ये जो मेरा विश्लेषण करने का तरीका है, वो मेरी शिक्षा की वजह से ऐसा हो गया है क्या ?

उत्तर: (आज के) शिक्षा की वजह से ये सब हो रहा है, puzzle (पहेली) बनाना, गुड़-गोबर बनाना, उसके बाद प्लेट में रखकर देना, यही काम है!

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो न्याय धर्म सत्य का प्रतीति होता है इसमें ‘धर्म’ की प्रतीति का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर: सर्वतोमुखी समाधान, अभ्युदय । ‘अभ्युदय’ शब्द से भी आ सकता है, ‘सर्वतोमुखी समाधान’ शब्द से भी आ सकता है।

जिज्ञासा: ‘सर्वतोमुखी समाधान’ से क्या आशय है ?

उत्तर: हर कोण में, हर मुद्दे में समाधान ।

जिज्ञासा: “धर्म” का अवधारणा हो जाने का मतलब है की प्रत्येक मुद्दे में ...

उत्तर: सर्वतोमुखी समाधान का अवधारणा आ जाता है, फलस्वरूप आगे चलना बनता है, ये बोध तक पहुंचता है...

जिज्ञासा: सर्वतोमुखी समाधान का परिभाषा दिया है - "हर दिशा कोण आयाम परिप्रेक्ष्य में वस्तु को जानना मानना"

उत्तर: ठीक है, सहअस्तित्व में हर दिशा कोण में समाधान प्राप्ति होती है ।

जिज्ञासा: दिशा का मतलब, विकासक्रम-विकास, जागृतिक्रम- जागृति ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: 'कोण' में लिखा है "दृष्टिकोण –अस्तित्वमूलक मानव केन्द्रित चिंतन" उसके बाद कोण में ये भी लिखा है ‘मनुष्य में दृष्टियाँ -प्रियाप्रिय, हिताहित, लाभालाभ, न्यायान्याय, धर्माधर्म, सत्यासत्य ।’

उत्तर: सम्पूर्ण दृष्टि स्पष्ट हो जाता है । जैसा है, वैसा स्पष्ट होता है... प्रिय हित लाभ में अपने मन के अनुसार सब देखते हैं, इसे मनोगोचर माना गया है … मनोगोचार या अनुभवगोचर, दो में से एक को पकड़ना है ।

जिज्ञासा: "आयाम" स्पष्ट होना मतलब ‘रूप गुण स्वभाव धर्म’ यह चार आयाम स्पष्ट होना ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: परीप्रेक्ष्य को लिखा है 'व्यक्ति परिवार समाज राष्ट्र और अंतरराष्ट्र' - ये ‘परीप्रेक्ष्य’ चित्रण की वस्तु है या बुद्धि तक जाता है ?

उत्तर: चित्रण में आता है ... अनुभव जब जाकर चित्रित होता है, चित्रण होता है, तो स्पष्ट हो जाता है ।

जिज्ञासा: ये ‘पाँच स्थितियों’ के रूप में फिर स्पष्ट हो जाता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: ‘धर्म’ को अखण्ड समाज सर्वोभोम व्यवस्था भी कहा है... तो ‘अखण्ड समाज’ समझने का क्या यह तात्पर्य है की 'प्रत्येक मानव में जीवन समान है, स्वभाव धर्म एक है, मानव जाति एक है' - इसका ज्ञान?

उत्तर: मानव जाति एक, धर्म एक, के आधार पर रहता है ।

जिज्ञासा: क्या ‘न्याय धर्म सत्य’ का अवधारणा होने के बाद ही ‘अखण्ड समाज’ का भी अवधारणा होगा ?

उत्तर: चित्रण में सब आता है ... अनुभव जब चित्रण में जाता है तब बहुत कुछ होता है ...

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जीवन का साक्षात्कार हुए बिना अखण्ड समाज भी स्पष्ट नहीं होगा ?

उत्तर: अनुभव हुए बिना स्पष्ट नहीं होगा ! इसके पहले अवधारणा होता है, अध्ययन के आधार पर एक दूसरे के लिए संदेश होता है, उसके आधार पर होता है, सूचना के आधार पर ।

जिज्ञासा: धर्म का प्रतीति होना मतलब 'मानव सुखधर्मी है', ये प्रतीत हो जाता है ?

उत्तर: 'मानव धर्म एक है' - ये प्रतीत होना, समझ में आता है, सुख समझ में आता है 'विकसित चेतना' ही 'मानव धर्म' के रूप में आता है ।

जिज्ञासा: ये 'सुख और समाधान' के अर्थ में प्रतीत हो जाता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: कल आपने कहा था 'न्याय धर्म सत्य के संयुक्त रूप में नियम समझ में आता है, जीने की विधि के रूप में' ...

उत्तर: जीने पर आता है, विकसित चेतना क्या है... मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना - ये 'विकसित चेतना' का तीन स्वरूप

जिज्ञासा: विवेक को 2 विधि से बताया गया है - "व्यवहार के नियम" और "मानव लक्ष्य" - ये दोनों एक साथ साक्षात्कार हो जाता है की अलग अलग समझ में होता है ?

उत्तर: विवेक समझ में आता है, इतनी सी बात है … चित्रण में बहुआयामी हो जाता है... अनुभव के आधार पर यह होता है ।

जिज्ञासा: 'संस्कृति-सभ्यता-विधि-व्यवस्था' - ये साक्षात्कार होता है, की चित्रण में आता है ?

उत्तर: चित्रण में आता है ।

जिज्ञासा: 'सार्वभौम व्यवस्था' बोध में आता है की चिन्तण का वस्तु है ?

उत्तर: चिन्तण में, कार्य में आता है । अनुभव में समाधान आता है, समाधान को प्रमाणित करने जाते है तो ये सब आता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में सार्वभौम व्यवस्था का अवधारणा बनता है ?

उत्तर: बनता है ।

जिज्ञासा: किस स्वरूप में आता है ?

उत्तर: सर्वतोमुखी समाधान के रूप में ।

जिज्ञासा: जो 'पाँच आयाम, दस सोपान' कहा है ये सारा चिन्तण में आ जाता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: जो पाँच आयाम है - शिक्षा-संस्कार, स्वास्थ्य-संयम, उत्पादन-कार्य, विनिमय-कोष, न्याय-सुरक्षा, ये साक्षात्कार की वस्तु नहीं है ?

उत्तर: ये सब श्रवण की वस्तु है, मनन की वस्तु है ... अवधारणा में जब आता है ये कट जाता है, कट करके अनुभव में जा कर वापस आता है, तब व्याख्यायित होता है - जीने के रूप में ।

जिज्ञासा: 'अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था' के श्रवण-मनन के बिना हमको अवधारणा हो सकता है ?

उत्तर: नहीं होगा, अध्ययन विधि से ही होता है, अध्ययन को प्रस्तुत कर दिया ।

जिज्ञासा: 'मानवीय व्यवस्था की मूल इकाई परिवार है' - ये साक्षात्कार की वस्तु है क्या ?

उत्तर: नहीं, व्याख्या की वस्तु है । मानव जागृत और भ्रमित, अपराधिक, ऐसा आता है व्याख्या में – चिन्तण में ..चिन्तण में कोई अनुभव नही होता है... अपराध का कोई अनुभव नहीं होता । चिन्तण में आता है न्याय-धर्म-सत्य; फलस्वरूप उसके विपरीत सब अपराध है, ऐसा व्याख्या होता है ।

जिज्ञासा: 'प्रत्येक इकाई में रूप गुण स्वभाव धर्म होता है', और 'आकार आयतन घन के रूप में रूप है', ये पहचानना साक्षात्कार है?

उत्तर: रूप गुण का साक्षात्कार से कोई मतलब नहीं है । स्वभाव की मतलब है । अभी, स्वभाव तो रहता नहीं ... स्वभाव तो अपराधिक भ्रमित ही रहता है ।

जिज्ञासा: 'रहने' के रूप में तो रूप गुण चित्रण तक है; मगर "होने" के रूप में अस्तित्व में 'रूप-गुण होता है', ये साक्षात्कार है की नहीं है ?

उत्तर: चित्त में चित्रित होता है ।

जिज्ञासा: आकार-आयतन-घन के रूप में 'रूप' है यह चित्रित-विश्लेषित होता है ?

उत्तर: हाँ। ये कोई अवधारणा में नहीं आता । नाम और रूप दोनों अवधारणा में नहीं रहता । जैसे मैं स्वयं हूँ, आयु के अनुसार अभी हम बहुत सारा नाम भूल गए ना ?

जिज्ञासा: जी | जैसे आपने कहा रूप गुण चित्रण तक ही रुक जाता है, लेकिन वस्तु जो बोध होता है, उसके साथ उसका 'रूप पक्ष' तो समाहित होता है ना, बुद्धि में ?

उत्तर: सारा रूप, भौतिक रसायनिक वस्तु है, उसका कोई अनुभव नहीं होता !!

जिज्ञासा: जो 'प्रकृति का अविनाशियता' स्पष्ट होगा बुद्धि में ....

उत्तर: अनुभव होने के बाद विश्लेषण होता है, अनुभव के बाद चित्रण होता है, इसमें समझ में आता है, ये सब । चित्रण अभी भी करता है आदमी, इसमें "सब स्पष्ट हो गया", ऐसा समझते हैं, मानते हैं जबकी हुआ नहीं रहता । अभी मनुष्य के पास अपराध और भ्रम के अलावा कुछ नहीं है ! शिक्षा से लेकर उपदेश से लेकर, कार्य से लेकर, कर्तव्य से लेकर .. किसी भी जगह में कुछ भी नही है !!!

जिज्ञासा: व्यापक में प्रकृति संपृक्त है, ये अनुभव में आता है ?

उत्तर: हाँ, य आता है ।

जिज्ञासा: ये जो प्रकृति है, इसमें रूप गुण ...

उत्तर: 'प्रकृति' का मतलब है - चारों अवस्था, इकट्ठा ।

जिज्ञासा: जो चारों अवस्था इकट्ठा अनुभव में आता है, उन इकाइयों का रूप गुण ...

उत्तर: चार अवस्था में से शेष प्रकृति के 3 अवस्था चित्रण में समझ आता है, वहीं रुक जाता है, ज्ञानावस्था का 'ज्ञान' होता है, ज्ञान होने के बाद चित्रण में शेष 3 को जोड़ लेता है ...

जिज्ञासा: 'प्रकृति का अस्तित्व धर्म है' - ये भी अनुभव में ही स्पष्ट होता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: जो 'अस्तित्व धर्म' स्पष्ट होता है उसमें 'स्वभाव, रूप और गुण' गौण रहता है, अनुभव में ?

उत्तर: अस्तित्व समझ में आता है, अस्तित्व का अनुभव होता है, "अस्तित्व में हम हैं" - ये भी स्पष्ट होता है । अस्तित्व स्वंय में सत्ता है, व सत्ता में संपृक्त प्रकृति है - संपृक्त प्रकृति विश्लेषण में आ जाता है, और 'संपृक्त है' ये ज्ञान होता है । 'संपृक्त होने' की बात अनुभव में आता है, "संपृक्त रहने" की बात विश्लेषण में आती है ।

जिज्ञासा: जैसे 'अखण्ड समाज सर्वोभौम व्यवस्था' का अध्ययन मुझे करना है, आज 'वस्तु' के रूप में तो कहीं है नहीं, वो मेरे लिए अध्ययन के लिए तो काल्पनिक हो जाता है ..?

उत्तर: काल्पनिक क्यों, युक्ति संगत और तर्क संगत होता है । 'अखण्ड समाज सर्वोभौम व्यवस्था' अनुभव के बाद समझ में आएगा, अभी नहीं होगा।

जिज्ञासा: जैसे इसके बारे में आपने समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र में लिखा है - उसे मुझे चित्रित करके अपने में बैठाना पड़ेगा?

उत्तर: वो तो स्वाभाविक है । जो हमने विश्लेषण किया है, उसके बिन्दु के ऊपर आपको ध्यान देना पड़ेगा । अभी 'बिन्दुओं' के ऊपर ध्यान नहीं गया है, विस्तार के ऊपर गया है ... उससे बहुत कोई फायदा नहीं होता, साक्षात्कार के लिए |

अनुभव के आधार पर, तात्विक्ता के आधार पर, 'होने' के स्वरूप को ध्यान रखते हुये, 'रहने' की स्थिति पैदा करते हैं, यही विश्लेषण है । विश्लेषण का मूल तत्व इतना ही है ... अनुभव के आधार पर जीने की बात को तय करते हैं – उसमे यह दो आता है – तर्क संगत भी, युक्ति संगत भी ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में 'मानवीयता पूर्ण आचरण का अभ्यास' करने के लिए क्या अखण्ड समाज सार्वौभौम व्यवस्था मे मुझे अपने आचरण को 'बैठा' कर देखना पड़ेगा, तभी वो समझ में आएगा ?

उत्तर: ऐसा नहीं, उसको उल्टा करो ... हमारा आचरण अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था का सूत्र बनता है, समाधान समृद्धि अभय सहअस्तित्व, अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था का सूत्र है, नियम नियंत्रण संतुलन न्याय धर्म सत्य ये सूत्र है, स्वधन स्वनारी/स्वपुरुष, दयापूर्ण कार्य व्यवहार ये सूत्र है – इसको ध्यान में रखते हुये बात करना चाहिए | नहीं तो अपन पहुंचेगें नहीं ।

जिज्ञासा: मेरे आचरण का स्वरूप सार्वभौम हो जाए, अखण्ड समाज के अर्थ में उसे देखते हुए, फिर उसको स्वीकारते हुए अभ्यास करना है ?.... आचरण का अभ्यास किसी जागृत व्यक्ति के अनुकरण, अनुसरण विधि से होगा ?

उत्तर: ठीक है । अनुकरण विधि से अपने को कुछ 'मिला' नहीं रहता है, अनुभव विधि से मिला रहता है...अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था अनुभव के बाद ही आता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन करते समय 'व्यवस्था में भागीदारी' के लिए तीन आयाम आपने बताया है, उत्पादन/सेवा, विनिमय और न्याय - इसका भी मुझे अभ्यास करना पड़ेगा ?

उत्तर: वो तो अभ्यास करने की ही बात है, इसलिए अभ्यास दर्शन भी लिखा है ।

जिज्ञासा: अभी जो मैं प्रक्रिया कर रहा हूँ, उसमे आपसे जो परिभाषा मिला है साक्षात्कार का, मनन का, उसको स्मरण में रखते हुए मुझमें जो क्रिया हो रहा है, उसको देख रहा हूँ और इन दोनों को मिलाने का प्रयास कर रहा हूँ ...

उत्तर: जो परिभाषा दिया है, उसके अनुसार आपको सोचना है, तभी मिलेगा, अनुभव । <u>अनुभव मिलेगा</u> ! अनुभव के लिए रास्ता लिखा है... व्यक्तिवाद, समुदायवाद, समाजवाद ये सब खत्म अब ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो धर्म का प्रतीति होना है, या धर्म जो अवधारणा में आता है ...

उत्तर: धर्म स्वीकृत होता है, 'धर्म चाहिए', 'समाधान चाहिए', ऐसा सबको स्वीकार होता है ...

जिज्ञासा: स्वीकृति के बाद ये प्रतीति भी हो जाएगा ?

उत्तर: स्वीकार होता है तर्क के लिए, स्वीकृत होने के आधार पर अध्ययन होता है, इसके बाद अवधारणा होता है, अवधारणा के बाद बोध और अनुभव होगा ।

वर्तमान जुड़ता नहीं है विकल्प में, यह 'विकल्प' ही है ! विकल्प के आधार पर ही साक्षात्कार होगा, साक्षात्कार होगा तो अनुभव होगा, अनुभव होगा तो प्रमाण होगा - ऐसा है ।

जिज्ञासा: जो क्रम से वस्तु साक्षात्कार होता है, वो साथ-साथ बुद्धि में जमा होता जाता है ये आपसे सुना है, इसे आप अवधारणा कह रहे हैं ....

उत्तर: अवधारणा अध्ययन से होता है । अध्ययन से होकर ये जितने भी वस्तु है, (रूप गुण सम्बन्धी) उसका अवधारणा नहीं होता है, चित्रण में ही रह जाता है - रसायनिक भौतिक वस्तु ।

जिज्ञासा: और स्वभाव धर्म संबंधी वस्तु ?

उत्तर: स्वभाव धर्म संबंधी वस्तु अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: ये साक्षात्कार होकर बुद्धि में 'जमा' होता है ?

उत्तर: ठीक है । मानव का स्वभाव आता है, 'जीवन' संबंधी वस्तु साक्षात्कार होता है ।

न्याय, नियम

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से 'न्याय' साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: न्याय का स्वीकृति होती है...न्याय-धर्म-सत्य इकठा स्वीकृति होती है, अवधारणा होता है न्याय-धर्म-सत्य का, 'सत्य' में 'धर्म' और 'न्याय' दोनों समाहित रहते हैं, सत्य का अनुभव होता है ।

जिज्ञासा: आपने न्याय का जो परिभाषा दिया है 'संबंध मूल्य मूल्यांकन उभयतृप्ति' ....

उत्तर: वो तो व्यवहार के लिए दिया है, अनुभव के लिए नहीं दिया है । अनुभव के लिए कुछ चीज़ लिखा है, व्यवहार के लिए बहुत सारा लिखा है, इसको आप लोगों को अलग करके पढना पड़ेगा, इसीलिए कहा है, आदमी ही समझाएगा, पुस्तक नहीं ।

जिज्ञासा: साक्षात्कार जो होगा, मेरा अपना ही स्वभाव साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: साक्षात्कार जो होता है, उसका कुछ भाग बुद्धि में drop होता (रुक जाता) है, कुछ अनुभव में आता है । सत्य में, अनुभव में, दोनों न्याय और धर्म समाहित है । न्याय धर्म और सत्य अवधारणा में पहले आता है फिर बुद्धि में जाकर धर्म और न्याय drop हो जाता है (रुक जाता है), सत्य अनुभव में आता है ।

Technically (तकनीकी) में आप लोग प्रवीण है, जीवन संबंधी बातों, सत्य संबंधी बातों में नही है ।

जिज्ञासा: मतलब हमारा विश्लेषण करने का विधि बारम्बार ‘भौतिक-रासायनिक’ विधि के तरफ ही जाता है ? ‘न्याय-धर्म-सत्य’ दृष्टी नही आ पाता है ?

उत्तर: वही है..

जिज्ञासा: आपने कहा न्याय-धर्म-सत्य अवधारणा में आता है, तो ‘न्याय’ का अवधारणा स्वरूप क्या है ? न्याय के संबंध में अवधारणा में क्या समझ में आता है ?

उत्तर: न्याय नहीं आता है, अवधारणा में ! ‘न्याय चाहिए’, ये भर आता है

जिज्ञासा: 'न्याय चाहिए' ये तो इच्छा हुआ ना ?

उत्तर: इच्छा के मूल रूप में यही रहता है, न्याय-धर्म-सत्य हमको चाहिए ये अनुभव में पूरा होता है … सत्य समझ में आता है, तो सत्य में धर्म और न्याय दोनों समाहित रहता है ।

जिज्ञासा: ये मुझे इस बार नयी चीज पता चला ... 'न्याय-धर्म-सत्य' जो सूत्र आप बताते हैं, वो व्यवहार के लिए है...

उत्तर: हाँ ! अनुभव से वापस आते हैं, चित्रण करते हैं, तीनों को ।

जिज्ञासा: 'प्रत्येक मानव के साथ मैं संबंध में हूँ' - ये अवधारणा में आ जाएगा ?

उत्तर: ये विश्लेषण में आता है ।

जिज्ञासा: 'जीवन' और 'सत्य' संबंधी वस्तु ही साक्षात्कार होता है … ये तो मुझे स्पष्ट हो रहा है ...

उत्तर: उतना ही बात है !!! जीवन संबंधी बात रहता है, सत्य संबंधी बात रहता है, अवधारणा में ... सत्य में धर्म और न्याय समाहित रहता है, जीवन तृप्त होना चाहता है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब, अध्ययन (श्रवण मनन) के लिए न्याय-धर्म-सत्य सूत्र लिखा है, इसी के सार रूप में साक्षात्कार होता है, साक्षात्कार में केवल स्वभाव-धर्म-सत्य ही रहेगा, इसका तात्पर्य व्यापक में संपृक्त प्रकृति, जीवन, जीवन क्रिया, 'मानवीय स्वभाव' के रूप में आचरण - इसमें 'मानव धर्म' निहित है ...और अनुभव के पश्च्यात, पुनह: न्याय-धर्म-सत्य व्यवहार के लिए खुलता है ...

उत्तर: ऐसा ही है !

जिज्ञासा: न्याय की परिभाषा आपने जो दिया है, उसे मैंने 'याद' कर लिया है, न्याय को मैं आप जो आचरण करते हैं इस परस्परता में ही पहचान पाऊँगा क्या ?

उत्तर: सम्बन्धों को पहचानना मूल्यों को निर्वाह करना ...

जिज्ञासा: 'संबंधों को पहचानना' चित्रण में आता है, या अवधारणा में आता है ?

उत्तर: चित्रण में ! लिखना चित्रण है... चित्रण के बिना लिखना बनता नहीं ।

जिज्ञासा: जो व्यवहार के नियम हैं, बौद्धिक नियम, प्राकृतिक नियम, सामाजिक नियम ....

उत्तर: सत्य का अनुभव होने के बाद, व्यवहार के नियम समझ में आता है, 'आचरण ही नियम है' - विश्लेषण में आता है, अध्ययन में नहीं आता है, अवधारणा में नहीं आता है ।

जिज्ञासा: जब आपने यह लिखा है कि 'व्यवहार के नियमों का बोध होता है' - तो 'समझने' के अर्थ में लिखा है उस 'बोध' को ?

उत्तर: समझ में आने के बाद ।

जिज्ञासा: ये 'बोध' होता है मतलब बुद्धि तक जाता है ?

उत्तर: मनुष्य को समझ में आने के लिए लिखा है 'बोध' को, बोध सत्य का ही होता है, न्याय धर्म सत्य का ही होता है।

... वस्तु स्पष्ट होने के लिए हम विश्लेषण करते हैं, विश्लेषण वृत्ति में होता है, वो अनुभव के बाद होता है । पढ़ने पर अनुमान होता है, अनुमान के आधार पर हम सही का अनुमान करते हैं, अनुमान के आधार पर चलते हैं, चल कर अनुभव करते हैं, अनुभव करके प्रमाणित होते हैं । बोध, दोनों विधि से होता है - अध्ययन विधि से बोध, अनुभव विधि से बोध, दोनों बोध ।

जिज्ञासा: जब भी आपने 'बोध' शब्द का प्रयोग किया है, मैंने ये मान लिया है की बुद्धि की ही बात हो रही है, जैसे ''व्यवहार के नियमों का बोध' लिखा है .....

उत्तर: व्यवहार के लिए बताने की विधि, अनुभव को बताने के क्रम में है, उसी बोध को हमने व्यवहार के लिए बताया है, वही बोध जब व्यवहार में आता है, ऐसा आता है, इसीलिए 'व्यवहार के नियम का बोध' ... अनुभव को बताया अध्ययन विधि से, व्याख्या जो दिया है, वो विश्लेषण विधि से ।

जिज्ञासा: मानव व्यवहार दर्शन में लिखा है - "विवेकात्मक अध्ययन से जीवन का अमरत्व, शरीर का नश्वरत्व, व्यवहार के नियमों का बोध होता है"...

उत्तर: वही तो ! व्यवहार के नियमों का बोध होता है, अनुभव के <u>बाद</u> ।

जिज्ञासा: बोध होता है मतलब बुद्धि में बोध होता है ?

उत्तर: बुद्धि में ही (बोध) होता है ! और किसी में, पथरा में थोड़ी होता है !

जिज्ञासा: व्यवहार के नियमों का बुद्धि में बोध एक के बाद एक होता है - या इकट्ठा होगा ?

उत्तर: <u>एक साथ</u> होता है ... बोध जो है, एक साथ होता है विश्लेषण, हर दिशा कोण आयाम परिप्रेक्ष्य में होता है ।

जिज्ञासा: तब यह सब जो आपने लिखा है – स्वधन, स्वनारी/स्वपुरुष...यह सब ऐसा बोध के पाश्च्यत चित्रण में आता है ?

उत्तर: हाँ, यह सब चित्रण में आता है - अनुभव के साथ, अनुभव की रोशनी में व्यवहार करना ।

जिज्ञासा: तो ‘व्यवहार के नियम’ अध्ययन विधि से अवधारणा में भी आएगा क्या ?

उत्तर: (व्यवहार के नियम) अवधारणा में नहीं आता है, अनुभव के <u>बाद</u> आता है । आपका बार बार वहीं फस रहा है...अध्ययन विधि से कुछ होता है, अनुभव मूलक विधि से कुछ होता है...इसे अलग करके देखना पड़ेगा ...

जिज्ञासा: उस वाक्य में विवेकात्मक ‘अध्ययन' लिखा था इसलिए मैंने मान लिया की यह अवधारणा में आएगा...

उत्तर: अध्ययन अनुभवमूलक है, अनुभवगामी है । आप के लिए, मैंने अनुभव मूलक विधि से रखा हूँ, उसको अध्ययन करने से आपके लिए अनुभवगामी हो जाता है। उसका मंजिल है अवधारणा, अवधारणा यदी होता है तो अनुभव मूलक विधि से, हम जो लिखे हैं, उसकी सार्थकता है - ऐसा मैं मानता हूँ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य अध्ययन विधि में ‘व्यवहार के नियम’ को फिर ‘स्वीकारने’ के अर्थ में लें? जैसे, श्रवण-मनन के अर्थ में, अध्ययन के लिए अभ्यास के अर्थ में...

उत्तर: वो ठीक है, आपके अभ्यास के लिए, स्वीकारने के लिए ठीक है – परन्तु इसका साक्षात्कार नहीं है - व्यवहार का नियम, अनुभव के <u>बाद</u> समझ में आता है, उसका बोध होता है ...

जिज्ञासा: एक बार पुनह: अध्ययन विधि से जो अवधारणा होता है, इसमें ‘अवधारणा’ की वस्तु क्या है ?

उत्तर: अवधारणा में चारों अवस्था 'होने' के रूप में समझ में आता है, पहले तर्क विधि से चित्रण तक होता है, चित्रण तक तीन भाग (पदार्थ, प्राण, जीव) रह जाते हैं, अनुभव मूलक विधि से पता चला नियमपूर्वक सभी चलते हैं - पदार्थावस्था प्राणावस्था जीवावस्था तीनों नियमपूर्वक ही चलते हैं, नियम ही आचरण है, आचरण ही धर्म है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो अवधारणा होता है, इसमें चारों अवस्थाओं का 'होना' स्पष्ट होता है ... इसी में स्वंय का 'जीवन' होना भी अवधारणा में आ जाएगा, तो उसमें 'आचरण' संबंधी क्या चीज़ अवधारणा में आता है ?

उत्तर: मानवीयता पूर्ण आचरण आता है ... बाकी सब छूट जाता है । आचरण अलग से समझ में आने से उसको प्रमाणित करने को ‘प्रमाण’ का नाम दिया है ...मनुष्येत्तर प्रकृति के आचरण में कोई गड़बड़ी नहीं है, मानव में ही गडबडी है... मानव को कहीं राहत की जगह चाहिए इसके लिए विकल्प लिखा है ।

जिज्ञासा: मानवीयतापूर्ण आचरण को आपने 'मूल्य चरित्र नैतिकता' - ऐसे परिभाषित किया है...

उत्तर: बता तो दिया आपको...मानवीयतापूर्ण आचरण को तीन भाग में, तीन विधि से बताया है.. मूल्य चरित्र नैतिकता । मूल्य को बताया है जीवन मूल्य, मानव मूल्य, स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य, वस्तु मूल्य...इसका विश्लेषण कर दिया है, व्याख्या दे दिया है...

जिज्ञासा: इसमें जीवन मूल्य 'सुख शांति संतोष आनंद' - अध्ययन विधि से अवधारणा में आता है या नहीं ?

उत्तर: अवधारणा में नहीं आता, अनुभव मूलक विधि से लिखने में आता है, सोचने में आता है, जीने में आता है और क्या चाहते हो?

जिज्ञासा: जब हम कह रहे हैं की 'स्वभाव धर्म' का साक्षात्कार होता है, और अवधारणा में आता है, इसमें मानव धर्म, मेरा धर्म, सुख धर्मी होना ये भी तो साक्षात्कार होगा ?

उत्तर: सुख धर्म को स्वीकारते हो की नहीं ?

जिज्ञासा: जी, स्वीकारते हैं|

उत्तर: फिर हो गया, स्वीकारना मतलब अवधारणा!!!

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य 'सुख धर्मीयता' को स्वीकारते हैं अवधारणा में, और 'सुख शांति संतोष आनंद' यह जीने में आता है – अनुभव के बाद, 'जीवन मूल्य' के रूप में अवयं में अनुभव होता है...

उत्तर: वही है!

जिज्ञासा: जैसे जीवन मूल्य है, वैसे ही मानवीय स्वभाव, 'धीरता वीरता उदारता' को ही 'मानव मूल्य' कहा है । मानवीय स्वभाव भी साक्षात्कार होगा की नहीं होगा ?

उत्तर: मानवीय स्वभाव होता है । धर्म का स्वभाव जो होता है, उसमे मूल्य निकलता है ....

जिज्ञासा: मानवीय स्वभाव को आपने व्याख्या दिया है - धीरता वीरता उदारता । ये "धीरता वीरता उदारता" तो व्याख्या है, चित्रण और विश्लेषण है ना, आपकी और से ?

उत्तर: चित्रण है ।

जिज्ञासा: ये जो स्वीकार होगा, वो धीरता वीरता उदारता के संयुक्त रूप में स्वीकार होगा ?

उत्तर: साक्षात्कार के बाद संयुक्त रूप में होगा ।

जिज्ञासा: 'धीरता वीरता उदारता' का साक्षात्कार किस स्वरूप में होता है?

उत्तर: उदारता के रूप में, उदारता मतलब अनुभव उपयोगी हो गया...सब तक ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य मानवों के साथ जो संबंध है, 'पूरकता के अर्थ' में ही है, ये निश्चयन हो जाता है ?

उत्तर: हम पूरे अस्तित्व की बात कर रहे हैं ... !! पुनह विखंडन विधि लगाया आपने...विखंडन विधि से यह मिलने वाला नहीं है ... ! आपको नही मिलेगा न हमको मिलेगा !

जिज्ञासा: अभी तो मानवीय स्वभाव की साक्षात्कार की बात होती रही, इसीलिए पूछा ..

उत्तर: साक्षात्कार करने की विधि आती है, साक्षात्कार होता है, होने से उसमे उदारता स्वीकार होता है

जिज्ञासा: यहाँ सक्षात्कार के सन्दर्भ में 'उदारता' का मतलब क्या है?

उत्तर: न्याय-धर्म-सत्य स्वीकार करने की स्थिति में ...

जिज्ञासा: मतलब मैं सभी के लिए 'पूरक' हूँ, यह स्वीकार हो जाता है ?

उत्तर: उसको आप जो कुछ भी कहो !

जिज्ञासा: मेरे पास तो उदारता के लिए आपका दिया हुआ परिभाषा ही है, अब...

उत्तर: उदारता अवधारणा के रूप में जब जाता है, तब यही होता है .. मानव सत्य पूर्वक, धर्म पूर्वक, न्याय पूर्वक जीना से उदारता बनता है.. अध्ययन विधि से । अध्ययन पूरा होने के बाद अनुभव होने के पश्च्यात परंपरा बनता है, बन्ने से प्रमाण होता है – परंपरा नही होगी तो प्रमाण नहीं होता है । इसको अछि तरह से परिशीलन करो...

जिज्ञासा: अभी तक अवधारणा के संबंध में जो बात हुई, उसको confirm (पक्का) कर लेता हूँ । 'अस्तित्व दर्शन' अवधारणा में होने का तात्पर्य है कि इकाई क्रिया के रूप में है, और व्यापक वस्तु में है, ये अवधारणा में आ जाता है?

उत्तर: नहीं ! सत्ता में संपृक्त प्रकृति … अवधारणा में यही आता है, यही अस्तित्व का मतलब है ।

जिज्ञासा: आपसे पहले सुना है की इसमें केवल भीगे रहना ही अनुभव के लिए बचा रहता है ?

उत्तर: इसका पहले अनुभव होता है । उस अनुभव के detail (गहराई) में जाते हैं, तो चार अवस्था, विश्लेषण करने से चार अवस्था हो जाता है । कुल मिलाकर सत्ता ही व्यापक, व्यापक वस्तु में डूबा हुआ, भीगा हुआ , घिरा हुआ प्रकृति है, प्रकृति मूल रूप में पदर्थावस्था से शुरू और प्राणावस्था, जीवावस्था, ज्ञानावस्था में अंत होता है ।

... संपृक्तता में पारगामी होना, पारदर्शी होना सभी बनता है ।

जिज्ञासा: फिर यही चीज़ आगे जाकर अनुभव होगा ?

उत्तर: यही अनुभव होता है ।

जिज्ञासा: यही अवधारणा में भी आता है ?

उत्तर: नहीं, (अवधारणा में) 'ये संपृक्त है' - पता लगता है, यह पारगामी है, परदर्शी है अनुभव में ही पता लगता है ।

जिज्ञासा: इसीलिए अनुभव के पहले उसे 'सत्ता' नामे देना बनता नहीं... अवधारणा मे, 'व्यापक' संज्ञा ही बनता है ?

उत्तर: ऐसा ही है ! अनुभव में ही 'सत्ता' का qualification (विशिष्टता) बनता है ।

जिज्ञासा: जी | आपसे पहले सुमा है की अनुभव के पूर्व में व्यापक वस्तु को ज्ञान एवं सत्ता खान बनता नहीं |

जिज्ञासा: इसका मतलब, 'इकाई व्यापक वस्तु में डूबा और घिरा है' - ये अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: भाषा में आता है, कार्य के रूप में अनुभव में ही आता है। भाषा के रूप में होना, कार्य के रूप में होना दोनों में अंतर है ...

जिज्ञासा: 'पदार्थावस्था का मूल स्वरूप परमाणु है' - ये अवधारणा है, कि उसके पहले ही ये हो जाता है ?

उत्तर: उसके पहले अध्ययन में आता है । रसायनिक भौतिक वस्तुओं का अध्ययन चित्रण तक ही होता है ।

जिज्ञासा: 'विकासक्रम' चित्रण में ही पूरा हो जाता है, कि ये अवधारणा में भी आएगा ?

उत्तर: विकासक्रम, विकास चित्रित हो जाता है … जागृतिक्रम, जागृति अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: परन्तु हमने आपसे पहले सुना है की सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति ये पांचो सूत्र साक्षात्कार हो जाता है ?

उत्तर: ठीक है ना ! वो ठीक बताया है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब, विकासक्रम साक्षात्कार होता है, और उसका detail (विस्तार) चित्रण में आता है, तो होने के रूप में विकासक्रम साक्षात्कार में आता है, और रहने के रूप में चित्रण में आता है ।

उत्तर: 'होने' के रूप में आ जाता है, 'रहने' के रूप में चित्रण में आता है ।

जिज्ञासा: इसी रूप में परमाणु भी 'होने' के रूप में साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: होने के रूप में तो सब साक्षात्कार है !

जिज्ञासा: तो परमाणु, प्राणकोषा "है" - यह सब साक्षात्कार में आएगा .

उत्तर: हाँ, 'होने' के रूप में सब |

जिज्ञासा: इसका मतलब 'विकासक्रम विकास होने के रूप में' व 'जागृतिक्रम जागृति होने-रहने के रूप में साक्षात्कार हुआ ।

उत्तर: हाँ, आधार यही है ।

जिज्ञासा: ये सब मिलकर स्थिति सत्य, वस्तुगत सत्य, वस्तु स्थिति सत्य कहलायेगा?

उत्तर: तीनों सत्य इसी में आ गया।

जिज्ञासा: इसी होने के रूप में 'पदार्थवास्था का अस्तित्व धर्म है' - ये भी अवधारणा है ना?

उत्तर: धर्म 'होने' के अर्थ में है, ये भी अवधारणा में आ जाता है ।

जिज्ञासा: इसी प्रकार 'प्राणावस्था का पुष्टि धर्म' होना, ये भी अवधारणा में आ जाता है ?

उत्तर: ये नहीं आता हैं । रसायनिक भौतिक वस्तुएँ सब अवधारणा के पहले drop हो जाता है (रुक जाता है)

जिज्ञासा: बाबाजी, मैं इसीलिए बारम्बार पूछ रहा हूँ, क्योंकि आपसे पहले सुना था की 'चारों अवस्थाओं का धर्म अनुभव में आता है' ।

उत्तर: वो ठीक है । जीवन में विश्लेषण भी है, समझ भी है, समझ का भाग है - ये विकल्प ।

जिज्ञासा: "मैं स्वंय चैतन्य इकाई हूँ" - ये भी अवधारणा में आ जाएगा ?

उत्तर: चैतन्य होना ये अवधारणा के पहले से ही आता है, अध्ययन से ।

जिज्ञासा: मैं जीवन स्वरूप में <u>निरंतर हूँ</u> - ये अवधारणा में आता है ?

उत्तर: हाँ । मैं निरंतर हूँ, जीवन; यह अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: "मैं गठनपूर्ण स्वरूप में हूँ" - ये अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: ये नहीं आता है, ये अनुभव में आता है ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य हुआ, की 'जीवन ज्ञान' के सम्बन्ध में "मैं निरंतर हूँ, मुझमें ये ये क्रियाएँ है" - ये सब अवधारणा में आ जाएगा ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: आपने कहा था जीवन का प्रयोजन भी अवधारणा में आता है ?

उत्तर: जीवन के प्रयोजन का तो अध्ययन ही है ।

जिज्ञासा: जीवन का प्रयोजन जागृति है ना ?

उत्तर: हाँ ...गधे घोड़े को थोड़ी जागृत होना है !

जिज्ञासा: इस गोष्ठी में अस्तित्व दर्शन और जीवन ज्ञान पर चर्चा हो गया ... 'मानवीय आचरण' अवधारणा में कैसे आएगा ?

उत्तर: अवधारणा में नहीं आएगा, विश्लेषण में आएगा, व्यवस्था चित्रण होता है... व्यवस्था है, ये पता लगता है, व्यवस्था का चित्रण होता है उसमे आता है (मानवीयता पूर्ण आचरण)

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य व्यवस्था अवधारणा में, होने के रूप में आता है, रहने के रूप में चित्रण है, व्यवस्था और व्यवस्था के अर्थ में मानवीयता पूर्ण आचरण है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: इस सन्दर्भ में तीन भाषा आया है 'न्याय बोध', 'नियम बोध' और 'मानवीयतापूर्ण आचरण बोध' - इसका क्या अर्थ है?

उत्तर: व्यवस्था के अर्थ में मानवीयता का आचरण बोध होता है । बोध में रह जाता है, आचरण, अनुभव में नही जाता।

जिज्ञासा: इसका मतलब, "मानवीय आचरण व्यवस्था के अर्थ में है" - इसका बोध होता है, उसका जो detailing (विस्तार) है - 'मूल्य चरित्र नैतिकता', वो चित्रण में आ जाता है ।

उत्तर: हाँ । इसमें पकड़ ठीक है ...

जिज्ञासा: "मानवीय आचरण का अवधारणा" और "स्वभाव का अवधारणा" - दोनों एक ही चीज़ है ?

उत्तर: एक ही है । स्वभाव ही मानवीय आचरण है ।

जिज्ञासा: जब आप ये कहते हैं "स्वभाव धर्म का बोध होता है" - इसका मतलब ये सारा - अस्तित्व दर्शन, जीवन, मानवीय आचरण, अथवा न्याय-धर्म-सत्य मिलाकर ही स्वभाव धर्म है ... सम्मिलित रूप में ...

उत्तर: सीधा बात इतना ही है ।

जिज्ञासा: इसमें 'नियम नियंत्रण संतुलन' भी अवधारणा में आ जाता है ?

उत्तर: व्यवस्था में आता है, अवधारणा में 'व्यवस्था के अर्थ' में आता है ।

जिज्ञासा: इसमें एक एक अवस्था का 'नियम नियंत्रण संतुलन' होना यह पारी पारी से आएगा ?

उत्तर: यह विश्लेषण में आता है, व्याख्या है ।

जिज्ञासा: जी | इसका मतलब, "व्यवस्था में है" - ये अवधारणा है, "कैसे है' – ये सारा व्याख्या है ...

उत्तर: चारों अवस्था में व्यवस्था कैसे होता है, ये स्पष्ट हो जाता है ... व्यवस्था ही तो सबसे बड़ा आयाम है ।

जिज्ञासा: जीवन का 'पुंजाकार' रूप अवधारणा में आएगा ?

उत्तर: हाँ, भौतिक परमाणुएं चित्रण में रह जाते हैं, चैतन्य प्रकृति ही अवधारणा में आता है, बोध होता है ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य जीवन का 'रूप' अवधारणा में आ गया, और जीवन का स्वभाव धर्म भी आ गया ...

उत्तर: जागृत जीवन का स्वभाव धर्म अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: मतलब यह सारा मिलकर ही 'धर्म बोध' है....

उत्तर: यदी आवधारणा पूरा होता है, बोध होता है, बोध होता है तो अनुभव होता है ...

जिज्ञासा: यदी अनुभव नहीं हो रहा है इसका मतलब 'अवधारणा' में ही कुछ बचा है...अथवा इसपर 'पूर्णाधिकार' नहीं हुआ है।

उत्तर: हाँ, अवधारणा नहीं हुआ, इसीलिए अनुभव नहीं हुआ ...

जिज्ञासा: यही सारे वस्तु मिलकर 'न्याय-धर्म-सत्य के अवधारणा' में आता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य, जिसको आप "समाधान" बोल रहे हैं, मानव धर्म बराबर समाधान, इसमें बोध, चिंतन, चित्रण, विश्लेषण ये सारा मिलकर समाधान है ।

उत्तर: इसको ऐसा रखो – **'**अनुभव ही समाधान है'... अनुभवमूलक विधि से समाधान ।

जिज्ञासा: मतलब, अनुभवमूलक विधि से जीवन में जो कुछ भी होता है, वो समाधान है ।

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: न्याय क्या है, ये "वस्तु" के रूप में मुझमें अभी इसकी समझ नहीं है ...

उत्तर: जीने मै ही समझ में आता है ... जीने मै ही न्याय प्रमाणित होता है, बोलने में प्रमाणित नहीं होता। न्याय को कब से बोल रहे हैं मानव जात - कभी न्याय हुआ है ?

जिज्ञासा: जीने में न्याय आने के लिए मुझे पहले 'न्याय का ज्ञान' होना पड़ेगा ना ?

उत्तर: उसका अध्ययन करना होगा । अनुभव होना, सत्य में अनुभव होना, सहअस्तित्व में अनुभव होना, दूसरा कोई भाषा बनता नहीं ।

जिज्ञासा: अनुभव के बाद तो न्याय होगा ही, उसके पहले न्याय का भास आभास प्रतीति भी होगा ?

उत्तर: वो तो होगा ही, भास आभास प्रतीति होने के बाद ही अनुभव होगा ।

जिज्ञासा: न्याय का प्रतीति होता है क्या ?

उत्तर: होता है, इसलिए स्वीकारते हो ।

जिज्ञासा: जैसे मेरे पास इस समय केवल 'न्याय' का श्रवण किया हुआ परिभाषा है और तर्क है ....

उत्तर: ठीक है, तर्क के अनुसार और भाषा का परिभाषा के अनुसार प्रतीति होती है, स्वीकारने की जगह यही है ।

जिज्ञासा: क्या आपके साथ जब व्यवहार करते है, उस परस्परता में ही 'न्याय' पहचान पाऊँगा कि ....

उत्तर: व्यवहार में आप ठीक हैं, बोलने में गलत है ... क्योंकि अनुभवमूलक विधि से बोलते नहीं हैं... व्यवहार को क्या बोलोगे? किसके आधार पर बोलोगे ? मन के आधार पर बोलोगे, नहीं तो अनुभव के आधार पर - दो ही तो छोर हैं !

जिज्ञासा: न्याय मुझे किसी जागृत व्यक्ति के परस्परता में ही स्पष्ट होगा, पहचानने में आएगा, कि इसको मैं कमरे में बैठकर "न्याय को सोचता रहूँ" - इससे हो जायेगा ?

उत्तर: न्याय अनुभव के बाद होगा ।

जिज्ञासा: मैं न्याय के प्रतीति के बारे में पूछ रहा हूँ ...

उत्तर: प्रतीति अनुभव नही है ! बोध भी नहीं है अनुभव, अनुभव ही अनुभव है..अनुभव आचरण है...

जिज्ञासा: दुसरे विधि से...जैसे आप जागृत है, आप अनुभवमूलक विधि से व्यक्त होते हैं, आपमें ‘न्याय’ है, तो आपके साथ परस्परता में व्यवहार करते समय ही मैं न्याय को पहचान पाऊँगा, कि 'यही न्याय है' ? साक्षात्कार के अर्थ में?

उत्तर: साक्षात्कार व्यक्ति में प्रभाव सब के साथ , हमारा जीना हमारा अनुभव में रहना, ये पहला । अनुभव ही आचरण में जब आता है तब अनुभव का ही बहुत सारा भाग drop (गिर) हो करके आता है ।

जिज्ञासा: क्योंकि मेरे पास 'वस्तु' के रूप में तो न्याय नहीं है, वस्तु के रूप में तो न्याय आप ही के पास है ?

उत्तर: ये अनुभव विधि से ही होगा। अवधारणा विधि से ही होगा, और अवधारणा, अध्ययन विधि से ही होगा.. अध्ययन का अंतिम बिंदु अवधारणा, उसके बाद बोध-अनुभव अपने आप होता है, उसमे पुरुषार्थ नहीं है । बोलने से, लिखने से, यंत्र में भेड़ लेने से हमारा वस्तु नही है, जीना से ही हमारा वस्तु है । अभी का मनुष्य टाइप कर लये, लिख लिए, फोटो ले लिए, उससे पंडित हो गए ऐसा मानता है...यहाँ खड़ा है अब आदमी जात !

जिज्ञासा: ऐसा लगता है, हमारे अध्ययन में 'अस्तित्व दर्शन' व 'जीवन' वाला पक्ष को स्वयं में छू पाते हैं, परन्तु “मानवीय आचरण” वाला पक्ष मात्र परिभाषा और तर्क से आ जायेगा, ऐसे लगता नहीं...

उत्तर: हम जो मानवीय आचरण किए हैं वही परिभाषा में ला पाये हैं ।

जिज्ञासा: 'यही सही आचरण है' - यह बात किसी जागृत व्यक्ति के साथ परस्परता मे ही पहचान में आएगा, कि केवल उसका श्रवण मनन से हो जाएगा?

उत्तर: वो स्वीकारने पर अवधारणा में आता है, लिखने सुनने से नहीं आता है... सुनने से अवधारणा में जब चला गया, तब समझ में आता है ।

जिज्ञासा: मतलब आप जो मानवीय आचरण कर रहे हैं उसे मैं स्वीकार लेता हूँ ...

उत्तर: अध्ययन विधि से स्वीकार हुआ ।

जिज्ञासा: तो पहले वो मुझमें "चाहत" के रूप में आएगा ? और उसके बाद "स्वीकृति" के रूप में आ जाएगा ?

उत्तर: चाहत के आधार पर समझ के रूप में आएगा। चाहत जो ना अनुभव में पूरा होता है । अभी इसमें व्यापार नहीं है, पैसा नहीं है, प्रलोभन नहीं है, तो भय नहीं है । भय जो है, प्रलोभन के साथ जुड़ा है ।

जिज्ञासा: आपमे 'भय' नहीं है ये तो पता चलता है ।

उत्तर: भय नहीं है तभी तो जी पाते हैं, नहीं तो हम कब के मर जाते !!!

जिज्ञासा: बौद्धिक नियम में 'असंग्रह' लिखा है, अध्ययन करते समय में असंग्रह का अभ्यास कैसे करूँ ?

उत्तर: वो तो आचरण के अर्थ में यह सब आता है । हम तो अपने पास पैसा रखते नहीं । (लेकिन) हमारा कोई काम रुकता नहीं। ये मॉडल बनेगा की नहीं ? अभी इस दर्शन के लोकव्यापीकरण में जो धन लग रहा है, हम तो किसी को कुछ नहीं कहे हैं, पैसा लगाने ... अपने आप से लगाते हैं । ये सब (मानव) के लिए है, ये जनजीवन के लिए मानव तीर्थ है ।

जिज्ञासा: अध्ययन करते समय 'असंग्रह' का अभ्यास करते हुये अपनी आवश्यकताओं को कैसे पहचानू ?

उत्तर: ये अपने आप आता है ... सच्चाई जब अवधारणा में आता है, तो स्वाभाविक रूप में असंग्रह शुरू होता है।

जिज्ञासा: उसके पहले असंग्रह विधि से जीने का प्रयत्न करें की नहीं ?

उत्तर: प्रयत्न तो करना ही चाहिए, धीरे-धीरे। उसमें जल्दी करने पर एक जगह उखड़ गया, ऐसा लगता है ... हमारे स्वभाव में आए, तब करना । पत्ते से जो फल मिलता है वो वस्तु आपका है, और वस्तु चाहिए शरीर यात्रा के लिए । नियम तो ऐसा ही है।

जिज्ञासा: असंग्रह को 'आवश्यकता से अधिक उत्पादन' ऐसे परिभाषित किया है | अध्ययन करते समय, अपनी आवश्यकताओं को पहचान कर उससे अधिक उत्पादन करना उसका प्रयत्न तो मैं कर सकता हूँ ?

उत्तर: इतना तो करना ही पड़ेगा। स्वंयस्फुर्त होगा यह ।

जिज्ञासा: इसके बाद आपने 'स्नेह' लिखा है ... मनुष्य के प्रति स्नेह ।

उत्तर: मनुष्य के प्रति स्नेह, अस्तित्व के प्रति स्नेह, विकास, विकासक्रम के प्रति स्नेह, जागृति, जागृति क्रम के प्रति स्नेह इतने स्नेह के लिए विस्तार है, इतनी जगह में जाता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन काल में यह स्थिति आती है, बाकी वस्तुओं के प्रति तो स्नेह हो जाता है, पर मनुष्यों के प्रति हर समय स्नेह बना रहता है ऐसा नहीं होता ? इसका अभ्यास कैसे करूँ ? क्या मनुष्य के साथ संबंध को स्वीकारना से होगा ?

उत्तर: अनुभव के बाद स्नेह हर वक्त बना रहेगा । इसका अभ्यास, समझना ही है ... पहले सभी सम्बन्धों को स्वीकारना बनेगा, सम्बन्धों के प्रयोजनों को समझना पड़ेगा, उसी का नाम है "अध्ययन" । सम्बन्ध, सम्बन्ध का प्रयोजन को स्वीकारना, प्रयोजन स्वीकारने से अभ्यास होता है, अभ्यास होता है, तो अधिकार बनता है, अधिकार बनने पर प्रमाण होता है, प्रमाण होने पर परंपरा बनता है ।

जिज्ञासा: जो ‘सात प्रकार’ के संबंध है जैसे माता-पिता, पुत्र-पुत्री इन्हीं को स्वीकारने की बात कर रहे हैं आप ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: ये सात संबंध ‘क्रिया’ के रूप में साक्षात्कार होता है क्या ?

उत्तर: साक्षात्कार नहीं होता, व्यवस्था के अर्थ में <u>विश्लेषण</u> होता है । विश्लेषण के वस्तु को अवधारणा में कैसे लाओगे ??

जिज्ञासा: इसीलिए पूछा, क्योंकी दर्शन में 2-3 जगह 'गुरु संबंध का बोध' होता है ऐसा भाषा आया है, उसे कैसे समझे?

उत्तर: गुरु शिष्य संबंध क्या है ... एक देने वाला एक लेने वाला । क्या ? ज्ञान: अस्तित्व दर्शन ज्ञान, जीवन ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान, इतना ही ज्ञान है । 'गुरु' का मतलब 'ज्ञान', इसीलिए बोध में रखा है उसे ।

जिज्ञासा: क्या गुरु-शिष्य सम्बन्ध का मतलब - श्रद्धा के अर्थ में है ...शिष्य में श्रद्धा, गुरु में वात्सल्य होता है, यह स्वीकारना?

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: इसके बाद (बौधिक नियम में) 'सरलता' और 'अभय' लिखा है ?

उत्तर: सरलता का मतलब, सब के साथ जी पाना, चारों अवस्थाओं के साथ जी पाना, वो विश्लेषण विधि से आता है, मानव के साथ व प्रकृति के साथ संबंध में कैसे हम विश्वास निर्वाह करें । अभी नहीं हो पाता है..किसी को हम दुत्कारे रहते हैं, किसी को हम पकड़े रहते हैं ...

जिज्ञासा: उसके भी परिभाषा के अनुसार मैं इसमें जीने का प्रयत्न कर सकता हूँ ...

उत्तर: परिभाषा के अनुसार भाषा, भाषा के अनुसार अर्थ, अर्थ के अनुसार प्रयोजन , प्रयोजन के आधार पर ज्ञान, ज्ञान के आधार पर आचरण, आचरण के आधार पर परंपरा, परंपरा के आधार पर प्रयोजन, ऐसा बनता है ।

जिज्ञासा: आपसे ये सुना था की 'अध्ययन मे जो अभ्यास है' ये बौद्धिक नियम, सामाजिक नियम, प्राकृतिक नियम ही अध्ययन के लिए अभ्यास है... तो उसको मैं अपने जीने में कैसे क्रियान्वित करूँ ?

उत्तर: 'ज्ञान' आधार होगा, कि 'प्रक्रिया' आधार होगा ?

जिज्ञासा: आधार तो ज्ञान ही होगा । जैसे स्वधन, स्वनारी/स्वपुरुष, दयापूर्ण कार्य व्यवहार, यह सामाजिक नियम है , इसमें जिये बिना एक व्यक्ति का अवधारणा हो जाएगा ?

उत्तर: जिये बिना नहीं होगा, केवल विचार से नहीं होगा - <u>जीने</u> पर ही होगा । श्रवण विधि से सुनकर अर्थ को यदी ग्रहण करते हैं, वो अवधारणा में जायेगा । अर्थ को ग्रहण न करके 'भाषा' को पकड़ लेने से अवधारणा होगा नहीं...

जिज्ञासा: यदि मैं परधन, परनारी, परपीड़ा सोचते रहूँ तो साक्षात्कार होना संभव है ?

उत्तर: होता ही नहीं । अभी सभी लोग 'जी रहे हैं' - ऐसा मानते हैं, जबकि मर चुके रहते हैं ... आदर्शवाद रहस्य में मर गये , भौतिकवाद अपराध संघर्ष और युद्ध में मर गये, 'मर कर भी जीवित हूँ' - ऐसा सोचते हैं ।

जिज्ञासा: पहले आचरण के रूप में मुझे स्वीकारना पड़ेगा, तभी साक्षात्कार की संभावना बनती है ना ?

उत्तर: भाषा के अर्थ में ज्ञान, अर्थ को समझने पर ज्ञान होता है, पठन समझ नहीं है, 'समझ', भाषा का अर्थ है ।

जिज्ञासा: जैसे मान लीजिय यदी मैं अभी परधन, परनारी, परपीड़ा को सोचता हूँ , तो पहले मुझे अपनी इस सोच को परिवर्तित करना पड़ेगा, तभी साक्षात्कार की अहर्ता आएगी ?

उत्तर: पहले अभ्यास, अभ्यास को चित्रित करना पड़ेगा, अभ्यास में शब्द का अर्थ, शब्द के अर्थ में जीने के लिए प्रवृत्ति होना । केवल बोलने से, भाषा से अध्ययन होता नहीं । भाषा के अर्थ में अध्ययन है, अध्ययन के अर्थ में जीना, इसका प्रवृत्ति ।

जिज्ञासा: ऐसा हर समय नहीं हो पाता.. जैसे मैं हर समय दयापूर्ण व्यवहार कर पाऊँ, अनुभव के बाद ही हो पाएगा?

उत्तर: अनुभव के बाद ही ये स्थिर होगा। बढ़िया !

जिज्ञासा: स्वधन के लिए प्रतिफल, पारितोष, पुरस्कार लिखा है । प्रतिफल के लिए लिखा है, 'श्रम और सेवा का प्रतिफल' । कम्प्युटर पर काम करना सेवा माना जाएगा ?

उत्तर: मनुष्य की सुगमता के लिए लिखा है । सेवा यदि अनुभव के अनुकूल हो तो तुम्हारा कम्प्युटर ठीक है ।

जिज्ञासा: कम्प्युटर मानवीय व्यवस्था के अर्थ में होना चाहिए ?

उत्तर: अनुभव के अनुकूल हो तो कम्प्युटर ठीक है । हमारे पास एक कंप्यूटर विशेषज्ञ आया था, हमने उनसे पुछा, "मानव को पहचानोगे कि यंत्र को पहचानोगे ? ...वो चल दिया ... 'सुपर कम्प्युटर' को बनाया उस आदमी ने । उनसे बात किया... तुम आदमी को सिखाओगे कि लोहे को सिखाओगे? वो उत्तर दे नहीं पाए, चले गए ... क्या करें बताओं?

जिज्ञासा: आप जो मेरे साथ अभी कर रहे हैं ये 'करुणा' है ?

उत्तर: ये दया है, दया का भाग है ।

जिज्ञासा: प्रतिफल विधि से जीए बिना अध्ययन सफल हो सकता है ? क्या श्रम से उत्पादन करना अध्ययन विधि में एक अनिवार्य अभ्यास है, की 'पारितोष विधि' भी ठीक है ?

उत्तर: अध्ययन हो सकता है । उत्पादन अनिवार्य नहीं है... जरूरत है तो कर सकते हैं, पारितोष विधि से चाहे परिवार दें, मित्र दें, या हमारा श्रम से संग्रह किया...यह सब ठीक है, इससे समझने के लिए तकलीफ़ नहीं है ।

जिज्ञासा: मगर उसको प्रमाणित करने में तकलीफ़ होगी ?

उत्तर: प्रमाणित करने में जो तकलीफ़ आता है उसको आप स्वंयस्फुर्त विधि से ठीक करोगे। ऐसा मेरा सोचना है । हाँ, कोई समय आएगा, अध्ययन में, आपका स्वयं का संतुष्टि नहीं होगा, श्रमशीलता के बिना, तब उत्पादन विधि में लग जाते हैं | उसके बिना एक आदमी का वैभव कैसे बनेगा?

जिज्ञासा: तीसरा नियम है प्राकृतिक नियम, अध्ययन काल में प्राकृतिक नियम पूर्वक जीना...

उत्तर: प्राकृतिक नियम मतलब मनुष्येतर प्रकृति , मनुष्येतर प्रकृति में तीन अवस्था, तीन अवस्था के साथ कैसे जीयें, इसे तय करना ।

जिज्ञासा: इसकी स्वीकृति तो है मुझमें ...

उत्तर: अभी तक मनुष्येत्तर प्रकृति के विपरीत चल रहे हैं । जंगल युग से अभी तक इतना ही हुआ कि जीवों से अच्छा जिये, इसमें सफल हुये। हम सफलता को जानता हूँ, असफलता तो ढेर है ... धरती ही बीमार हो गई, और क्या चाहते हो ।

जिज्ञासा: इसकी 'मानसिक स्वीकृति' होते हुये भी क्योंकि अभी व्यवस्था नहीं है तो ऐसा जीना अभी असंभव लगता है ?

उत्तर: अनुभव के बिना जीना बनता नहीं। प्रकृति के साथ लड़ना बनता है, प्रकृति के साथ लड़ते लड़ते धीरे धीरे मनुष्य के साथ लड़ने लगा है ।

जिज्ञासा: अनुभव के बिना प्राकृतिक नियम में जीना बनता है ?

उत्तर: नहीं ।

जिज्ञासा: जैसे पदार्थ, प्राण, जीव के साथ मैं पूरकता विधि से जीना चाहता हूँ, ऐसा मेरी स्वीकृति में तो है ?

उत्तर: अवधारणा होना, अनुभव होना, तब जीना होगा ... नहीं तो नहीं होगा । नही तो ये मात्र भाषा होगा, भाषा से मतलब नहीं है, जीने से मतलब है, आचरण से मतलब है, आचरण को कैसे ठीक करोगे ?। सहअस्तित्व को समझे बिना, अनुभव किये बिना, जीना बनता नहीं।

न्याय, स्वभाव, विवेक तथा विज्ञान

जिज्ञासा: 'स्वभाव' के लिए जो परिभाषा है उसको 'मौलिकता' कहा है, और मौलिकता का परिभाषा दिया है 'धर्म और स्वभाव' । तो ये दिख रहा है कि ‘स्वभाव’ कि परिभाषा में ‘धर्म’ भी आ रहा है - क्या ये दोनों जुड़ा हुआ है ?

उत्तर: वो तो जुड़ता ही है, स्वीकृति में जाकर अवधारणा में आ जाता है ।

जिज्ञासा: जैसे मेरा स्वभाव व धर्म है, ये इकट्ठा साक्षात्कार होगा कि अलग अलग ?

उत्तर: अलग अलग होता है … मानव का स्वभाव और धर्म अलग है, उसी प्रकार जीव, प्राण, पदार्थ का स्वभाव धर्म अलग अलग है सबको स्पष्ट किया है ।

जिज्ञासा: ये जो ‘अलग-अलग’ स्पष्ट किया है आपने, ये तो चित्रित होकर भाषा हो गया, ये अवधारणा में भी अलग अलग स्पष्ट होता है कि इकट्ठा होता है ?

उत्तर: “अलग अलग रहना” - अवधारणा में समझ में आता है ।

जिज्ञासा: कल जो बात हुई थी, उसमे पदार्थ, प्राण और जीव का स्वभाव तो चित्रण में ही रुक जाता है...

उत्तर: चित्रण में रुक जाता है । 'रहना' एक अलग चीज़ है, 'होना' एक अलग चीज़ है - "होने" के रूप में चारों अवस्था अवधारणा में आता है, "रहना" चित्रण में रुक जाता है ।

जिज्ञासा: जैसे आपने कल बताया था, अध्ययन विधि में जो मानवीय स्वभाव है ये भी 'उदारता' के रूप में अवधारणा में आ जाता है ..

उत्तर: हाँ, मानवीय स्वभाव 'बोध' तक पहुँचता है ।

जिज्ञासा: मानवीय स्वभाव अवधारणा में आने के लिए, क्या 'जीवन' को पहले समझना पड़ेगा? ऐसा लगता है 'जीवन की निरंतरता' स्वीकारे बिना स्वभाव भी स्पष्ट नहीं होगा ?

उत्तर: व्यवस्था यदी समझ में आता है, मानव का धर्म समझ में आता है, नहीं तो नहीं आता । मानव धर्म कहाँ है ? आज पत्थर और मिट्टी को पूज रहे हैं, उसी को पढ़ा रहे हैं, उसी को उत्सव मानते हैं, मिठाइयाँ खाते हैं ।

जिज्ञासा: मानव का धर्म 'समझ में आना' मतलब उसका 'साक्षात्कार' कर लेना ?

उत्तर: साक्षात्कार करना, बड़ी भारी काम है....मानव धर्म और स्वभाव समझ में आना, ये साक्षात्कार का पहला गुरु मंत्र है । इसके लिए अध्ययन । अध्ययन से यह होता है ।

जिज्ञासा: 'मानव धर्म' में सह-अस्तित्व, जीवन, जीवन जागृति समाया है?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: मुझे लगता है अभी ये भाषा के साथ तर्क के रूप में तो मुझमे स्वीकार हुआ है....

उत्तर: आपको पहला बता दिया, अनुभव में ही यह पक्का होता है । भास् आभास प्रतीति अनुभूति कहा है…

जिज्ञासा: मैं ये जानना चाह रहा हूँ कि इन सारे मुद्दों पर मेरा 'अवधारणा' हो गया है, कि ये मात्र 'आभास' में है इसको मैं कैसे जाचूँ ?

उत्तर: इसको अध्ययन विधि से जानोगे, अभी दूसरा कोई विधि नहीं है – अध्ययन विधि से मानना, उसी का अवधारणा होता है, अनुभव हो जाता है।

जिज्ञासा: 'अवधारणा' हुआ या मात्र 'आभास' हुआ है, कैसे पता चेलगा ?

उत्तर: अनुभव में जाता है तो अवधारणा हुआ, इससे प्रमाण, फिर परंपरा, फिर व्यवस्था। इसे जीवन तृप्ति कहा है, प्रमाण होता है, परंपरा होता है, दूसरे कि आवश्यकता बनता है । जैसे, अभी मैं कुछ नहीं कहता हूँ, किसी को समझने

की आग्रह नहीं करता हूँ, फिर भी कई लोगों कि आवश्यकता बन रहा है कि नहीं ? क्यों बन रहा है ? इतना पाप कर्म, अपराध करते हुए, भ्रमित कर्मों को करते हुए इतने लोगों ने इस विकल्प को क्यों स्वीकारा ? इसमें कुछ उपकार होगा, तभी स्वीकारा है । अध्ययन में यदि अपनी तृप्ति होती है, तृप्ति का आसार बनता है, तृप्ति का संभावना बनता है , अनुमान बनता है । चार पांच सूत्र विधि से सच्चाई को हमने बताया है ... कोई ना कोई विधि से अपने को स्वीकार हो जाता है ।

जिज्ञासा: मानवीय स्वभाव का जो परिभाषा दिया है आपने उस परिभाषा के अनुसार ....

उत्तर: वो हम आचरणपूर्ण दिया है, अपने आचरण में लाकर के, जीकर के, देख करके , फिर कहा है उसमें कोई कमी होगा तो आप लोग बतायेंगें ।

जिज्ञासा: इन आचरण कि परिभाषाओं को चित्रित करते-करते चित्रण में जो 'समाता नहीं' है, वो फिर साक्षात्कार हो जाएगा?

उत्तर: देखो, आचरण तो चीटी भी करता है बाघ, हाथी भी करता है ... उन उन के आचरण में कोई शंका नहीं है । मानव के आचरण में शंका के अलावा और कुछ नहीं है। हमारे आचरण रूपी अनुभव के आधार पर इसको लिखा है, ये लिखने का आधार हमारा स्वयं का आचरण ही है ।

जिज्ञासा: मानवीय स्वभाव का 'आभास' होने से, उसको 'साक्षात्कार' में कैसे परिवर्तित करूँ?

उत्तर: ठीक है, इसे आप ही try (प्रयत्न) करेंगे...आपके अभ्यास कि बात है ।

जिज्ञासा: मानवीय स्वभाव के लिए मुझमें प्राथमिकता बनेगी तब हो जाएगा?

उत्तर: मुख्य बात वही है !!

जिज्ञासा: आपके लिए ये सारा (मानवीय आचरण) स्वभावगत है, और आपके साथ व्यवहार करते समय मैं पहचान लेता हूँ कि, 'ये आपने धीरता किया', 'वीरता किया' - आपके व्यवहार से मुझे पता चलता है...ये जो मैंने पहचाना ये साक्षात्कार है, कि केवल अनुमान है?

उत्तर: अनुमान है, आपके लिए एक headline है (शीर्षक है) ...यह बनने से उसका आप चयन करते हो, चयन करके उसमें से कुछ बात को स्वीकारते हो, कुछ को नकारते हो।

जिज्ञासा: आपके आचरण से मुझमें कुछ अनुमान बनता है, उस अनुमान के आधार पर ऐसे जीने के लिए मैं प्रवृत्त होता हूँ...

उत्तर: हमारे आचरण से जो कुछ भी प्रमाण होता है, उसको देखकर आपका हृदय स्वीकार करता है । 'आपके अनुभव में हमारे अनुभव से ज्यादा वस्तु समझ में आता है', - (विगत के) ग्रन्थों में ऐसा कहा है...हमारे तरीके से आप पारंगत हो ही सकते हो । अनुभव करना ही पारंगत होने का मतलब है ... उसके बाद आपका कलपनाशीलता कर्मस्वतन्त्रता शेष रहता ही है... इसलिये आप हमसे अच्छा हो सकता हैं, ऐसा लिखा है हमने ...हमसे अच्छा होने कि संभावना बना है, हम minimum (न्यूनतम) अच्छा हूँ, minimum अच्छा कि हालत ये है ... की उतने को पचाने में (आप लोगों का) दिन रात्रि व्यतीत होता है ... !!!

जिज्ञासा: आपने 2009 में कहा था कि 'स्वभाव के लिए हम तृषित हो जाते हैं, तृषित होने के आधार पर अनुभव होता है, अनुभव होने के बाद ये हमारा स्वभाव हो जाता है' - इसका मतलब अनुभव के बाद ही मैं अपने धर्म और स्वभाव में, मानव धर्म-स्वभाव में हो पाउँगा?

उत्तर: उससे (अनुभव से) पहले तृषित होना ही होगा, जिज्ञासु होना, अपेक्षित होना, यही बात है ।

जिज्ञासा: तो भास, आभास, प्रतीति ये भी अनुभव का ही होता है ?

उत्तर: अनुभव के पहले, अनुभव के लिए ही भास, आभास, प्रतीति होता है ।

जिज्ञासा: इसमें सुख का भी भास आभास, प्रतीति हो जाता है ?

उत्तर: वस्तु स्थिति सत्य के रूप में हो जाता है । समाधान = सुख = मानव धर्म

जिज्ञासा: स्वभाव का एक परिभाषा दिया है "गुणों कि उपयोगिता" । मेरे लिए मेरा स्वभाव – 'मेरे' गुणों कि उपयोगिता है ... इसका ये मतलब है कि मेरा जो गुण है, जो मेरा विचार है, जो इच्छा है, उनकी उपयोगिता स्वभाव के रूप में स्वीकृत हो जाता है?

उत्तर: बस, इतना ही बात है ... अनुभव के <u>बाद</u> ! उसके पहले बद-दिमाग ! हम अच्छे हैं, बाकी सब जूता खाने वाले हैं...ऐसा ही तो सोच है, अभी का... ।

हम क्या हैं अभी ? – लैपटॉप ..उसमे जो भिड़ा है, सब सत्य है....इन्टरनेट में अभी ९९% कुकर्म है, ऐसा सुना हूँ... हम तो देखते ही नही, न हमको देखना है....इन्टरनेट में कुकर्म के लिए प्रेरणा है ९९% ...अच्छे वाले बात को कोई खोलता ही नहीं!!

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जो देव मानव, दिव्य मानव का स्वभाव है कृपा, दया, करुणा ......

उत्तर: वो अनुभव में नहीं आता है, विश्लेषण में आता है... मानव आता है, मानवीयता आता है अनुभव में । मानव ही देव मानव, दिव्य मानव के रूप में कार्य करता है । इसको हम करके देखा है, और ऐसा जीया जा सकता है ।

जिज्ञासा: मानवीयता का अवधारणा होता है उसका मतलब है कि ....

उत्तर: मानवीयता का अवधारणा जागृत चेतना के आधार पर, 'जागृत चेतना' में तीनों आता है मानव, देवमानव, दिव्य मानव।

जिज्ञासा: जैसे अध्ययन विधि से जीते समय 'धीरता वीरता उदारता' का मैं अभ्यास या प्रयत्न कर सकता हूँ, वैसे ही दया कृपा करुणा पूर्वक जीने का भी अभ्यास करूँ या नहीं ?

उत्तर: जीने का क्या मतलब – दूसरों को न्याय दिलाना उदारता, ये लिखा है , इसको छोडकर उदारता मिलेगा नहीं । उदारता यही मिलेगा मैं दारू पिता हूँ तो दूसरों को पीला दूँ ये कर ही रहे हैं, अब मानव जात!

जिज्ञासा: 'दूसरों को समझाने' का अहर्ता देव मानव, दिव्य मानव में ही है या ये मानव चेतना में भी आ जाता है ?

उत्तर: मानवता एक शुरुआत है न्याय का, उसके बाद धर्म फिर सत्य । ऐसा प्रगट होगा... हमसे भी ऐसे ही हुआ। अभी हमने 'धर्म' का प्रमाण प्रस्तुत किया, सत्य का प्रमाण हुआ नहीं । लोकव्यापीकरण हुए बिना होगा भी नहीं , सार्वभौम व्यवस्था के बिना ये होगा नहीं ।

जिज्ञासा: दूसरे को समझाने का अधिकार, दया कृपा करुणा स्वभाव के साथ ही हो पाता है ? अनुभव के बाद मानव-चेतना दूसरों को बोध करा सकता है, कि देव-मानव दिव्य-मानव प्रमाण में ही कराएगा ?

उत्तर: सब करा सकते हैं... हम तो किए ही है ।

जिज्ञासा: स्वभाव को आपने "मूल्य" भी कहा है ... मूल्य को 30 मूल्य के रूप में कहा है ...ये सारा ही जीवन का 'स्वभाव' है ?

उत्तर: हाँ , सारा मूल्य ही स्वभाव बनता है । उसके बाद मनोविज्ञान लिखा है उसमे 122 मूल्यों को लिखा है । जागृत व्यक्ति का जो तीनों प्रमाण(अनुभव, विचार, व्यवहार) के साथ ये जीवन मूल्य होते हैं, 122 आचरण होता है, वो सब लिख दिया ।

जिज्ञासा: एक प्रकार से स्वभाव तो चित्रित हो जाता है, 'मानव मूल्य' के रूप में, और 'मूल्य' का बहुत बड़ा स्वरूप दिखता है जिसमें सारे मूल्य समा जाते हैं ...

उत्तर: अध्ययन विधि से भास आभास ही होता है, प्रतीति होने के बाद ही अनुभव की बारी आती है।

जिज्ञासा: इस प्रकार, कुछ शब्द, जैसे 'मूल्य', 'भाव', 'स्वभाव', 'नियम', इनका एक निश्चित परिभाषा भी है, और यह पुरे के अर्थ में, विशाल रूप में भी हैं, 'सह-अस्तित्व' के अर्थ में ...

और एक उदाहरण है, जैसे 'धर्म' शब्द है, 'रूप-गुण-स्वभाव-धर्म' सूत्र में आया है, और मानव के संदर्भ में व्यवहार के लिए 'न्याय-धर्म-सत्य' सूत्र में भी आया है... क्योंकी जीवन में अनुभव ही बोध, चित्रण, विचार, व्यवहार में आता है...इसीलिए 'धर्म' अनुभव से लेकर विचार-व्यवहार तक है, इस अर्थ में इसे समझना होगा....

उत्तर: सहअस्तित्व ही व्यक्त है - भाषा के रूप में सब अलग दिखता है - 'श्रवण विधि' से, 'समझ विधि' से सब एक है, सम्बंधित हैं, समझ में आता है । भाषा के <u>अर्थ</u> में अध्ययन है ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य 'वस्तु एक है', उसे अनेक आयाम, कोण में जब बताते हैं, तो भाषा, परिभाषा के रूप में सब <u>अलग-अलग लगता है</u>, परन्तु है नहीं, सब <u>एक ही सहअस्तित्व</u>, एक ही वास्तविकता को व्यक्त कर रहा है - अध्ययन से, यह तय होता है ...जैसे मेरे में पहले बहुत सारे बिखरे चित्र थे, अब इनमे अंतर्संबंध स्पष्ट हुआ है, चित्र कुछ सिमट सा गया है, ऐसा लगता है ?

उत्तर: इतना ही बात है....अध्ययन से अनुमान होता है -'ऐसा हो सकता है', यह कल्पना में आता है ; उसके बाद साक्षात्कार में 'वस्तु है', 'ऐसा है' यह पता लगता है,

इसमें भाषा और तर्क समाप्त हो जाता है, यही अवधारणा-परिपुष्ट अनुमान है ;

बोध में यह पक्का होता है- "क्यों है, कैसे है", आ जाता है ; और

अनुभव में जाकर स्थिर होता है - "ऐसा ही था, ऐसा ही है, ऐसा ही रहेगा" - यह आ जाता है ।

जिज्ञासा: जो 'जीवन मूल्य' है सुख, शांति ,संतोष, आनंद यही 'धर्म' है, क्योंकि सुख ही मानव धर्म है ?

उत्तर: यही धर्म है । धर्म को ही जीवन मूल्य कहा है । दिव्य मानव स्वरूप में ही ये पूरा होता है ... सुखी- शांतिपूर्वक होना न्याय से होता है मानव चेतना में; सुख, शांति संतोष पूर्वक जीना देव मानव से होता है, और आनंद, ये दिव्य मानव रूप में प्रमाणित होता है ।

जिज्ञासा: अनुभव 'एक' होते हुये, भी इनमे जो अंतर है सुख शांति संतोष आनंद में ...

उत्तर: अनुभव किसको होता है ?

जिज्ञासा: आप से सुना है की अनुभव में मानव, देव मानव, दिव्य मानव इकठ्ठा आता है, अथवा समान रहते हैं | ऐसे होते हुए भी इनमे जो अंतर है ...

उत्तर: क्रम से (अनुभव) अभिव्यक्त होते हैं, उसके आधार पर सुख शांति संतोष आनंद प्रमाणित होता है । अनुभव होने से तीनों चेतना इकठ्ठा समझ में आता है, तीनों चेतना का दृष्टा-पद में हो जाता है, पारी पारी से व्यक्त होता है... दिव्य मानव को सब होता है | जैसे अभी हम ही हैं, अभी मानव चेतना प्रमाणित करने में लगे हैं, बाकी दो रखा ही है!

जिज्ञासा: जी| 'धर्म' की परिभाषा में 'सत्य' और 'स्वभाव' दोनों समाया है, और स्वभाव को आपने 'स्वंय में व्यवस्था समग्र व्यवस्था में भागीदार' - ऐसे भी परिभाषित किया है, जबकि 'स्वंय में व्यवस्था' को धर्म भी कहा है ... इसीलिए धर्म के साथ ही स्वभाव है?

उत्तर: व्यवस्था में भागीदारी के बिना प्रमाण होता ही नहीं । धर्म ही स्वभाव है ! धर्म ही आचरण है । इसलिए, मानव ने मानवत्व को छोड़कर अभ्यास किया जंगल युग से अरबों खरबों वर्ष से मानव जात को अपना स्वभाव कहाँ मिला? अपराध को, असत्य को, नकारने वाली बात बहुत हुई ... सकारने वाली बात नहीं हुआ ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में पहले क्या साक्षात्कार होगा 'स्वभाव' की 'धर्म ?

उत्तर: धर्म साक्षात्कार होगा, उसी के आधार पर स्वभाव बनता है ... मूल्यों के साथ ही जीते समय में स्वभाव पता लगता है, दूसरा कोई विधि नहीं है ।

जिज्ञासा: यहाँ "धर्म साक्षात्कार" से तात्पर्य सहअस्तित्व, सत्य, जीवन, जीवन जागृति? यही व्यवस्था है, यही समाधान के अर्थ में आ जाता है, इसीलिए "ज्ञान ही सुख" है, इसी अर्थ में मानव धर्म = सुख = आनंद = समाधान = ज्ञान ?

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: जो न्याय धर्म सत्य तुलन दृष्टियाँ है, ये तीनों इकट्ठा ही काम करते हैं, कभी न्याय, कभी धर्म ,कभी सत्य - ऐसे काम करते हैं?

उत्तर: जैसे आपके साथ न्याय, इनके साथ धर्म, उनके साथ सत्य - तीनों का अधिकार एक साथ होता है । अनुभव सत्य में ही होता है, सत्य में धर्म और न्याय समाये रहते हैं ।

जिज्ञासा: जीवन के जितने क्रियाएं हैं, इसे आपने अनुभव मूलक विधि से ही परिभाषित कीया है…

उत्तर: हाँ । सारा परिभाषा हमने अनुभव मूलक लिखा है, आप पहले का पूछते हो, इसीलिए बारम्बार अपन फसते हैं!

जिज्ञासा: क्या अध्ययन विधि में सर्वप्रथम 'गुरु संबंध' को पहचानना होता है, उसके बाद ही अध्ययन होता है ?

उत्तर: ठीक है ना..गुरु का मतलब है अनुभव मूलक विधि से प्रस्तुत होने वाला, अनुभव के लिए तृषित रहना शिष्य, इतना ही लिखा है …

जिज्ञासा: आपको एक ‘जागृत व्यक्ति’ के रूप में स्वीकार लेना ये साक्षात्कार है कि चित्रण ?

उत्तर: साक्षात्कार होने का प्रमाण चाहिए ना, आपको जीता हुआ मैं देख लेता हूँ तो आपने (गुरु सम्बन्ध) स्वीकार लिया, नहीं तो नहीं स्वीकारा - इतना ही बात है ।

जिज्ञासा: न्याय की परिभाषा में जो ७ संबंध आए हैं, इसको ‘प्रयोजन के अर्थ में संबंध’ लिखा है ?

उत्तर: प्रयोजन व्यवस्था के अर्थ में, व्यवस्था अनुभव के अर्थ में , अनुभव परंपरा के अर्थ में … ऐसा एक दूसरे से जुड़ा है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में अवधारणा हुये बिना संबंध भी ठीक से स्वीकारना बनेगा नहीं ?

उत्तर: नहीं । अनुभव के बिना नहीं होगा !

जिज्ञासा: मेरे लिए सामने अभी अवधारणा ही है, इसीलिए उसके लिए पूछ रहा हूँ ।

उत्तर: अवधारणा में, सहअस्तित्व, सहअस्तित्व में जीवन, जीवन जागृति, आता है, इसी का अनुभव होता है... अनुभव में इतना ही है - सूत्र.. उसके बाद आता है जागृति, अनुभव ही जागृति है ।

जिज्ञासा: आपके साथ व्यवहार में जब पहचानता हूँ की 'ये आपने मेरे साथ न्याय किया' - ये मेरे लिए साक्षात्कार है या सूचना है?

उत्तर: नहीं, ये कोई साक्षात्कार नही है, यह सूचना है । अभी आपके साथ जो कर रहे हैं, ये आपके लिए सूचना है, हमारे लिए अनुभव है । पहले से कहा है, अनुभव मूलक विधि से प्रस्तुत करता है वो गुरु कहलाया, जिज्ञासा सहित ग्रहण करने के लिए प्रस्तुत होता है, वो शिष्य।

जिज्ञासा: 'न्याय' का प्रतीति होना और 'स्वभाव' प्रतीति होना, दोनों एक ही चीज़ है ?

उत्तर: भास आभास में स्वीकृति हो जाती है, स्वीकृति होने से अवधारणा होता है, अवधारणा होने से अनुभव होता है।

जिज्ञासा: भास् आभास में जो स्वीकृति है, वो 'इच्छा विचार' रूप में स्वीकृति है ?

उत्तर: हाँ । तीव्र इच्छा, इच्छा की प्राथमिकता विधि से अवधारणा होता है, अवधारणा होने से अनुभव हो जाता है, अनुभव नहीं हुआ, मतलब अवधारणा नहीं हुआ । इसके अलावा क्या कसौटी लगाया जाये ?

जिज्ञासा: कसौटी तो दूसरा लगता नही, उसके पहले अपने स्थिति को लेकर भ्रमित होने, या अधिमूल्यन की सम्भावना रहेगा

ही...

जिज्ञासा: हम लोग जो 'आभास' को ही 'अवधारणा' मान लेते हैं, यह चित्त ही मान लेता है, की 'मुझे अवधारणा हो गया' ? अथवा 'बोध' होने के पहले चित्त ही मान लेता है की 'मुझे बोध हो गया', अथवा अनुभव होने के पहले 'चित्त' ही मान लेता है की 'मुझे अनुभव हो गया' ?

उत्तर: यही बात है !!! <u>कल्पना</u> को ही अवधारणा मान लेते हैं ... चित्रण भी नहीं है, कल्पना है, चित्रण की पूर्व रूप को ही मान लेते हैं !!! आभास भी नहीं, कभी भास होने को ही बोध मान लेते हैं !

जिज्ञासा: आभास की स्थिति में ये सारा जो सूत्र आपने दिया है, सच्चाई का, यह तर्क से पूरा जुड़ जाता है ?

उत्तर: अनभव के पहले यह कोई स्थिर नहीं होता ... इसमें जीने की इच्छा होना| (दूसरों को) <u>बोलने</u> की इच्छा से नहीं होता, हमारे साथ तो यही हुआ .. जीने में न्याय धर्म सत्य आता ही है ।

जिज्ञासा: इसी जगह के लिए आपने एक संवाद में कहा था – "अध्ययन से निष्कर्ष निकलते हैं । निष्कर्ष को अंतिम बात मानते हैं, तो बोलने में लग जाते हैं । अनुभव को अंतिम बात मानते हैं तो स्वयं प्रमाणित होने में लग जाते हैं । बोलना complication है । जीना simplification है "

उत्तर: ठीक तो कहा है!

जिज्ञासा: ऐसा दिखता है की भास-आभास में भी, श्रवण-मनन मी ही 'स्पष्टता आ गया' ऐसा लगता है....समाधान जैसा लगता है, जीने की समस्या न्यूनतम या नहीं की बराबर लगता है, हम बोलते हैं तो लोग प्रशंसा करते है, हमारा तर्क दमदार हो जाता है, शास्त्रार्थ सटीक हो जाता है ...

उत्तर: वो सब ठीक है । हम सही रास्ते पर चल रहे हैं, इसका यह सब संकेत है । इसी को अंतिम बात मान लेते हैं, तो वहीं रुक जायेंगे..या तो हम किसी को हांकते रहेंगे या हमको कोई हांकता रहेगा । अनुभव प्रमाण को अंतिम बात माना जाये । अनुभव को बता दिया, प्रमाण को बता दिया...

जिज्ञासा: मनोविज्ञान में आया है- 'अभी भी जीवन सहज रूप में मित्रता और निष्ठा का बोध होता है, ऐसे होते हुये भी व्यवहार, विचार, व्यवस्था के रूप में पहचानता है'... मित्रता और निष्ठा का बोध अवधारणा में होता है ?

उत्तर: हाँ, निष्ठा का बोध तो अवधारणा से होता है, अनुभव से प्रमाण होता है ।

जिज्ञासा: निष्ठा का बोध आचरण से ही संबन्धित है ?

उत्तर: हाँ, भाषा से अर्थ बहुत कम है, भाषा अधिक, अर्थ कम, प्रभाव बहुत अधिक है ... जैसे हम ही बैठे हैं, हमारा भाषा कितना है, प्रभाव कितना है, आप ही देख लो !

जिज्ञासा: इसमें 'दायित्व व कर्तव्य' की बात आई है ....

उत्तर: वो तो विश्लेषण में आता है भाई, अनुभव के बाद ।

जिज्ञासा: मनोविज्ञान में आया है "अनुभव क्षमता से संपन्न होने पर्यंत दायित्व और कर्तव्य बोध का मूल्याङ्कन होता है । उसके अनंतर स्वभावगत होता है ।"

उत्तर: ठीक लिखा है । अनुभव के बाद ही स्वभाव आता है।

जिज्ञासा: थोड़ा स्पष्ट करेंगें – मानव व्यवहार दर्शन में कर्तव्य का परिभाषा आया है – "सम्बन्धों की पहचान सहित निर्वाह क्रिया जिसमें निष्ठा का बोध होता है" ।

उत्तर: अध्ययन विधि से निष्ठा को बोध होता है ।

जिज्ञासा: सम्बन्धों में 'निष्ठा' स्वीकार होना उसका 'बोध' है ?

उत्तर: सम्बन्धों में निष्ठा तो अनुभव के पहले भी हो सकता है, अनुकरण विधि से … इससे बोध हो जाता है।

जिज्ञासा: इसी के लिए मनोविज्ञान में आया है – "अमानवीयता से मानवीयता में अनुगमन करने के लिए नियंत्रण पूर्वक कर्तव्य एवं दायित्व प्रमाणित होता है"

उत्तर: ऐसा ही है ।

जिज्ञासा: 'निष्ठा' भी और 'स्वभाव' भी अवधारणा में आता है... यह दोनों एक ही है ?

उत्तर: ये दोनों एक ही है ।

जिज्ञासा: दायित्व व कर्तव्य में अंतर क्या है ? दोनों इकठा समझ में आता है क्या ?

उत्तर: कर्तव्य का मतलब है परिस्थिति के अनुसार हम समाधान प्रस्तुत करते हैं ... दायित्व कर्तव्य एक साथ होता है … ये दोनों अलग होते नहीं.. सहअस्तित्व मरता नहीं...

जिज्ञासा: यह जो 'अलग-अलग' होता है, या लगता है, यह चित्रण है; जो 'इकठा' होता है - यह अवधारणा है ?

उत्तर: हाँ ! जैसे कर्तव्य-दायित्व के रूप में आता है .... कर्तव्य का मतलब, परिस्थिति के अनुसार, समय के अनुसार, समाधान प्रस्तुत करना, दायित्व में परंपरा के अनुसार होता है.... यह अलग अलग होते नही । दायित्व को बताना है, कर्तव्य रहता है; कर्तव्य को बताना है, दायित्व रहता है, निर्वाह करके बताना है, ये एक दूसरे के साथ पूरक रहते हैं ।

जिज्ञासा: गुरु शिष्य संबंध स्वीकारने के लिए चिंतन क्षेत्र में एक 'श्रद्धा' मूल्य आया है ।

उत्तर: गुरु शिष्य संबंध समझने के लिए, समझाने के लिए होता है। श्रेय की और गति को पाने के लिए श्रद्धा होता है।

जिज्ञासा: ये साक्षात्कार होता है क्या, अध्ययन विधि से ?

उत्तर: गुरु शिष्य का यही तो एक प्रमाण है ! प्रमाण को स्वीकारने वाला शिष्य, और गुरु - अनुभव के विधि से ... इसी सूत्र के आधार पर विश्लेषण के विधि से ये सब आता है ।

जिज्ञासा: जो 'श्रद्धा' मूल्य है, वो चिंतन में बताया है | ये अध्ययन विधि से साक्षात्कार होता है क्या ?

उत्तर: अध्ययन से साक्षात्कार होकर अवधारणा में आता है तो ठीक है, अवधारणा में नहीं आता है तो नही स्वीकारा । 'धारणा' का मतलब है 'आनंद'; 'अवधारणा', आनंद' के रास्ता का नाम है, जागृति का रास्ता का नाम है ।

जिज्ञासा: जी | 'अवधारणा' को ही अभ्यास दर्शन में 'योगाभ्यास' अध्याय में साधना के अर्थ में आपने 'धारणा' के भूमि से इंगित किया है…'अनुभव-विधि' में …

उत्तर: निदिध्यासन के बाद, यह होता है | आगे बोध और अनुभव …यही रास्ता है |

जिज्ञासा: 'सात सम्बन्ध' अनुभव के बाद जीने में आता है सुना आप से …. अध्ययन करते समय सातों सम्बन्धों के साथ जीने के बारे में मैं सोचूँ कि नहीं ?

उत्तर: सोचना पड़ेगा, अनुकरण विधि से ... उसके लिए अनुकरण करने पर 'समाधान समृद्धि' पूर्वक जीना पड़ेगा, समाधान समृद्धि का अनुकरण होगा, समृद्धि में श्रम नियोजन एक भाग है, श्रम के बिना उत्पादन होता नहीं । जागृत मानव का अनुकरण होता है ।

जिज्ञासा: ये जो सात संबंध है, प्रत्येक एक, एक 'क्रिया' है ऐसा भी आया है व्याख्या में ?

उत्तर: संबंध जो है, एक विश्लेषण है, व्यवहार का विश्लेषण है । व्यक्ति के साथ ही संबंध होता है, बाकी अवस्थाओं के साथ उपयोग, सदुपयोग है ।

जिज्ञासा: प्रत्येक संबंध एक 'क्रिया' है, फिर उस क्रिया के स्वरूप में कोई 'मानव इकाई' है ?

उत्तर: क्रिया के स्वरूप में हर इकाई है … मानव रूप में ही सम्बन्ध होता है… हर शरीर रसायनिक भौतिक रचना है, हमारा शरीर, व्यास का शरीर, यग्नवलिकजी का शरीर सब रसायनिक भौतिक रचना है।

जिज्ञासा: अभी जैसे हमारा संबंध देखने की विधि शरीरगत है ... अध्ययन विधि में मुझे संबंधों को 'जीवन' के आधार पर, 'व्यवस्था' के आधार पर पुनह अपने में 'सजाना' पड़ेगा, और इन सात क्रियाओं के आधार पर मैं जिन व्यक्तियों के साथ जीता हूँ, उन्हें पहचानना पड़ेगा?

उत्तर: हाँ , स्वीकारना पड़ेगा, फिर अवधारणा होगा, अवधारणा होने से अनुभव होगा । इसी का अध्ययन कराते हैं, ताकी इन आधारों पर सोचे .... व्यवहार में आता है मूल्यों का अनुभव .... कार्य व्यवहार से लेकर अनुभव तक प्रस्तुत है, इसीलिए इसमें विचार होना स्वाभाविक है, अनुभव होना स्वाभाविक है । विचार करने का अभ्यास मनुष्य के पास है ही ... पहले से विचार, उसके बाद अनुभव ।

जिज्ञासा: जैसे 'पोषण' एक क्रिया है, और पोषण क्रिया के रूप में मेरी एक 'माँ' है, इस शरीर यात्रा में ...

उत्तर: पोषण को समझना पड़ेगा, उसे व्यवहार में लाना पड़ेगा, न्यायिक विधि से ।

जिज्ञासा: पोषण को समझने का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर: करने के लिए समझना पड़ेगा, आरंभिक स्थिति में ।

जिज्ञासा: इसे चित्रण विधि से समझना पड़ेगा फिर चित्रण विधि से करना भी पड़ेगा ?

उत्तर: हाँ ऐसा समझना पड़ेगा, जीना पड़ेगा, करना भी जीने का एक भाग है, सोचना भी एक भाग है, अनुभव भी एक भाग है - तीनों भाग में जीना पड़ता है ।

जिज्ञासा: आपने मानव के चार आयाम बताएं हैं: व्यवसाय/उत्पादन, व्यवहार, विचार, अनुभव ... यही है ? इत चारों आयामों में 'जीने' का अभ्यास करना ? अर्थात, 'जीना' = कार्य-व्यवहार, विचार एवं मूल्यों का अनुभव?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य, अध्ययन करते समय जो भी 'आचरण' संबंधी आपने लिखा है, इसको 'भाषा' से 'स्वीकृति' में परिवर्तित करके उसके अर्थों में जीना पड़ेगा अध्ययन में ... यह 'अध्ययन' में आचरण का 'अभ्यास' हुआ ।

उत्तर: स्वीकृति में जीना हमारी ज़िम्मेदारी, ज़िम्मेदारी को स्वीकारना पड़ेगा । जीए बिना होगा नहीं, भाषा से बोलना भर बनता है।

जिज्ञासा: अवधारणा के पूर्व ही ये (सम्बन्ध, जिम्मेदारी) समझ हो जाएगा ?

उत्तर: पूर्व ही है ।

जिज्ञासा: संबंध के लिए परिभाषा है - 'पूर्णता के अर्थ में अनुबंध' और अनुबंध को लिखा है 'बोध सहित निष्ठा' ।

उत्तर: पूर्णता क्या है - सत्य में अनुभव होना । प्रयोजन सहित निष्ठा - यहाँ हमारा करना क्या है ... संबंधो को निर्वाह करने का प्रयोजन क्या है, उसके बोध सहित निष्ठा = सम्बन्धो का निर्वाह । हमारे 'करने का प्रयोजनों' को ध्यान में रखते हुये निष्ठा करते हैं ।

जिज्ञासा: जो 'मूल्यों का साक्षात्कार' है, इसमें पुस्तकों में 2 भाषा आया है । जैसे मनोविज्ञान में: 'मूल्यों का साक्षात्कार होता है, जीवन मूल्य, मानव मूल्य, स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य ...'

उत्तर: इसके मूल में दूसरा भाग है, अस्तित्व में अवधारणा होता है, अनुभव होता है, अनुभव सत्य का होता है, सत्य की व्याख्या से मूल्य निकलता है, सत्य के व्याख्या में मूल्य अनुभव होता है ।

जिज्ञासा: तो यह वाक्य <u>अनुभव मूलक</u> विधि से जो मूल्य पहचानने में आते हैं, उसके लिए है ?

उत्तर: हाँ, जीने में मूल्य पहचानने में आता है, मूल्य अपने आप बहता है, मूल्यों का अनुभव होता है ।

जिज्ञासा: दर्शन में 3-4 जगह आपने 'साक्षात्कार' शब्द का अनुभव मूलक विधि से भी प्रयोग कीया है ...

उत्तर: ठीक है ना... अनुभव के बाद जीवन में सब रहता ही है !

जिज्ञासा: और दूसरा भाषा यह भी आया है, संवाद में आपने कहा है, "मूल्यों का कोई अध्ययन होता नहीं, साक्षात्कार होता नहीं है..." ?

उत्तर: वो ठीक है, अवधारणा के लिए कहा है ...अवधारणा के लिए सत्य ही होता है...न्याय-धर्म-सत्य का अवधारणा होता है और उसका व्याख्या में मूल्यों का निर्वाह होता है ।

जिज्ञासा: जैसे स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य का साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: ठीक है ना... शिष्ट मूल्यों का नहीं, स्थापित मूल्यों का साक्षात्कार होता है ।

जिज्ञासा: मूल्यों के बारे में एक बार संक्षिप्ति कर लेता हूँ । धर्म, स्वभाव व गुण तीनों को 'मूल्य' कहा है । अध्ययन विधि में धर्म व स्वभाव का साक्षात्कार होता है, और गुणों के रूप में जो 18 संबंध मूल्य हैं, ये परस्परता में व्यक्त होते हैं, इनका साक्षात्कार नहीं होता है ... इनमे से स्थापित मूल्य में मात्र विश्वास और प्रेम साक्षात्कार होता है, बाकी 7 स्थापित मूल्य और 9 शिष्ट मूल्यों का साक्षात्कार होता नहीं, स्थापित मूल्यों का अनुभव होता है, शिष्ट मूल्य व्यक्त होते हैं ...

उत्तर: ठीक है –अध्ययन विधि से स्थापित मूल्य अवधारणा में जाता है, शिष्ट मूल्य नहीं जाता है । स्थापित मूल्य के नाम में विश्वास और प्रेम ये दोनों अवधारणा में आता है, उसके बाद बोध होता है, बाकी सब (मूल्य) चित्रण में रुक जाता है ।

जिज्ञासा: जो 122 आचरण हैं, उसमें चिंतन क्षेत्र में 3 मूल्यों को रखा है प्रेम, वात्सल्य और श्रद्धा ...

उत्तर: इतना ही अवधारणा में आता है, वात्सल्य और श्रद्धा, बोध में नहीं आता। साक्षात्कार होगा, उसका सार बात बोध होगा, उसका सार बात अनुभव होगा। अनुभव का सार बात परंपरा होगा।

जिज्ञासा: मैं जो ‘न्याय’ का अध्ययन करता हूँ, उसमें पहले ‘व्यवस्था का अध्ययन’ करना पड़ेगा, उसमें ‘प्रयोजन के अर्थ में सम्बन्धों का अध्ययन’ करना पड़ेगा, उसको स्वीकारना पड़ेगा, उसके बाद ही मूल्य आते हैं ...?

उत्तर: वो तो संविधान को पढ़ना पड़ेगा। संविधान में पूरा लिखा है। मूल्यों का पूरा अध्ययन संविधान में आता है ...मनोविज्ञान में भी होता है, 122 मूल्यों का अध्ययन ।

जिज्ञासा: अध्ययन काल में ये मूल्य केवल श्रवण हुआ रहता है, गिनती में नहीं आता ?

उत्तर: ये अनुभव के बाद सार्थक होता है, प्रमाणित होता है|

जिज्ञासा: उसके पहले ये (मूल्य) केवल इच्छा विचार रूप में स्वीकृत रहता है ?

उत्तर: मान्यता के रूप में स्वीकृत रहता है|

जिज्ञासा: एक वाक्य आया है - "मानवीय स्वभाव में से विश्वास न्याय के अर्थ में परिशीलन हो जाता है" - जो विश्वास मूल्य है, उसे आपने 'साम्य मूल्य' भी कहा है ?

उत्तर: एक दूसरे के साथ मूल्यांकन में सामंजस्यता, collaboration । जैसे आपके साथ हम विश्वास करता हूँ, आप भी करते हैं...इसमें जो सामंजस्यता है, उसी का नाम है विश्वास ।

जिज्ञासा: जैसे बाबाजी मैं आप के साथ हर समय विश्वास कर पाता हूँ, पर बाकी लोगों के साथ हर समय हो नहीं पाता?

उत्तर: अनुभव के बाद होगा, अभी जागृत व्यक्ति के साथ होगा । अभी अध्ययन विधि में आप चल रहे हो, सार्थक है वो ..

जिज्ञासा: व्यवस्था का अध्ययन, समबन्ध के अध्ययन से मनुष्य के प्रति विश्वास साक्षात्कार होता है...?

उत्तर: अवधारणा में विश्वास आता है, अवधारणा में स्थापित मूल्य पूरा आता है; उसमे विश्वास व प्रेम ये दोनों बोध आता है, उसमें से प्रेम अनुभव में आता है । अनुभव में केवल प्रेम आता है |

जिज्ञासा: तो प्रेम का ज्ञान अनुभव में ही होता है ?

उत्तर:– हाँ । अनुभव के बिना होता नहीं, प्रेम का आचरण अनुभव के बिना होता नहीं । धर्म का आचरण में प्रेम आता है, वो अनुभव के बिना आता नहीं |

जिज्ञासा: बाकी स्थापित मूल्य जैसे सम्मान, ममता, स्नेह, गौरव आदि भी साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: वो सब चित्रण में रह जाता है ।

जिज्ञासा: तो आप जब कह रहे हैं 'स्थापित मूल्य अवधारणा में आता है' इनका 'सार रूप' साक्षात्कार होता है ... ?

उत्तर: स्थापित मूल्य का सार बात – प्रेम और विश्वास अवधारणा में आता है। विश्वास और प्रेम दोनों बोध में आता है, विश्वास बोध में drop होता है (रुक जाता है), प्रेम आगे अनुभव में जाता है, अनुभव मूलक विधि से वापस आते समय बाकी मूल्य attach होता है (जुड़ जाता है) अध्ययन विधि का यही लाभ है ... चित्रण में जो रुका था, उसी प्रकार अवधारणा, चिंतन में जो drop रहता है, बोध में जो भी drop होता है (रुक जाता है) वो वापस आते समय, अनुभवमूलक विधि से जुड़ जाता है, व्यक्त ओने में आ जाता है ..इस प्रकार मूल्य व्यक्त होते हैं...

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य 'जीवन मूल्य' ही मेरा धर्म है, 'मानव मूल्य' ही मेरा स्वभाव है, और 'सम्बन्ध मूल्य अथवा व्यवहार मूल्य' ही मेरा गुण है... इनमे से केवल विश्वास और प्रेम स्वभाव को छूता है – अवधारणा में आता है और प्रेम तो अनुभव की वस्तु है, आनंद के साथ....

उत्तर: गुण स्वभाव धर्म; ठीक हो गया !

जिज्ञासा: "मूल्यों के रूप में न्याय है" - ये साक्षात्कार की वस्तु है?

उत्तर: सम्बन्धों के साथ सब मूल्य (हैं) ... सम्बन्ध के बना कोई मूल्य होता ही नहीं.... प्रेम व विश्वास केवल दो ही अवधारणा में आता है ।

जिज्ञासा: अवधारणा में आता है मतलब "यही न्याय है" - ये समझ में आ जाता है ?

उत्तर: अनुभव के रास्ते में ! 'न्याय' तो अनुभव के बाद ही आएगा ।

जिज्ञासा: अनुभव के रास्ता में, विश्वास और प्रेम अवधारणा में आने से "यही न्याय है" - ये स्वीकार रहता है ...यही "न्याय साक्षात्कार" का मतलब हुआ ?

उत्तर: ठीक है, प्रमाण नहीं रहता, केवल स्वीकार रहता है, प्रमाण अनुभव के बाद ।

जिज्ञासा: तो "मानवीय आचरण" के अवधारणा के संदर्भ में मानवीय स्वभाव- 'उदारता' के रूप में, प्रेम और विश्वास - ये अवधारणा में आ जाता है, यही 'न्याय साक्षात्कार' का भी मतलब हुआ, यही 'स्वभाव' साक्षात्कार होने का मतलब है। इसमें से विश्वास और प्रेम बोध में, और...

उत्तर: हाँ, इसमें से प्रेम केवल अनुभव के लिए जाता है । सारा dropping (रुकना) जागृति क्रम में होता है... बाकी सारा मूल्य कुछ चित्रण में, कुछ अवधारणा में, कुछ बोध में रुक जाता है

जिज्ञासा: 'प्रेम अनुभव में आता है' का मतलब ये 'विकसित चेतना' के रूप में अनुभव में आता है ?

उत्तर: सत्य के रूप में प्रेम को माना है, सत्य में प्रेम समाया ही रहता है, प्रेम के बिना वैचारिक प्रमाण होता ही नहीं। नियम-नियंत्रण-संतुलन-न्याय-धर्म-सत्य ये प्रेम के बिना प्रमाणित होता नहीं । प्रेम विधि से ही होता है, अनन्य विधि से, प्रेम और अनन्यता ये दोनों के चलते ये वैचारिक आचरण पूरा होता है, प्रमाण पूरा होता है । ठीक है?

जिज्ञासा: जी| स्व-निरिक्षण से यह निकलता है की आज हम मानवीयता से भाषा एवं तर्क के आधार पर सहमत होते हैं, परन्तु पूर्णतया स्वीकार नही पाते । जैसे, प्रत्येक मानव के प्रति उदारता, दया, स्नेह, ममता, अनन्यता हम चाहते हुए नहीं होता, अर्थात 'चाहते' ही नहीं हैं ... इनके विपरीत ही इच्छा होता है तो कैसे होगा ?

उत्तर: इसी के लिए अध्ययन करने को कहा है भाई... न्यायान्याय-धर्माधर्म-सत्यासत्य तुलन ... सभी इसी के लिए तो है । अभी जो है, इसमें जीव चेतना अडचन करता है... पूर्व स्मृतियाँ .. यही अपना-पराया का दीवाल से मुक्त होना ... होना है की नहीं, सोच लो !

जिज्ञासा: जी । बिना किसी शर्त के सम्बन्ध को स्वीकार पाना ... बिना शर्त का उदारता, ममता ... अब के समय तो प्रियाप्रिय में चले जाते हैं ...

उत्तर: अभी सब लेन-देन का अभ्यास बना है ...

जिज्ञासा: सारे मूल्य प्रेम-अनन्यता में समाहित हैं...

उत्तर: इसीलिए उसे 'पूर्ण मूल्य' कहा है । वही अनुभव में आता है ।

जिज्ञासा: साक्षात्कार को अभ्यास दर्शन में व्यंजनीयता कहा है ?

उत्तर: व्यंजनीयता तो सुनने से है, श्रवण मनन से है ...भास आभास प्रतीति अवधारणा व्यंजना है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में 'मानव धर्म के रूप में सुख, शांति, संतोष, आनंद' - ये अवधारणा में आता है ?

उत्तर: अवधारणा में केवल स्थापित मूल्य आता है, स्थापित मूल्य में बाकी सब समाया ही रहता है ।

जिज्ञासा: स्थापित मूल्य तो "स्वभाव" की अवधारणा में आ गया, 'धर्म' के अवधारणा रूप को पूछ रहा हूँ ...

उत्तर: स्वभाव में सभी मूल्य आता है - स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य, मानव मूल्य, जीवन मूल्य यह सब स्वभाव में समाया रहता है।

जिज्ञासा: इसका मतलब 'स्वभाव-धर्म' का अवधारणा होने से "मेरा सुखधर्मी होना" ये स्वीकृत हो जाएगा ?

उत्तर: हाँ, ठीक है ।

जिज्ञासा: इसमें शांति और संतोष भी आ जाएगा ?

उत्तर: वो तो स्वाभाविक बात है|

जिज्ञासा: सुख, शांति, संतोष आ जाएगा । मात्र 'आनंद' बचा रहेगा अनुभव के लिए ?

उत्तर: हाँ, अनुभव विधि से आनंद, आनंद में सब समाया रहता है जैसे 100 में 99 समाया रहता है ।

जिज्ञासा: धर्म नीति, राज्य नीति ये 'नैतिकता' के रूप में साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: नहीं होता, न्याय-धर्म-सत्य ही होता है, नैतिकता विचार में विश्लेषित होकर राजयनीति- धर्मनीति बनता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में ये (राजयनीति- धर्मनीति) अभ्यास के लिए एक वस्तु है ?

उत्तर: वो ठीक है, अध्ययन विधि ठीक है ।

जिज्ञासा: 'मूल्य चरित्र नैतिकता के संयुक्त रूप में मानवीय आचरण है' - ये साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: नहीं होता, सिर्फ न्याय-धर्म-सत्य ही होता है ।

जिज्ञासा: फिर <u>यही</u> मानवीयता पूर्ण आचरण है, ये कैसे तय होगा ?

उत्तर: इसमें समाया ही है, ये पता रहता है, अवधारणा में ।

जिज्ञासा: बाद में चित्रण में जुड़ जाता है मानवीयतापूर्ण आचरण ?

उत्तर: हाँ, अनुभव के बाद चित्रण में जुड़ जाता है ।

जिज्ञासा: अभी तक जो संवाद हुआ, उसका संक्षिप्ति ऐसा है कि अवधारणा में: 'द्दष्टा' के रूप में जीवन आ जाएगा; 'सत्य' के रूप में अस्तित्व का होना और 'मानवीयतापूर्ण आचरण' का सार रूप स्वभाव-स्थापित मूल्य: उदारता, विश्वास, प्रेम के रूप में... यह अवधारणा की वस्तु हुई ।

उत्तर: ठीक है, अस्तित्व बोध, जीवन बोध, मानवीयतापूर्ण आचरण बोध... 'आचरण' बुद्धि में रह जाता है, बाकी दो चलता है ... 'जीवन बोध', 'सहअस्तित्व बोध' ये दोनों अनुभव में आता है । अनुभव में आने के फलन ही आचरण में आता है, फिर परंपरा बनता है।

जिज्ञासा: न्याय में 'संबंध' और 'मूल्यों' की बात हो गयी जो 'मूल्यांकन' है, वह कैसे होता है ?

उत्तर: मूल्यांकन तो तुलन से होता है ।

जिज्ञासा: हम न्याय किये, या न्याय हुआ कि नहीं, ये मूल्यांकन है या तुलन है ? चिंतन में भी मूल्यांकन की बात आयी है ?

उत्तर: यह मूल्यांकन विचार में ही होता है - अध्ययन के <u>बाद</u>... अनुभव के बाद...

जिज्ञासा: आप जब 'न्याय हुआ कि नहीं' ये मूल्यांकित करते हो, आपमें ये चिंतन है या तुलन है?

उत्तर: तुलन में होता है | जागृति के बाद हम अपना ही तुलन करते हैं | तुलन करने से पता चलता है कि न्याय हुआ कि नहीं । न्याय के लिए हम तुलन करते हैं।

जिज्ञासा: जो उभय तृप्ति है ये .....

उत्तर: ये दोनों में होना ।

जिज्ञासा: हमारे में जो उभय तृप्ति हुआ, इसका मतलब 'जैसा इच्छा हुआ', 'वैसा व्यवहार हुआ' - इसका तृप्ति हुआ ?

उत्तर: आपके जागृति के <u>बाद</u>, जो हम सोचते हैं वही आप सोचते हैं ... जागृति के बाद दोनों का सोच एक ही होता है, दो सोच नहीं होता ।

जिज्ञासा: एक जगह लिखित आया है चिंतन जो है 'मूल्यांकन' करता है...यह क्या है ?

उत्तर: चिंतन करता है, तुलन के आधार पर, व्यवहार का मूल्यांकन तुलन के आधार पर ।

जिज्ञासा: 'रुचि मूलक मूल्यांकन' मन के आधार पर होता है ?

उत्तर: ये निषेध में जाता है, उसकी कोई गणना ही नहीं है, शरीर पोषण तक उसका प्रयोजन है ।

जिज्ञासा: और लक्ष्य मूलक मूल्यांकन ?

उत्तर: ये अनुभव तक जाता है ।

जिज्ञासा: जिसको आप 'व्यवहार' कह रहे हैं, व्यवहार तब होता है जब दोनों पक्ष में प्रयोजन के अर्थ में संबंध की स्वीकृति है ?

उत्तर: समाधान होता है, तब विश्वास होता है, उसके पहले कहाँ व्यवहार, विश्वास के बिना व्यवहार कहाँ होता है ?

जिज्ञासा: हम लोग जो 'व्यवहार' के नाम पर करते हैं वो क्या है ?

उत्तर: वो तो व्यवहार नही है.. लेन-देन है ...विश्वास नहीं होने का ही प्रमाण है 'लेन देन' ।

जिज्ञासा: तो विश्वास होने का ये प्रमाण है कि उस व्यक्ति पर हमको शंका नहीं होता ।

उत्तर: विश्वास होने से प्रेम भी होना, और प्रेम अनुभवमूलक है ... अनुभवमूलक हो गया, तो बोधमूलक होगा ।

जिज्ञासा: तो 'विश्वास का अवधारणा' होने से सभी मानवों के प्रति विश्वास, सम्बन्ध स्वीकृत हो जाता है ?

उत्तर: बस इतना ही है !!! सर्व मानव सुखी होना चाहते हैं, मानव धर्म का पता लगता है- 'सुखी' होने के रूप में, सुख में होता है समाधान, समाधान के बिना सुखी होना होता नहीं। समाधान बराबर सुख, बराबर मानव धर्म लिखा है ।

जिज्ञासा: समाजशास्त्र में आया है कि 'संबंध की स्वीकृति अवधारणा में होना पाया जाता है...'

उत्तर: वो सब विश्वास की बात है ।

जिज्ञासा: पुस्तकों में यह भी आया है - 'जागृत जीवन बल ही मूल्य और मूल्यांकन में प्रस्तुत होता है'...ये क्या है ?

उत्तर: सबके समान, जागृति के बाद मूल्यांकन करते हैं, तो सब में समानता होगी ।

जिज्ञासा: यह 'तुलन बल' की बात हो रहा है इधर ?

उत्तर: हाँ, ये जागृति के बाद तुलन की बात है ।

जिज्ञासा: पुस्तक में यह एक वाक्य है: 'संबंध की स्वीकृति अथवा अवधारणा अपने स्वरूप में समाधान व उसकी निरंतरता ही है, यह विज्ञान और विवेक सम्मत तर्क विधि से बोध होता है' - इसमें "विज्ञान और विवेक सम्मत तर्क विधि" का मतलब क्या है....?

उत्तर: व्यवहार में आने वाली बात को विज्ञान कहा है, व्यवहार में जो प्रमाणित होता है, उसका नाम है 'विज्ञान' ।

जिज्ञासा: मानवीयतापूर्ण सारा आचरण यह 'व्यवहार विज्ञान' ही है ?

उत्तर: हाँ, व्यवहार विज्ञान ही है ।

जिज्ञासा: विज्ञान को आपने कालवादी, क्रियावादी, निर्णयवादी ज्ञान भी कहा है ?

उत्तर: हाँ, ये (कार्य-व्यवहार) क्रियावादी कालवादी दोनों है की नहीं है ?

जिज्ञासा: अच्छा ! तो मानव के साथ व्यवहार में जो पूरा क्रिया है, वो 'कालवादी क्रियावादी' है ?

उत्तर: हाँ, वो कालवादी क्रियावादी है ।

जिज्ञासा: और 'निर्णयवादी' ज्ञान ?

उत्तर: यही विज्ञान है - कालवादी, क्रियावादी, निर्णयवादी विज्ञान है ।

जिज्ञासा: विज्ञान से ही मानव लक्ष्य के लिए 'दिशा निर्धारण' होता है, ऐसा आया है .... ?

उत्तर: मानव लक्ष्य के लिए जो निश्चयन है.. वो निर्णयन है ...यह निर्णयवादी ज्ञान, विज्ञान ।

जिज्ञासा: इसका मतलब 'विवेक' में जो मानव लक्ष्य स्पष्ट हुआ - समाधान, समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व उसके अर्थ में जो आचरण है वो विज्ञान है, वही मावियतापूर्ण आचरण है ?

उत्तर आचरण पक्ष में विज्ञान है । मानव लक्ष्य ही तीनों प्रमाण है ।

जिज्ञासा: एक जगह परिभाषा आया है - 'व्यापक वस्तु ही ज्ञान है । ज्ञान जब क्रिया में प्रतिष्ठित होकर विश्लेषित होता है, उसे विज्ञान संज्ञा है'

उत्तर: सटीक लिखा है ...

जिज्ञासा: इस प्रकार:

- मानव के आचरण बराबर **'व्यवहार विज्ञान'** अथवा **'मनोविज्ञान'**,
- भौतिक रासायनिक वस्तु के साथ **'भौतिक विज्ञान'** अथवा '**पदार्थ विज्ञान**' और
- "**अध्यात्म विज्ञान**" का परिभाषा दिया है: 'नित्य सत्य की अनुभूति हेतु प्रक्रिया'

उत्तर: ठीक है । अभी भौतिक-रासायनिक वस्तु के अध्ययन को विज्ञान मानते हैं ...

जिज्ञासा: आपने जो कहा है, और लिखा है, उसका श्रवण होने में ही समय लग रहा है...

उत्तर: वो तो होता ही है ।

जिज्ञासा: क्या अध्ययन विधि में आपको दिया हुआ अनुभवमूलक चित्रण हमको पहले स्पष्ट हो जाता है, उसके बाद ही अवधारणा होगा ?

उत्तर: ठीक है, ऐसा ही है । अभी अध्ययन में चित्रण तो पूरा होता है ।

जिज्ञासा: न्याय के साक्षात्कार के लिए एक परिभाषा आया है – 'न्यायान्याय का साक्षात्कार , संबंध मूल्य मूल्यांकन के रूप में देखा गया है'- क्या हम सम्बन्धों को पहचान कर मूल्यों का निर्वाह कर लेंगें, मूल्यांकन हो जाएगा, फिर 'यही न्याय है' साक्षात्कार हो जाएगा ?

उत्तर: आप इसमें साक्षात्कार की बात नहीं कर रहे हो, "न्याय" की बात कर रहे हो , न्याय होता है, न्याय दो मानवों के बीच व्यवहार में एक घटना है ।

जिज्ञासा: उपरोक्त वाक्य अनुभव मूलक विधि से लिखा है ?

उत्तर: न्याय अनुभव के बाद ही होता है ।

जिज्ञासा: ये जो भेद है कि न्याय एक 'घटना' भी है व्यवहार के रूप में और न्याय 'प्रतीति' के लिए वस्तु भी है...

उत्तर: बता तो दिया आपको, स्वभाव-धर्म का साक्षात्कार होता है ।

जिज्ञासा: इसका संविधान में परिभाषा आया है – 'सहअस्तित्व में अनुक्रम से परस्परता में पूरक होने की स्वीकृति ही चित्त में न्याय साक्षात्कार है'

उत्तर: साक्षात्कार होने के जगह में यही पहुँचता है । अस्तित्व में न्याय यही है, अस्तित्व के साथ, चारों अवस्था के साथ न्याय - ये <u>ज्ञान का स्वरुप</u>; व्यवहार में मानव के साथ न्याय – यह <u>कार्य (व्यवहार) का स्वरुप</u> ..इसी का परिभाषा दिया है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब न्याय का जो <u>'ज्ञान' स्वरुप है</u>, यह 'अस्तित्व के साथ पूरक होने के अर्थ में स्वीकार हो जाता है', साक्षात्कार में ... इसमें चारो अवस्था आ गए ?

उत्तर: <u>अस्तित्व के साथ पूरक होना</u> - यह साक्षात्कार, चारो अवस्था के साथ न्याय, <u>अस्तित्व के साथ न्याय</u> । पहला वाला (सम्बन्ध-मूल्य-मूल्यांकन-उभय तृप्ति) यह <u>मानव के साथ न्याय</u> ।

जिज्ञासा: 'मानव के साथ न्याय' प्रतीति होता है ?

उत्तर: ये प्रतीति में नहीं जाता, ये चित्रण तक ही जाता है, जो 'अस्तित्व' के साथ है, वो ज्ञान से सम्बंधित है, यह प्रतीति तक जाता है ।

जिज्ञासा: अच्छा! ये जो सूत्र है 'न्याय-धर्म-सत्य का साक्षात्कार होता है' - यहाँ 'न्याय' अस्तित्व के साथ पूरक होने के अर्थ में है?

उत्तर: ये अस्तित्व से संबन्धित है ।

जिज्ञासा: 'न्याय साक्षात्कार' में उदारता के रूप में मानवीय स्वभाव, स्थापित मूल्य – विश्वास और प्रेम, यह समाया है?

उत्तर: 'न्याय-धर्म-सत्य' में समाया है, सब ।

जिज्ञासा: अध्ययन करते समय न्यायपूर्वक जीने का प्रयत्न जो है, जिन संबंधो में हम जीते हैं, उन संबंधो को 'प्रयोजन के अर्थ में' पहले पहचानना पड़ेगा ?

उत्तर: प्रयोजन तो व्यवस्था है, व्यवस्था के अर्थ में संबंध (है) ।

जिज्ञासा: इसमें दो कड़ियाँ दिखती हैं: पहला कड़ी में 'व्यवस्था के अर्थ में सात संबंध है' इसकी स्वीकृति, और फिर दुसरे कड़ी में 'इन सम्बन्धों के रूप में ये रूपात्मक मानव इकाइयां है', जैस साधन भैया हैं, अम्बा दीदी हैं, इनके साथ फिर उन सम्बन्धों को पहचानना ? ऐसे दो step (कड़ीयों) में होगा ?

उत्तर: ठीक है यह ।

जिज्ञासा: जो सामाजिक नियम है - स्वधन, स्वनारी/स्वपुरुष , दयापूर्ण कार्य व्यवहार – इसमें जीए बिना न्याय समझ में आएगा?

उत्तर: नहीं आएगा । काहेको आएगा ? सामाजिक नियम व्यवस्था के अर्थ में सम्बन्ध को पहचानने में ही आता है।

जिज्ञासा: 'दयापूर्ण कार्य व्यवहार' का मतलब 'जीने देना और जीना'?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: 'दया पूर्ण व्यवहार' का न्यूनतम स्वरुप मतलब हम दुसरे के जीने में, स्वतंत्रता में हस्तक्षेप न करें, जैसे हम अपने निर्णयों को दुसरे पर लाद देते हैं अभी, दूसरों को नियंत्रित करने के प्रयास करते हैं... इसके जगह उनके कल्पनाशीलता-कर्मस्वतंत्रता का सम्मान करना, उस सम्बन्ध में जो परस्पर स्वीकृति है, उसके मर्यादा में रहना ...

उत्तर: वही 'जीने देना और जीना' इसका मतलब है । यह सब व्यवहाराभ्यास की बात है ।

जिज्ञासा: दया को 'पात्रता के अनुसार वस्तु उपलब्ध करना' भी कहा है ....

उत्तर: वह इसके <u>बाद</u>, अनुभव के <u>बाद</u> ....

जिज्ञासा: मुझमे दयापूर्ण कार्य व्यवहार कि जो क्षमता है, अध्ययन विधि में, ये अवधारणा के साथ ही बन पाएगा ? अभी इसकी चाहत है... पर हो नहीं पाता।

उत्तर: हाँ । अभी की स्थिति में कोई न्याय नहीं है, न्याय उभय पक्षी है एक पक्ष का नहीं है ।

जिज्ञासा: मेरे इन सारे जिज्ञासा का आशय है की मैं जहाँ पर खड़ा हूँ, यहाँ से अनुभव तक का रास्ता स्पष्ट हो जाये...और यह तो धीरे धीरे ही होगा, क्रमशः , ऐसी मेरी स्वीकृति है .... ऐसा तो नहीं है की पढ़ते-पढ़ते एक दिन 'अचानक' से अनुभव हो जायेगा....

उत्तर: वो सोच ठीक है ।

जिज्ञासा: इसी रूप में अध्ययन करते समय 'धीरता वीरता उदारता' पूर्वक जीने का प्रयत्न भी करना पड़ेगा ?

उत्तर: वो तो मूल्यों के उपर पहले से काम हुआ रहता है, पहले मूल्यों के आधार पर, उसके बाद सम्बन्धों के आधार पर, उसके बाद परिस्थिति के अनुसार, ये सब होकर अवधारणा में पहुंचेगा ।

जिज्ञासा: अच्छा । पहले यह सारा (आचरण पक्ष) स्वीकार हो जायेगा, उसके बाद अवधारणा में पहुंचेंगे ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: पहले से जो इसके विपरीत मान्यता बना है, वही इसमें अड़चन पैदा करता है ...

उत्तर: वही तो अड़चन ही है !!! परंपरा पूरा अड़चन बनाकर रखा है, व्यवस्था का अड़चन, मूल्यों का, सम्बन्धों का अड़चन ... जैसे उदाहरण के रूप में, वैदिक विचार के अनुसार चार भाग कर दिया आदमी जात को, चार वर्ण, चार आश्रम, आठ जात हो गये ऐसे ही ...

जिज्ञासा: अभ्यास दर्शन में एक सूत्र आया है जिसमें अध्ययन विधि में अनुभव के पूर्व दो 'भूमियों' की बात की है: 'धारणा' एवं 'ध्यान': "मानवीयतापूर्ण जीवन के अनंतर वांछित वस्तु देश एंव तत्व में चित्त वृत्ती का संयत होना = धारणा ।" "धारणा पर पूर्णअधिकार के अनंतर उसके वांछित भाग अथवा सारभूत भाग में चित्त वृत्ती केंद्रीभूत हो जाना ही निष्ठा एवं ध्यान है"

इस वीधी से हमारा इच्छा-विचार अथवा कल्पनशीलता 'स्थापित' होने को साधना के अर्थ में 'धारणा' कहा है, और सारभूत भाग में केंद्रीभूत होना को 'ध्यान' कहा है ।

उत्तर: श्रवण विधि से धारणा ... का सारभूत भाग क्या है... 'सार्वभौम होना' - बस इतना ही है ।

जिज्ञासा: जिसको आप 'ध्यान' कह रहे हैं, यह सारा हो जाना ही ध्यान है ?

उत्तर: यह सब होने के बाद ही होता है, इसके पहले कहाँ से होता है ? अध्ययन विधि से संयंत होना है की नहीं, आप सोच लो । संसार को संयंत नहीं करना है, हम यदी संयंत होते हैं, वो संसार के लिए प्रमाण होता है, तभी हम उपयोगी हो पाते हैं ।

जिज्ञासा: साधना के सन्दर्भ में 'धारणा' और 'ध्यान' क्या है ?

उत्तर: श्रवण से धारणा ... चित्त वृत्ति किसी देश काल में स्थापित होना, यह धारणा ; उसके बिंदु में स्थापित हो जाना, यह ध्यान। देश काल यदी अनुकूल होता है, तो चित्त-वृत्ति स्थापित हो जाते हैं, नहीं तो बिखरे रहते हैं । 'धारणा' शब्द को हमने धर्म के लिए प्रयोग किया, अनुभव के बाद आता है, मानव धर्म = समाधान । अभी अपन साधना विधि में 'स्थापित' होने के अर्थ में उसका बात कर रहे हैं...होने से अवधारणा कहलाया|

जिज्ञासा: हमारे अध्ययन के लिए 'वांछित वस्तु' क्या है?

उत्तर: 'न्याय-धर्म-सत्य' !! सुखी होने के अर्थ में धारणा...चित्त वृत्ति यदी स्थापित हो जाते हैं, तो ध्यान हो जाता है ...

जिज्ञासा: जी। वैसे यह तो बहुत आगे की स्थिति लगती है । अभी तो 'अध्ययन विधि' में श्रवण-मनन के जगह से सोचूँ तो सर्वप्रथम हमारा कल्पनशीलता 'तत्व' मतलब 'अस्तित्व एवं जीवन' और 'देश' मतलब 'आचरण-जीने की जगह' में 'टिक' पाना, और उस श्रवण अर्थात चित्रण के 'सार्वभौम अर्थ' में चित्त-वृत्ति केंद्रीकृत करने, जीने में अभ्यास से 'मनन' कहलायेगा?

उत्तर: ठीक है । अध्ययन के लिए मन को लगाना ध्यान है, कहा है...इससे साक्षात्कार की दरवाज़ा खुलता है|

जिज्ञासा: इसी को तदाकार होना कहेंगे ?

उत्तर: इसके बाद तदाकार होता है । साक्षात्कार होने से, धारणा होने वाली बात आएगी.. 'अनुभव विधि' में हम लग गए...वो बात हो चुकी है आप से...

जिज्ञासा: 'श्रवण' पूरा होना, जिसमे 'सत्य-धर्म-न्याय' के तार्किक-निष्कर्ष पर आने में भी काफी समय लगता है ... श्रवण के साथ मनन तो शुरू हो जाता है, परन्तु 'मनन-अधिकार' आने में समय लगता है ...इसके बाद ही तो 'स्थिर होना', 'स्थापित'होना इत्यादि जो आपने लिखा है, वो सब आएगा ...

उत्तर: लगता ही है । हमारे पढने का एक समय है, सोचने का एक समय है, समझने का एक समय है ...निदिध्यासन पूर्वक ही स्थापित होना होता है | चित्रण में कोई स्थिरता नहीं रहता |

जिज्ञासा: 'श्रवण' पूर्वक निष्कर्ष में आने में भी जो अधिक समय लगता है, इसका कारण प्राथमिकता, जिज्ञासा में कमी... एवं 'मानवीयता' के विपरीत जीने की स्मृतियाँ (हैं)?

उत्तर: सार इतना ही है ।

जिज्ञासा: 'आचरण' पक्ष में जो गुणात्मक परिवर्तन होना है, ये अवधारणा पूर्वक ही ठीक से शुरू हो पाएगा?

उत्तर: अवधारणा पूर्वक नहीं, श्रवणपूर्वक (शुरू) होता है, आदमी शुभ चाहता है, इसलिए विकास होता है । अभी जीवन विद्या शिविर (परिचय शिविर) में जो उत्साह का कारण है, यही है... इसके बाद अध्ययन आवश्यक है..! अध्ययन के बिना यह होगा नहीं । अध्ययन को हम बता चुके हैं ...

जिज्ञासा: मुझे व्यक्तिगत रूप में लगता है कि मुझे 'तर्क' तो स्वीकार हो जाता है, मगर मानव के प्रति जो 'भाव' होना चाहिए....

उत्तर: वो तो अनुभव से आता है बता तो दिया आपको ! अभी अध्ययन की बात करते रहे, पुनह क्रिया की बात कर रहे हो.. अध्ययन विधि से यही हो, जो आपको बता दिया । अनुभवपूर्वक सार्थक होता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन क्रम में 'भाव' पक्ष का विकास कैसे होगा ?

उत्तर: अध्ययन क्रम में श्रेष्ठता को पाने के लिए पूरा पढ़कर, "लक्ष्य के बिना हम जी नहीं पाते हैं" - यहाँ वरीयता में लाना होता है, लक्ष्य को पाने के विधि को, वरीयता में लाने की विधि ... तीव्र इच्छा विधि से होता है ।

जिज्ञासा: Confirm (जांच) कर रहा हूँ - अध्ययन क्रम में सत्य व धर्म समझ में आए बिना, न्याय भी समझ में नहीं आएगा ?

उत्तर: सत्य समझ में आने के बाद ही धर्म व न्याय समझ में आएगा। न्याय व धर्म में विश्वास होता है ... समझ में आना = विश्वास होना ... स्वंय में पार पाने का ।

जिज्ञासा: इसके विलोम में, जीवन विद्या शिविर में जब शुरू में देखते हैं, तो अधिकांश लोगों का ध्यान पहले ‘न्याय’ के ओर जाता है, उसके बाद ‘धर्म’ के ओर जाता है, उसके बाद ‘सत्य’ के ओर जाता है...

उत्तर: परिचय क्रम में ऐसा ही है ... पर अध्ययन और व्यवहार के क्रम से सत्य पहले, धर्म बाद में, न्याय तीसरे स्थिति में, नियम चौथी स्थिति में, नियम सब के साथ रहता है... जड़ चैतन्य दोनों पक्ष में ।

जिज्ञासा: मानवीय आचरण प्रतीत हो जाने का क्या ये मतलब है कि ये निर्णय हो जाना कि "ऐसे मैं जीऊँगा” ? ...आपके एक लेख में आया है यदि अवधारणा होता है तो 'मैं जी सकता हूँ'...यह आ जाता है

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: व्यवहार में 7 संबंध जो प्रयोजन के अर्थ में पहचानना है, जो इसमें प्रथम कड़ी है कि 'ऐसे ही सात संबंध है' ...ये स्वीकृत हो जाना है ...

उत्तर: संबंध स्वीकृत होना, मूल्यों में पारंगत होना, हर समय मूल्यों का निर्वाह करना, ये पहला काम है ।

जिज्ञासा: अभी जिस विधि से सम्बन्धों को मैंने स्वीकारा है, वो अधिकांश ‘प्रिय’ के अर्थ में है, ‘प्रयोजन’ के अर्थ में नहीं है, ऐसा लगता है...

उत्तर: प्रियाप्रिय, हिताहित, लाभालाभ ये कोई संबंध नहीं है ये तो जीवों के सदृश्य है ...

जिज्ञासा: तो हमारे पूरे सबंधों को प्रयोजन के अर्थ में परिवर्तित करना पड़ेगा....

उत्तर: हाँ । ये सब को ‘व्यवस्था के अर्थ’ में करना पड़ेगा, तब जीव चेतना से मानव चेतना में पहुँच गए । प्रयोजन के अर्थ में संबंधों में दृढ़ता होना । प्रयोजन के अर्थ में संबंधो की दृढ़ता में निरंतरता रहती है । दायित्व-कर्तव्य को स्वीकारने में स्थिरता, निष्ठा....

जिज्ञासा: मनोविज्ञान में आया है – ‘सार्वभौम लक्ष्य, जीवन जागृति के आधार पर संबंधों को पहचानना, पूरकताओं की पहचान, परिवार में संतुलन-असंतुलन के आधार पर मूल्याङ्कन होता है’

उत्तर: ठीक है । सार्वभौम लक्ष्य क्या ? व्यवस्था...समाधान, समृधि, अभय, सहअस्तित्व...

जिज्ञासा: इसका मतलब संबंधों को पहचानना का आधार है: परस्परता, व्यवस्था और पूरकता | मानव में समानता का आधार हुआ: जीवन समान, लक्ष्य एक, कार्यक्रम एक, धर्म एक, स्वभाव एक; धर्म-स्वभाव के आधार पर सम्बन्ध पहचान हुआ, दायित्व-कर्तव्य तय हुआ; फिर इन संबंधों में कौन-कौन व्यक्ति है हमारे जीने में, यह तय हुआ; पश्च्यात निर्वाह जो है, गुणों के साथ है, सामने वाले के गुणों के आधार पर उनके साथ योजना, कार्यक्रम बनता है ... जैसे, मान लीजिये, हम भी अध्ययन में है और सामने वाला भी...

उत्तर: समझदारी पूर्वक ही सम्बन्ध पहचानने में आता है ! बेवकूफी में कोई पहचान नहीं होता, भाषा रहता है, कल्पना भर रहता है ....

जिज्ञासा: बाबाजी, व्यवहार के अभ्यास के लिए ...

उत्तर: अभ्यास के अर्थ में ठीक है, ऐसे ही है । अभी आदमी तीन प्रकार से है: कार्यशील प्रवृत्ति का, उपदेशील और चिंतनशील प्रवृत्ति का । जैसे, अभी हम जीता हूँ – सभी के साथ हमारा सम्बन्ध है, आत्मीयता जुड़ा है; कार्यक्रम अलग अलग है, सब के साथ ।

जिज्ञासा: सम्बन्धों में ‘मोह’ होते हुये साक्षात्कार संभव है क्या ?

उत्तर: नहीं । सम्बन्धों में मोह रहते हुए, साक्षात्कार होता ही नहीं ... चित्रण तक ही है, आशा के अर्थ में चित्रण...

जिज्ञासा: इसमें बाबाजी एक तर्क ऐसा भी आता है कि साक्षात्कार हुये बिना मोह भी तो नहीं जाएगा ?

उत्तर: सम्बन्धों का मतलब ही नहीं है … मोह है तो साक्षात्कार होगा ही नही... कभी नहीं होगा ... वो चित्रण तक ही कम है ।

जिज्ञासा: परन्तु साक्षात्कार होने से ही तो मोह जाएगा ना ?

उत्तर: साक्षात्कार होने से मोह जायेगा ।

जिज्ञासा: ये तो अंडा-मुर्गी जैसी बात हुई !!! मोह जाए बिना साक्षात्कार होता नहीं, और साक्षात्कार हुये बिना मोह नहीं जाएगा..

उत्तर: इसमें अंडा मुर्गी क्या है ? अंडा भी, मुर्गी भी दोनों एक साथ ही रहते हैं.... !!!

जिज्ञासा: जी | यह बढ़िया हो गया ..इसका तात्पर्य क्रम से असक्तियाँ में प्रगाड़ता जायेंगे | अध्ययन क्रम में जीते हुये परिवार व्यवस्था में उत्पादन/सेवा, विनिमय और न्याय इसमें भागीदारी करते हुये भी जीना पड़ता है ?

उत्तर: यही मुख्य बात है !!! ऐसे मूल्यों का निर्वाह करते हुए, स्वंय संतुष्ट होने की बात है । संतुष्टि के साथ समृद्धि आवश्यक है .... समृद्धि के लिए श्रम, श्रम के बिना समृद्धि होती नहीं ।

जिज्ञासा: वर्तमान में तो कोई व्यवस्था है नहीं ... तो इसमें 'भागीदारी का अभ्यास' कैसे करें ?

उत्तर: साधना जैसे वरीयता विधि से । अभी तो सब जगह असंतुलन है...

जिज्ञासा: इसमें 'शिक्षा और स्वास्थ्य' जो आयाम है, इसके लिए आपने एक जगह लिखा है कि दिव्य मानव ही इसका धारक वाहक है ... तो अध्ययन क्रम में इसका अभ्यास कैसे करें ?

उत्तर: पहले अध्ययन करना, फिर अनुसंधान को स्वीकारना, फिर व्यवहार करना । दिव्य मानव ही शिक्षा और स्वास्थ्य का धारक वाहक है ।

जिज्ञासा: हम लोगों का अध्ययन करते समय शिविर लेना भी इसी 'शिक्षा में भागीदारी के अभ्यास' के अर्थ में है ? परन्तु यह प्रथमिक नही है? ... स्वयं समझना प्राथमिक है ....?

उत्तर: इसी अर्थ में है । समझ में आना चाहिए, ये मुख्य बात है ...

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से 'समाधान समृद्धि अभय सहअस्तित्व' - यही मानव लक्ष्य है, इसका साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: ये चित्रण में होता है ।

जिज्ञासा: परन्तु यदी 'विवेक 'का साक्षात्कार होता है, अवधारणा में आता है, और 'मानव लक्ष्य को ही विवेक' कहा है?

उत्तर: ज्ञान का अवधारणा होता है, ज्ञान में यह सब एक एक टुकड़ा है ... ये सब उसी में आता है ।

जिज्ञासा: विवेक की परिभाषा है - 'बौद्धिक अध्ययन जिसमें आत्मा का अमरत्व, शरीर का नश्वरत्व और व्यवहार का नियम समाया रहता है' – "बौद्धिक अध्ययन" का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर: बौद्धिक अध्ययन 'ज्ञान' है, उसमें ये सब समाया है ।

जिज्ञासा: क्या 'नित्य' है, क्या 'अनित्य' है, और इस आधार पर 'आचरण' का स्वरुप, जीने का 'नियम' क्या है, इसका अध्ययन ही 'विवेकात्मक अध्ययन' कहलायेगा?

उत्तर: यही है !

जिज्ञासा: विवेक 'बुद्धि' की वस्तु है, या 'चित्त' की वस्तु है ?

उत्तर: बहुत पहले की है - चित्त वृत्ती की है, इसलिए उसको 'विवेचना' कहा है ।

जिज्ञासा: तो विवेक में चिंतन सहित चित्रण-विश्लेषण रहता है?

उत्तेर: वही विवेचना|

जिज्ञासा: अध्ययन करते समय विवेक को ध्यान में रखते हुये अध्ययन करना पड़ता है ?

उत्तर: विवेक का ध्यान इसलिए रखना है, क्योंकि हमें व्यवहार के साथ जीना है व्यवस्था के साथ जीना है और परिस्थितियों के साथ जीना है ।

जिज्ञासा: क्या 'विवेक' ही 'ज्ञान' को 'व्यवहार' से जोड़ता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: अभी जब भी हम लोग व्यवहार करते हैं ....

उत्तर: अभी व्यवहार का पता ही नहीं है, व्यवहार के नाम से कुछ भी मनमानी कर लेते हैं। संसार जो करता है उसी को आप लोग करते हो!

जिज्ञासा: जिस व्यक्ति से हम व्यवहार कर रहे हैं, वो जीवन और शरीर का संयुक्त रूप है, इस बात को बार-बार स्मरण में लाना उपयोगी है क्या ?

उत्तर: उपयोगी तो है, यदी कर पाते हैं, तो !! अभी कहाँ बनता है ? किस आधार पर बनता है ? <u>अध्ययन</u> यदी करता हैं, उसके <u>बाद</u> बनता है … <u>भाषा</u> से कुछ नहीं होता है ।

जिज्ञासा: 'विज्ञान' का साक्षात्कार नहीं होता ?

उत्तर: नहीं होता ।

जिज्ञासा: आज सबेरे बात हुई थी, कि मानवीयतापूर्ण आचरण भी विज्ञान ही है ?

उत्तर: अभी का विज्ञान (प्रचिलित विज्ञान), 'विज्ञान' का एक भाग है । जबकी, विज्ञान का स्वरुप है: एक व्यवहार विज्ञान हो गया – व्यवहार के रूप में, और एक कार्य विज्ञान हो गया - भौतिक विज्ञान ।

कार्य-व्यवहार विज्ञान = सम्पूर्ण कार्य, सम्पूर्ण व्यवहार = विज्ञान है । कार्य से समृद्धि, व्यवहार से न्याय, ये दोनों एकत्रित होकर 'कार्य-व्यवहार' ।

जिज्ञासा: विज्ञान में रूप और गुण पक्ष जुड़ जाता है ?

उत्तर: रूप, गुण, स्वभाव तीनों जुड़ता है ।

जिज्ञासा: और, 'विवेक' जो है, 'धर्म' को 'रूप-गुण' से जोड़ता है ? 'ज्ञान' को 'व्यवहार' से जोड़ता है ?

उत्तर: उतना ही बात है, ठीक है ।

जिज्ञासा: एक सूत्र का पुनह: स्पष्टीकरण है ... जो आप बोलते हैं 'ज्ञान विवेक विज्ञान' उसमें ....

उत्तर: विवेक सम्मत विज्ञान, 'विवेक-विज्ञान' का मतलब ।

जिज्ञासा: 'ज्ञान' में अस्तित्व दर्शन ज्ञान और जीवन ज्ञान आ गया और...

उत्तर: जीवन ज्ञान के साथ, अस्तित्व दर्शन के साथ, विकास ज्ञान के साथ हम विज्ञान को प्रयोग करते हैं ।

जिज्ञासा: जो 'विज्ञान' का प्रयोग करते हैं, वो 'मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान' है ?

उत्तर: हाँ। मानवीयता पूर्ण आचरण के रूप में प्रमाणित होता है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब ये हुआ कि 'मानवीयता पूर्ण आचरण' अनुभव से लेकर व्यवहार तक है – 'आनंद और प्रेम' से लेकर 'वस्तु मूल्य' तक । मानवीयता पूर्ण आचरण में 'धर्म-स्वभाव-गुण' तीनो आ गया: जीवन मूल्य = धर्म; मानव मूल्य = स्वभाव, सम्बन्ध मूल्य = गुण ...

उत्तर: ठीख है, हाँ । सारा 122 आचरण इसी में (मानवीयता पूर्ण आचरण में) आता है । अनुभव मूलक विधि से यह होता है।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य आपने जो "मानवीयता पूर्ण आचरण" को बताया है, उसमें <u>अवधारणा की वस्तु</u> है: 'सुख के रूप में जीवन मूल्य', 'उदारता रूपी स्वभाव के रूप में मानव मूल्य', और 'स्थापित मूल्य में से प्रेम, विश्वास, श्रद्धा'- यह अवधारणा में आ जाता है ...

उत्तर: ठीक है । सम्बन्ध-मूल्य-मूल्यांकन विधि से यह निर्वाह होता है ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य, 'ज्ञान-विवेक-विज्ञान' सूत्र में : ज्ञान = अस्तित्व दर्शन, जीवन ज्ञान; फिर विवेक = इस "ज्ञान" को "व्यवहार" से जोड़ने के रूप में - जीवन का अमरत्व के आधार पर, मानव लक्ष्य के आधार पर व्यवहार के नियमों का विवेचना, और इस 'विवेक' के आधार पर 'विज्ञान' = मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान, जिसमे व्यवहार विज्ञान, भौतिक-कार्य विज्ञान आ गया, यही व्यवहार-कार्य, इसमें 'कालवादी, क्रियावादी, निर्णयवादी ज्ञान' समाया है । और दुसरे विधि से, यह सारा मिलकर भी "ज्ञान" ही है … मानवीयतापूर्ण आचरण भी 'ज्ञान' है ... विज्ञान भी, विवेक भी .... 'ज्ञान' का ही प्रकटन है ...

उत्तर: ठीक हो गया यह । यही ज्ञान विवेक विज्ञान |

जिज्ञासा: इसीलिए, जब आप 'न्याय-धर्म-सत्य' कह रहे हैं, 'ज्ञान-विवेक-विज्ञान' को ही दुसरे विधि से कह रहे हैं ।

उत्तर: वही बात है |

जिज्ञासा: यह जो सारे सूत्रों में अंतर-सम्बन्ध बिठाना है, सारा 'लाइन अप' (एक सूत्र में) हो जा रहा है, यह सब अवधारणा के <u>पहले ही</u> set हो (बैठ) जा रहा है? इसी को प्रतीति, अवधारणा मान सकते हैं ...

उत्तर: यह सब आपका अध्ययन है । अवधारणा इसके <u>बाद</u> है । यह अवधारणा नहीं है । अनुभव के लिए उद्देश्य होना पड़ेगा...<u>स्वयं</u> अनुभव करने का ...<u>दूसरों को समझाने का नहीं</u> ! अध्ययन विधि से प्रतीति <u>स्वयं हमको</u> होता है… दूसरों को नहीं… <u>दुसरे</u> को होना है तो (हमारा) प्रमाण ही है … अभी आदमी इसके अभिव्यक्ति में ज्यादा फैल जाता है, यह concise (केन्द्रित) होने से होता है ...

साक्षात्कार क्रिया

जिज्ञासा: बोध को "जानना मानना" कहा है आपने, और साक्षात्कार को "पहचानना" कहा है - ऐसा क्यों है कि साक्षात्कार में केवल 'पहचानना' हो रहा है, और बुद्धि में उसका 'जानना-मानना' हो रहा है?

उत्तर: चित्त में पहचानने के बाद बुद्धि में जो स्वीकृति होती है, वही जानना-मानना है । अवधारणा में ही पहचान हो गया, अवधारणा होने का गवाही हो गयी, जानना-मानना ।

जिज्ञासा: इसका मतलब जानने मानने का प्रारंभ साक्षात्कार से ही है ?

उत्तर: हाँ | जानने मानने के प्रक्रिया का नाम साक्षात्कार है | जानना मानना बुद्धि में - स्वीकृति के रूप में | अनुभव पूर्वक प्रमाण !

जिज्ञासा: साक्षात्कार होने के साथ-साथ ही वो वस्तु बुद्धि में जमा होते जाता रहता है, एकत्रित होता है - यही अवधारणा है..यह पूरा मिलाके ?

उत्तर: इतना ही बात है ! अवधारणा का मतलब ही इतना है !!

साक्षात्कार क्षणिक रूप में होता है । बोध में निरंतरता आती है, स्थिरता बनता है । अनुभव से प्रमाण होता है । न्याय-धर्म-सत्य एक set (जोड़ी) है, अनुभव का । (इसीलिए) सत्य और धर्म के बिना न्याय आता नहीं । श्रवण से साक्षात्कार, साक्षात्कार से अवधारणा बनता है , अवधारणा के बाद बोध-अनुभव होता है ।

बुद्धि में ही तदाकार होता है, स्थिरता बनती है । यह साक्षात्कार के बाद, प्रतीति के बाद है । आत्मा जो है, तद्रूप हो जाता है ।

जिज्ञासा: साक्षात्कार में जो वस्तु पहचानने में आया, वह वस्तु बुद्धि में जमा होने का मतलब....

उत्तर: बोध होना स्वाभाविक है...

जिज्ञासा: जिसको आप 'बोध होना' कह रहे हैं, वो बुद्धि का प्रत्यावर्तन है?

उत्तर: हाँ, यही बोध है

जिज्ञासा: 'बुद्धि के प्रत्यावर्तन' के पहले जो 'अध्ययन-बोध' होता है...

उत्तर: वही अवधारणा है |

जिज्ञासा: ये जो 'अध्ययन-बोध' अथवा अवधारणा है, इसमें भी जानना-मानना होता है ?

उत्तर: ये जानने मानने के पहले हैं !! अवधारणा 'बोध' के पहले है । जानना-मानना बुद्धि में, अवधारणा में स्वीकृति, अवधारणा के बाद बुद्धि में स्वीकृति, बुद्धि में स्वीकृति में जानना-मानना । जानना-मानना दोनों इकठा स्वीकृति, जैसे, 'हम स्वीकारता हूँ' उसका detail (गहराई) में गए, जानना, मानना दो भाग हो गया... पुनह: अनुभव में दोनों एक हो जाता है। जानना शेष रह जाता है (अनुभव में), मानना बाहर जाता है - बुद्धि में | इसलिए प्रमाण होता है - बुद्धि का, बुद्धी पूर्वक ।

जिज्ञासा: इसका मतलब वस्तु का रूप गुण स्वभाव धर्म "होने" के रूप में साक्षात्कार में होता है, और उसका detail (विस्तार), अथवा 'स्वभाव-धर्म' बुद्धि में समझ में आता है, स्पष्ट होता है ?

उत्तर: हाँ, इसलिए बुद्धि पूर्वक व्यवहार होता है ।

जिज्ञासा: जीवन में जो "चिंतन" क्रिया है, यही 'स्वभाव-धर्म' को 'रूप-गुण' से जोड़ता है ?

उत्तर: हाँ, पक्का । कोई चीज छूटना नहीं, सच्चाई छूटना नहीं...

जिज्ञासा: कर्मदर्शन में एक वाक्य आया है 'पानी शब्द के साथ पानी रूपी वस्तु को अस्तित्व में स्वीकारना चित्त क्रिया है'.... क्या ये चित्रण ही है ?

उत्तर: ये चित्रण है । रसायनिक भौतिक वस्तु चित्रण क्रिया में सीमित हो जाता है ... शरीर भी वही है ।

जिज्ञासा: साक्षात्कार का जो परिभाषा है 'अस्तित्व में वस्तु सहज रूप में अस्तित्व में नाम से इंगित वस्तु स्पष्ट हो जाना', इसमें जो 'नाम' और 'वस्तु' है, यह केवल स्वभाव-धर्म सम्बन्धी वस्तु है ?

उत्तर: हाँ । इसमें जीवन वस्तु है... केवल 'स्वभाव धर्म' संबंधी वस्तु ।

जिज्ञासा: जीवन में जो दृश्य होता है ...

उत्तर: 'दृश्य' रसायनिक भौतिक वस्तु, और जीवन वस्तु - दो ही है । ये दो वस्तु में से किसी वस्तु को हम दृश्य के रूप में देखते हैं।

जिज्ञासा: क्या 'दृश्य' जीवन में आत्मा तक दिखता है ? 'अनुभव में सत्ता में संपृक्त जड़ चैतन्य प्रकृति दृश्य रूप में दिखता है'... यह आया है भाषा....literature (ग्रन्थ) में

उत्तर: चित्रण तक भौतिक रसायनिक वस्तु दिखता है, बुद्धि पूर्वक जीवन वस्तु दिखता है – जीवन, जीवन महिमा । चैतन्य प्रकृति जीवन है, जीवन प्रकृति सुखी होना चाहता है, (अपने को शरीर मानकर) ये अभी मौज मस्ती करना चाहता है, मौज मस्ती करने में उन्माद - लाभोन्माद , भोगोन्माद, कामोन्माद ।

जिज्ञासा: अभी आपके साथ इस चर्चा को और अच्छा कैसे करूं ?

उत्तर: अध्ययन विधि अलग है, अनुभवमूलक विधि अलग है – इसे blend कर देते हो (मिला देना)...यही पंचायत है हमारे सामने अभी ....

जिज्ञासा: जी, स्वीकार है । कुछ नयी चीजें इस बार स्पष्ट हुआ: जैसे 'न्याय-धर्म-सत्य' व्यवहार के लिए सूत्र है, इसे अध्ययन के लिए मानकर इसमें 'सूत्रों' को बिठाना बनता नहीं...इसमें फस्ता गया, मैं ... अध्ययन विधि और अनुभव विधि दोनों जीवन में ही हो रहा, अध्ययन विधि में चित्रण से लेकर अनुभव तक एक वस्तु-क्रम है, और अनुभव के बाद आत्मा से लेकर मन तक एक वस्तु क्रम, जहाँ सभी क्रिया अनुभव के रोशनी में हो गए...और कुछ चीजें 'एक कदम नीचे आ गए' ऐसा भी लगता है... जैसे (अध्ययन विधि में) स्वभाव, जो साक्षात्कार और बोध की वस्तु है -चित्त और बुद्धि का, 'अनुभव मूलक विधि' में जागृत जीवन के 122 आचरण में 'वृत्ति' में दिखता है ...

उत्तर: ठीक है, ऐसा ही है । अध्ययन विधि अलग है, अनुभव मूलक विधि अलग है । हमने 'अनुभवमूलक विधि' से अध्ययन विधि को प्रसुत किया है .... इसे ठीक से समझना होगा ।

जिज्ञासा: रूप में जो 'सूक्ष्म रूप' है, परमाणु, प्राणकोषा, वगैरह ये भी अनुभवमूलक चित्रण है ?

उत्तर: अनुभवमूलक विधि से होने वाले चित्रण में ये आ जाता है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब भ्रमित स्थिति में रूप भी पूरा आता नही ... भ्रमित स्थिति में स्थूल रूप ही पकड़ में आता है, सूक्ष्म रूप नहीं ...

उत्तर: वो ठीक है, मान्यता के आधार पर अनुभव होता है, प्रमाण के आधार पर प्रमाणित होता है, अनुभवमूलक प्रमाण।

जिज्ञासा: जैसे परमाणु एक क्रिया है, और उस क्रिया के चार आयाम है - 'रूप गुण स्वभाव धर्म' ये 'आयाम' भी प्रत्येक-एक, एक 'किया' ही है ?

उत्तर: आयाम हो, या वस्तु हो, विश्लेषण से ठीक हो जाता है अनुभव के बाद। भौतिक-रासायनिक संसार चित्रण में ही समाप्त हो जाता है, केवल जीवन बचता है, अवधारणा, बोध में .... अभी-अभी जीवन की बात होती रही, आप पुनह जड़ में चले गये !!!

जिज्ञासा: स्वभाव 'वस्तु' के रूप में 'क्रिया' है या नहीं ?

उत्तर: क्रिया ही स्वभाव है, स्वभाव के रूप में क्रिया को पहचाना जाता है ।

जिज्ञासा: धर्म भी क्रिया है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: एक ही क्रिया को 'रूप गुण स्वभाव धर्म' - इतने विधि से पहचाना जा सकता है...अर्थात क्रिया के चार आयाम हुए ?

उत्तर: चारों अवस्था में अलग अलग है ... मान्यता के आधार पर अनुभव करना है, अनुभवमूलक विधि से जीना है एक भाग, बताना एक भाग, दोनों होता है। अभी हम जी रहा हूँ, हमारा आधा भाग बताने में जाता है, आधा भाग व्यवहार करने में जाता है, बताने और व्यवहार करने में अंतर है की नही? यह अनुभव के बाद ही होगा ।

जिज्ञासा: जो 'स्वभाव और धर्म' संबंधी सूचनाओं को मैं सुनता हूँ, वो मान्यता के रूप में मुझमें चित्रित होता जाता है ...

उत्तर: अभी श्रवणपूर्वक ही समझना होगा, श्रवण को सत्य मानना होगा, फिर अनुभव के बाद सत्य क्या है, पता लगता है । अभी मान्यता है ... मान्यता कि विधि से हम अवधारणा, बोध तक जाते हैं, और अनुभव प्रमाण हो जाता है । अनुभव में तीनों प्रमाण होता है विकसित चेतना का (अनुभव प्रमाण, विचार प्रमाण, व्यवहार प्रमाण) ।

जिज्ञासा: क्या अध्ययन में ऐसे 'मान्यता' का होना, इसे स्वीकारने का आधार: "i) सत्य भास्-आभास होना, ii) तर्क संगत होना, iii) सार्वभौम होना, iv) सार्वकालिक होना, v) सर्व शुभ से जुड़ना, vi)जीने में आना" है? अर्थात इस प्रस्ताव को मानने का यह सब आधार है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: मान्यता के रूप में जो 'स्वभाव-धर्म' का श्रवण होता है ये चित्रण में आता है ?

उत्तर: मान्यता के आधार पर चित्रण होता है ।

जिज्ञासा: परन्तु जो 'स्वभाव धर्म' है इसमें 'रूप' तो है नहीं ... जबकि यह मान्यता के रूप में चित्रित होते हैं, और चित्रण में रूप और गुण दोनों समाया है...

उत्तर: रूप तो चार अवस्था है,

जिज्ञासा: इसलिए स्वभाव धर्म कि सूचना जो चित्रित होगा, भास् के रूप में, ये रूप और गुण के साथ ही रहता है, भाषा के साथ ही रहता है !!

उत्तर: ठीक है, ऐसा ही है...

जिज्ञासा: स्वभाव-धर्म को 'सीधे' देखना – बिना नाम-रूप के, बिना रूप-गुण और भाषा के पुट के, यह साक्षात्कार – बोध –अनुभव में ही हो पाता है ?

उत्तर: हाँ । आगे चलो...<u>सार बात</u> पूछना ! "भूसीओं" को छोड़ते जाना ! भूसी को कूट कूट कर क्या करेंगे !

जिज्ञासा: मानव व्यवहार दर्शन में चित्रण के ८ क्रिया बताया है - रूप, गुण, गणना, काल, विस्तार, श्रम, गति, परिणाम ... इस सन्दर्भ में कुछ पूछना था

उत्तर: बताओ ना..

जिज्ञासा: जैसे चित्रण में 'गणना' संभव है, वैसे ही बुद्धि में भी गणना संभव है क्या ?

उत्तर: बुद्धि में नहीं होता है कोई गणना ! अनुभव में नहीं आता गणना!

जिज्ञासा: परन्तु बुद्धि में जो 'वस्तु' आता है, उसकी गणना स्मरण पूर्वक बताया जा सकता है ?

उत्तर: ठीक है । 'स्वयं प्रमाणित करने की इच्छा' के आधार पर वस्तु समझ में आता है, और कुछ नहीं । अध्ययन विधि से मान्यता के रूप में हम बोध तक ले जाते हैं, अनुभव के बाद प्रमाणित होता है । आपमें अभी 'चित्रण पत्रण' कुछ नही होता, आप उसे 'चित्रित' कर रहे हैं, ऐसा नही है - श्रवण के आधार पर वह स्वयं चित्रित होता है – मान्यता के रूप में ... हमसे आप सूचना पाते हैं, सूचना के आधार पर आप जीने का अभ्यास करते हो, उसके आधार पर अनुभव होता है...जीने की विधि से ही होता है, अनुभव | और अनुसन्धान विधि से पहले अनुभव होता है, बाद मे प्रकाशन होता है।

जिज्ञासा: जैसे, आपसे सुना है, 'तीनों ज्ञान' या पूर्णता जो है उसका बोध होता है … जबकी, बुद्धि में गणना तो नहीं है ..? यह जो 'तीन' आप बोल रहे हैं, यह आपमें चित्रण है ...? अथवा जैसे 'अनुभव में ५ सूत्र समझ में आता है' – यह जब कहते है...यह आपका चित्रण है...

उत्तर: अनुभव के आधार पर जो चित्रण करते हैं, उसमें संख्या आती है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब ज्ञान के बारे बात-चीत में संख्या आती है, 'ज्ञान' अपने में संख्या नहीं है ?

उत्तर: ऐसा ही है ।

जिज्ञासा: बुद्धि और आत्मा में 'भूत और भविष्य' काल भी नहीं होता है ?

उत्तर: बुद्धि और आत्मा को 'काल' से कोई मतलब नहीं, काल एक परंपरा है। परंपरा के रूप में चित्रण होता है। चित्रण के पूर्व काल कुछ नहीं, बाद में कुछ नहीं, परंपरा चित्रित होता है ।

जिज्ञासा: बुद्धि और आत्मा केवल 'वर्तमान' का ही दृष्टा होते हैं ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: चित्रण में 'विस्तार' एक क्रिया है, विस्तार जो है, बुद्धि और आत्मा में 'व्यापक' के रूप में समझ में आता है क्या ?

उत्तर: कुछ नहीं ! ये (विस्तार) सब चित्रण की बात है ... व्यापक वस्तु अनुभव में आता है। प्रमाण विधि से अनुभव बोध होता है वही चीज़ चित्त में जाकर चित्रित होता है ... जो चित्रित हुआ, उसी को लिखा हूँ...जो विकल्प लिखा हूँ, वो पूरा का पूरा चित्रण के आधार पर लिखा हूँ ।

जिज्ञासा: बुद्धि और आत्मा में 'श्रम' भी नहीं है, विश्राम के अर्थ में ही समझ में आता है ?

उत्तर: समाधान के आधार पर, प्रामाणिकता के आधार पर बुद्धि और आत्मा में विश्राम इसलिए है, ये पूरा का पूरा समाधान के रूप में होता है, सर्वतोमुखी समाधान। सर्वतोमुखी समाधान = प्रश्न मुक्ति अभियान।

जिज्ञासा: 'गति'जो है, बुद्धि और आत्मा में मध्यस्थ के रूप में समझ आता है ?

उत्तर: गति बुद्धि में नहीं आता, वो सब चित्रण है ।

जिज्ञासा: 'मध्यस्थ' बुद्धि में आता है ?

उत्तर: हाँ , मध्यस्थ क्रिया वर्तमान है, जागृति नित्य वर्तमान है । उसमे कौनसा गति बताएँगे हम ?

हम यदी अपने स्वार्थ के लिए किया, स्वार्थवाद, व्यक्तिवाद, स्वार्थ से मार खाओ, व्यापार से मार खाओ, नौकरी से मार खाओ....एक भी नहीं बचता इसमें... न पंडित बचता है, न विद्वान्, न मुर्ख न विज्ञानी बचता है ...

जिज्ञासा: चित्रण में जो 'परिणाम' है, ये बुद्धि में 'अमरत्व' के रूप में समझ आता है ?

उत्तर: अमरत्व समझ आता है, बाकी सब चित्रण विधि से दूर हो जाता है । अभी मानव जात आचरण को क्या समझा? अभी सारा संविधान इसी को लेकर जुटा है - प्रलोभन वश अपराध, प्रलोभन वश भय, भय मुक्ति के लिए अपराध , अभी ऐसा है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जो स्वभाव-धर्म का क्रम से साक्षात्कार होता है आपसे सुना है कि ये साथ साथ बुद्धि में 'जमा' होता जाता है ...

उत्तर: सार भाग । सार भाग क्या है - अस्तित्व, सहअस्तित्व, विकासक्रम, विकास, जागृतिक्रम, जागृति - यही जमा होता है, बुद्धि में ।

जिज्ञासा: ये बुद्धि के स्थिति क्रिया में जमा हो जाता है, 'बोध बल में', इसके साथ साथ बुद्धि में 'संकल्प शक्ति' भी प्रारम्भ होता जाता है क्या ?

उत्तर: नहीं, अनुभव के साथ ही होता है। संकल्प का प्रसारण अनुभव के साथ ही होता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से ये केवल 'निष्ठा' के रूप में ही रहेगा ?

उत्तर: निष्ठा बना रहता है । ठीक है |

जिज्ञासा: 'निष्ठा' जो है ये बुद्धि से ही बनता है ?

उत्तर: बुद्धि तक बनता है ।

जिज्ञासा: अनुभवमूलक विधि से ही उसे 'संकल्प' कह रहे हैं उसके पहले 'निष्ठा' है ?

उत्तर: केवल निष्ठा है । अनुभवमूलक विधि से प्रमाण, अध्ययन विधि से निष्ठा ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से मानव के स्वभाव का जब चिंतन क्रिया में साक्षात्कार होता है, तब उसी क्षण वो चित्रित भी हो जाता है क्या ?

उत्तर: (पहले से) चित्रित रहता ही है !

जिज्ञासा: अच्छा! चित्रण के आधार पर ही साक्षात्कार होता है ?

उत्तर: हाँ । अध्ययन विधि से ऐसा होता है ।

जिज्ञासा: साक्षात्कार होकर पुनः चित्रित हो जाएगा ?

उत्तर: साक्षात्कार होकर चित्रित होता है... अनुभवमूलक विधि से ।

जिज्ञासा: और अध्ययन विधि में ?

उत्तर: अध्ययन विधि में साक्षात्कार होकर के बोध होता है, अनुभव होता है – सीधा | अनुभव मूलक विधि से होता है – प्रमाण, उसका चित्रण-विश्लेषण होता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में 'तदाकार' होने के लिए, 'श्रवण-मनन' के अलावा और कोई भी विधि है क्या ?

उत्तर: और कोई विधि हमको पता नहीं । आप पता लगाओगे तो क्या बुरा ? पता लगाओ ...आपके लिए तो बहुत जगह है...हमको तो दूसरा विधि मिला नहीं । और आगे...

जिज्ञासा: आप जब कहते हैं कि अध्ययन विधि में साक्षात्कार होकर बुद्धि में जमा होता है, ये 'जमा' हो रहा है ऐसा नहीं है ... जो वस्तु पहले से जुड़ा हुआ है .....

उत्तर: एक दूसरे के साथ जुड़कर अनुभव तक जाता है,

जिज्ञासा: ये 'जुड़ेगा' बुद्धि के 'पारभासियता' के रूप में है ?

उत्तर: हाँ, ठीक है । बुद्धि का विस्तार कितना है.... उसके अर्थ में है... (बुद्धि) अनुभवगम्य हो जाये, उतना तक । अनुभवमूलक विधि से प्रमाणित हो जाये, इसके लिए किया जाता है ।

जिज्ञासा: 'बुद्धि अनुभवगम्य हो जाए' का तात्पर्य अवधारणा पूरा हो जाना | बुद्धि, आत्मा का संकेत ग्रहण करने योग्य हुआ, इसके बाद बोध और अनुभव होता है ?

उत्तर: वही है ।

जिज्ञासा: क्योंकि जो श्रवण करते हैं, वो तो 'अलग-अलग' होता है, जब उसमें सोचते हैं तब वह 'जुड़ता' है ...

उत्तर: सार बात समझ में आता है तो (बुद्धि में) जमा होता है, नहीं तो लात मारकर बाहर चित्रण में रुक जाता है !

जिज्ञासा: श्रवण हुआ तो 'पहला जुड़ना' चित्रण में 'आभास' के रूप में हो रहा है, उसके बाद इसका सार बात बुद्धि में जाता है?

उत्तर: चित्रण के बाद ही अवधारणा, अवधारणा के बाद बोध, बोध के बाद सीधा अनुभव है ।

जिज्ञासा: जैसे मुझमे अभी जो हो रहा है, की 'अलग-अलग' जो चित्रण है, वह 'इकठ्ठा' होते जा रहा है

उत्तर: सार बात इकठा होता है बता तो दिया ना भाई !!!

जिज्ञासा: जी – तो यह पहले 'चित्रण' में हो रहा है, उसके बाद ही 'अवधारणा' होता है ?

उत्तर: पहले चित्रण, चित्रण के बाद अवधारणा, अवधारणा के बाद बोध ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो अवधारणा होता है, उसमे 'धर्म' बोलके 'अलग' से कोई वस्तु नहीं है ना, वस्तु 'जुडा' है, "सहअस्तित्व" के रूप में...

उत्तर: शब्द का <u>अर्थ</u> है, बता दिया ! अनुभव के बाद स्पष्ट होता है, अनुभव के पहले स्पष्ट नहीं होता है । प्रमाण के साथ ही स्पष्टता है । 'अध्ययन विधि' से Information (सूचना) के आधार पर अनुभव का स्पष्टता नहीं है, बोध का स्पष्टता नहीं है, अवधारणा का स्पष्टता नहीं है । 'अनुभव विधि' से ही स्पष्टता है | उसके लिए हम व्यवस्था दिया है – अनुभव मूलक विधि से जीने से प्रमाण होता है |

शब्द नहीं जायेगा, <u>अर्थ</u> ही जायेगा .. सार बात बुद्धि में जाता है, सूचना से कोई स्पष्टता नहीं है... । अवधारणा में बहुत सारा बात आता है; छनकर दो बात जाता है अवधारणा के बाद बोध में - व्यवस्था और सार्वभौमता; ये छनकर अनुभव में एक बात जाता है - सार्वभौमता।

आपका capacity (पात्रता) के अनुसार रहना है की आगे की बात चाहिए ?

जिज्ञासा: आगे की बात चाहिए |

उत्तर: आगे का बात चाहिए तो उसे श्रवण विधि से समझना पड़ेगा.... श्रवण विधि से समझकर अनुभव विधि से प्रमाणित करना पड़ेगा, श्रवण विधि से समझना अनुमान होता है - 'अनुभव होगा', इस बात का अनुमान होता है। अनुभव विधि से प्रमाण होता है । इसको करना ही की नहीं? अच्छे से सोचकर बताना !

जिज्ञासा: मुझे अब लग रहा है की मैं अनुभव के पहले ही सारा स्पष्टता चाहता हूँ, यह दिक्कत है... उसके पहले भाषा को एकाकार करने का सीमा है ... अनुभव के पहले अनुमान ही है, परिपुष्ट अनुमान ही है ... यह मानकर मुझे सीधे सीधे वस्तु को समझने में ध्यान देना होगा ... अभी के निष्कर्षों को खुला रखना है, इन्हें यदी 'अंतिम सत्य' मान लूँगा, इन्ही निष्कर्षों को पकड़ लूंगा...आगे का रास्ता बंद...इसीलिए अपने को 'खुला' रखना ठीक है, यह समझ में आ रहा है

उत्तर: ठीक है, उसी की आवश्यकता है । प्रमाण के बाद व्यवस्था आती है – सार्वभौमता अखंडता .. अभी आपका अवधारणा हुए रहने से उस मे चर्चा चल देता...परन्तु 'अध्ययन' को ही अभी इस चर्चा में २० बार दोहरा चुके हैं !

समझना होगा, प्रमाणित करना होगा। समझने की विधि यही है - अवधारणा से शुरू होता है – समझदारी ..भाषा से सुना, अनुमान हो गया - 'अनुभव होगा', उसके आधार पर आपने पूरा अवधारणा स्वीकारा, अवधारणा स्वीकारने के

बाद 'बोध' हुआ सार बात, उसका सार बात अनुभव में आ गया..उसे प्रकट किया, प्रमाणित हो गया ...यही विधि है । विद्वता का मतलब 'मैं समझा हूँ' .. अभी तक का विद्वता यन्त्र है ।

अवधारणा के बिना 'मान्यता' भी नहीं है...अवधारणा की मान्यता के बिना श्रवण मनन की भी कुछ बात कर नहीं सकते !

जिज्ञासा: 'तदाकार' होने कि स्थिति में जो वस्तु 'उद्देश्य' के रूप में चित्रण में स्थापित होता है, उसी का साक्षात्कार होता है क्या?

उत्तर: जो मैं कहता हूँ, शब्द के अर्थ के रूप में - उतना ही चित्रित होता है ।

जिज्ञासा: क्या अध्ययन विधि से 'अवधारणा पूरा' होते ही, बुद्धि का आत्मा की और प्रत्यावर्तन होता है और बुद्धि का आत्मा की और प्रत्यावर्तन होना ही 'बोध' है ?

उत्तर: अध्ययन विधि से प्रत्यावर्तन होता है बुद्धि में, बुद्धि से आत्मा में, आत्मा से, पुनः प्रत्यावर्तन परावर्तन दोनों होता है, प्रत्यावर्तन में व्यवस्था की पास जाएंगें, परावर्तन में बताने की जगह में चले जायेंगे, अभी जैसा मैं हूँ ... अनुभव के बाद ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से साक्षात्कार होने के बाद 'वस्तु' बुद्धि में जमा होता जाता है । तो चित्त में ये 'साक्षात्कार' के रूप में बना ही रहता है, या 'मिट' जाता है ?

उत्तर: साक्षात्कार एक ही बार होने से पर्याप्त है ...मिटता नहीं...सार बात साक्षात्कार से बुद्धि में जाता है ... सार बात है - सहअस्तित्व और अनुभव ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो साक्षात्कार होता है, ये चित्त के चिंतन क्षेत्र में 'श्रुति' की क्रिया है क्या ?

उत्तर: श्रुति क्रिया ही साक्षात्कार करता है - श्रवण, मनन, निदिध्यासन विधि से ।

जिज्ञासा: 'मेधा' एक क्रिया है, चित्त में, इसमें लिखा है - 'विवेक व विज्ञान समेत साक्षात्कार सहित स्वीकार क्रिया' - तो मेधा भी अध्ययन विधि से साक्षात्कार करता है क्या ?

उत्तर: मेधा नाम है, हमारा दिया हुआ। उसका स्वरूप बता दिया – अवधारणा ही मेधा है । अवधारणा कहो, मेधा कहो दोनों एक ही अर्थ के लिए शब्द है ।

जिज्ञासा: 'श्रद्धा' जो क्रिया है, क्या यही अध्ययन विधि में जागृत अथवा विकसित जीवन को पहचानते हैं ?

उत्तर: पहचानने की क्रिया में श्रद्धा आती है ... "श्रेय अर्थम् भाव तेती सा श्रद्धा" - श्रेय की और जाने के लिए हम शोध करते हैं, शोध करने पर ये निकलता है,

जिज्ञासा: इसमें 'श्रेय' का मतलब ...

उत्तर: श्रेय का मतलब है सहअस्तित्व में अनुभव प्रमाण त्रय, जागृत संचेतना।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में जो बाकी क्रियाएँ हैं, जैसे 'कांति', इनका क्या कार्य-रूप है ?

उत्तर: वो सब चित्रण में drop हो गया (रुक जाता), अनुभव मूलक विधि से ही प्रमाणित होगा यह सब – १२२ क्रिया... दूसरा विधि से होता ही नहीं । अवधारणा के पहले पता चलता है जागृत व्यक्ति का 122 आचरण होता है..यहाँ तक की एक निश्चय होता है.... अवधारणा के <u>पहले</u> ।

जिज्ञासा: चित्रण में 8 आचरण बतायें हैं - स्मृति, कला, रूप, गुण इत्यादी । इसमें 'पूज्यता' एक भाव है, ये अपने में एक चित्रण ही है ?

उत्तर: अपने से अधिक विकसित व्यक्ति को पूज्य मानते हैं, ये चित्रण है ।

जिज्ञासा: 'भाव' में रूप गुण भी रहता है ?

उत्तर: भाव में रूप भी रहता है, गुण भी रहता है, रूप के बिना चित्रण नहीं होता ।

जिज्ञासा: अठारह (सम्बन्ध/व्यवहार मूल्य) में से मात्र तीन भाव ही चिंतन में है, बाकी 15 चित्रण से लेकर मन तक हैं, तो कुछ भाव 'विचार' है, कुछ भाव 'आस्वादन' है, कुछ भाव 'चित्रण' हैं, कुछ 'भाव' चिंतन हैं ।

उत्तर: ठीक है । चित्रण अवधारणा नहीं है ... चित्रण पूर्वक <u>सार बात का अवधारणा है</u> । और बताओ ...

जिज्ञासा: बस, मेरे ओरे से 'साक्षात्कार' क्रिया पर चर्चा पूरा हुआ ...

उत्तर: साक्षात्कार, बोध के रूप में; बोध, अनुभव के रूप में; अनुभव मूलक विधि से वापस आना ...अनुभव मूलक विधि से ही हम जी पाएंगे...दूसरा कोई रास्ता नहीं है ।

बोध क्रिया

बाबाजी: अब क्या मुद्दा है ?

जिज्ञासा: बाबाजी बुद्धि ...

उत्तर: बुद्धि के बारे में क्या कहना है? आपके अधिकार से पूछना, अधिकार विहीन बात को नहीं करना। आपकी कल्पना नहीं चलता इस जगह में, अधिकार चलता है ।

जिज्ञासा: अधिकार तो नहीं है अभी, बुद्धि में ...

उत्तर: अधिकार नहीं है तो क्यों पूछना! हम जो कहते हैं, उतना भर करना - अवधारणा से अनुभव तक । क्या कहना है, बताओ ?

जिज्ञासा: अधिकार नहीं है, अब क्या कहूँ? इस क्षेत्र में आपने जो कहा है, मेरे पास उतना ही सूचना है, 'अधिकार' तो है नहीं है...

उत्तर: ठीक है, सूचना के रूप में कह दो !

जिज्ञासा: आपसे सुना है की भ्रमित स्थिति में भी बुद्धि चित्रण को देखता रहता है और अपनी सहमति-असहमति व्यक्त करता रहता है ... इसको मैं स्वंय में कैसे पहचानू ?

उत्तर: तर्क विधि से, तर्क विधि से आता है। अनुभव के बाद तर्क तो बदल जाता है, और उद्देश्य के साथ जुड़ा रहता है ... इसलिए बनता है|

जिज्ञासा: अच्छा, उसके पहले यह मुझे पहचानने में आएगा नहीं ? उसके (अनुभव के) पहले ये केवल भाषा ही है ?

उत्तर: केवल भाषा ही है । वो सूचना के आधार पर ही आपको अनुभव करना पड़ेगा। अध्ययन विधि से यही है, नहीं तो अनुसंधान करो ... अनुसंधान में होता है की नहीं होता है...क्या पता !

जिज्ञासा: जैसे 'कार' या 'प्लेन' चलाते समय बुद्धि का संतुलन के अर्थ में प्रयोग होता है ये आपसे 2010 सुना था ?

उत्तर: कुछ भी काम करता है, चित्रण तक। अभी (मानव में) उसी का अध्ययन है, उसी में पारंगत है, उसी को करता है। दारू पीकर कोई करता है, बिना दारू पिये कोई करता है। ऐरोप्लेन चलाने वाला कोई दारू पीकर चलाता है, कोई बिना दारू पिये चलाता है - एरोप्लेन चित्रण तक ही है ।

जिज्ञासा: एरोप्लेन अधिकांश तो चित्रण तक ही है...

उत्तर: <u>अधिकांश</u> नहीं, पूरा ! चित्रण के <u>अंदर</u> ही है ...

जिज्ञासा: जी ठीक है | आपसे सुना था कि दो शरीर यात्राओं के बीच में शरीर छोडते समय जो भी स्वीकृतियाँ हैं, ये चित्त बुद्धि के पास भेज देता है, बुद्धि में स्टोर (जमा) रहता है ।

उत्तर: **'**बुद्धितत्व 'में समा जाता है, चित्रण सब ... बुद्धि में समाता है ।

जिज्ञासा: और जब पुनः शरीर यात्रा प्रारम्भ करते हैं तब क्या होता है ?

उत्तर: सब भूलकर आता है, बुद्धि में जाने के बाद निरर्थकता सब निषकासन होता है।

जिज्ञासा: मतलब गलत चीज बुद्धि में store होता नही ?

उत्तर: बता तो दिया... निषकासन होता है **!**

जिज्ञासा: और जो सही चीज़, है उसे बुद्धि पुनः चित्त को दे देता है ?

उत्तर: ठीक है, मरने के बाद बुद्धि में चित्त का जो भी store (जमा) था वो वहाँ पहुँचता है, पहुंचकर निरर्थकता सब Reject (नकार) हो जाता है , बुद्धि सब reject कर देता है...इसीलिए, सब भूलकर के पुनः शरीर यात्रा शुरू करता है, पुनः उसी कबाड़ा को भरता है ... क्या प्रयोजन हुआ ? प्रयोजन कहाँ मिला, कहाँ से मिले ... दशावतार हो गया, तीनों आचार्य हो गए, सबने सिर पटक लिया, कहाँ कुछ हुआ ? यथावत है ... उतने ही अपराध है ना, अपराध बढ़ रहा है कि घट रहा है ?

जिज्ञासा: अपराध की विधियाँ तो बढ़ गयी हैं, बाबाजी । अध्ययन विधि में बुद्धि के संदर्भ में तीन शब्द आए हैं: एक प्रतीति, दूसरा अवधारणा, तीसरा बोध | बुद्धि का आत्मा की और प्रत्यावर्तन को आपने बोध कहा है ?

उत्तर: अध्ययन विधि से बोध, सार बात इतना। बोध, प्रमाणित होने के अर्थ में, प्रमाणित होने के बाद बोध जो है, न्याय के रूप में, समाधान के रूप में, व्यक्त होने लगता है ।

जिज्ञासा: क्रम से साक्षात्कार होते-होते बुद्धि में जो जमा होते जाता है इसी को आप प्रतीति बोल रहे हैं ?

उत्तर: सार बात जमा होता है, प्रतीति तो अवधारणा है ।

जिज्ञासा: प्रतीति स्थिर होने की स्थिति अवधारणा है, या प्रतीति ही अवधारणा है ?

उत्तर: प्रतीति जो है, अवधारणा है । अनुभवमूलक विधि से जो आते हैं, प्रतीति, वो बोध है, अनुभव के बाद अनुभव का बोध और संकल्प, प्रमाणित करने का संकल्प । बोध और संकल्प अनुभवमूलक विधि से; अध्ययन विधि से अवधारणा । अवधारणा का बोध ..किस अर्थ में?... प्रमाणित करने के अर्थ में ...

जिज्ञासा: अवधारणा पूरा होने में समय लगता है ?

उत्तर: इसी में समय लगता है !! (अभी) चित्रण को ही अवधारणा मानते हैं ।

जिज्ञासा: जी | अब तो चित्रण में ही जो स्पष्टता बनती है, उसे हम लोग ‘अवधारणा’ मान बैठते हैं, क्योंकि तर्क संगत विधि से बताना बनता है ...

जिज्ञासा: कुछ माह पहले आपने कहा था की "अभी आप लोगों को साक्षात्कार का सुख मिलना शुरू हुआ है, अभी स्थिरता नहीं है" - ये 'स्थिरता' अवधारणा पूरा होने के स्थिति में ही बनती है ?

उत्तर: वही बात है !!! अवधारणा कहाँ से पाओगे ? - अध्ययन से, अध्ययन क्या है? - विकल्प | विकल्प क्या चीज है? - व्यवस्था, व्यवस्था को अध्ययन करना, व्यवस्था परंपरा में बंनता है, एक व्यक्ति से कोई व्यवस्था बनता नहीं, (अभी के सोच विचार से) जितना बनता है, सब अपराध है, अपराध को ही approve करना, समर्थन देना । अभी तक युद्ध और संघर्ष यथावत है । उन्माद त्रय यथावत है, आदिकाल से अभी तक ... इससे ज्यादा क्या गवाही चाहिए ?

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में सर्वप्रथम अवधारणा को ही आप 'समझ' बोल रहे हैं, समझना मतलब अवधारणा... अध्ययन विधि से ?

उत्तर: समझ में आने से अवधारणा होता है, समझ के पहले नहीं होता, उसके पहले अवधारणा केवल 'भाषा' है...बोलने में आता है, रहता नहीं है ।

जिज्ञासा: समझदारी अवधारणा से 'शुरू' होता है ?

उत्तर: हाँ । अनुभव में पूरा होता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से जो अवधारणा बनते जाएगा और उसमें जब 'स्थिरता' की स्थिति आ जाती है, उस समय ऐसे व्यक्ति में बौद्धिक नियम की क्या स्थिति रहती है ?

उत्तर बौद्धिक नियम की स्वीकृति रहता है, बौद्धिक नियम के आधार पर ही तो पूरा अवधारणा ही है।

जिज्ञासा: तो बौद्धिक नियम मे वो लगभग जीना शुरू कर देगा ?

उत्तर: आराम से जीना शुरू करता है ! अवधारणा होने के बाद "भार" कम हो जाता है, भडभडाना ... तब तक भडभडाना ही रहता है, भाषा ही रहता है ।

जिज्ञासा: ऐसे व्यक्ति में सामाजिक नियम की स्थिति ?

उत्तर: स्वधन, स्वनारी हो जाता है, न्यायसम्मत प्रस्तुति अनुभव के बाद होता है । अनुभव विधि से जागृत चेतना होता है। जागृत चेतना में तीनों प्रमाण बताएं हैं । तीनों प्रमाण होने 'न्याय पूर्ण' प्रमाण शुरुआत होता है, उसके बाद 'विचार सम्मत', उसके बाद अनुभव सम्मत । तीनों प्रमाण का तीन अवस्था बताया - तीनों का result (परिणाम) बताया ।

जिज्ञासा: जीवन मूल्यों में से सुख, शांति, संतोष हो जाता है, और आनंद शेष रहता है अवधारणा में ?

उत्तर: अवधारणा में शेष रहता है, अनुभवमूलक में पूरा हो जाता है, जागृत चेतना विधि से ही ये सुख, शांति, संतोष आनंद होता है । सुख शांति समाधान समृद्धि पूर्वक होता है । नियम नियंत्रण सहित न्याय धर्म सत्य संतुष्टी की बात होता है । अनुभव के बाद बाकी बात होता है । अनुभव के पहले अवधारणा ही रहता है, प्रमाण नहीं होता ।

जिज्ञासा: अवधारणा की स्थिति में रहते हुये हम चित्रण में सातो सम्बन्धों को पहचान कर जीना शुरू कर देते हैं ?

उत्तर: वो अनुकरण विधि से होता है । प्रमाण के बिना अनुकरण होता नहीं । प्रमाणित व्यक्ति को देखकर जो अनुकरण होता है वो होने लगता है । अवधारणा में नहीं रहता है, सम्बन्ध, चित्रण में रहता है सम्बन्ध|

जिज्ञासा: जो 'नौ स्थापित' और 'नौ शिष्ट' मूल्य है वो जिस व्यक्ति में अवधारणा हो गया है उसमें चित्रित होता है ?

उत्तर: हाँ । यह (मूल्य) सब चित्रण का काम है |

जिज्ञासा: कर्म दर्शन में आया है - 'आचरण ही अवधारणा है । अवधारणा ही वृत्ति एवं निवृत्ति में प्रमाणित होती है' ...अभी जो बात हुआ, यह वाक्य क्या उसे से सम्बंधित है?

उत्तर: वही, अवधारणा में क्या होता होता लिखा है | इसका बोध होना, अनुभव होना, भावी हो जाता है |

जिज्ञासा: एक और जगह आया है - 'सत्य प्रतीति में ही व्यवहार में निष्ठा एवं संयंत आचरण पायी जाती है' | संयंत होना 'अध्ययन विधि' में 'अवधारणा' पूर्वक कहा जो 'धारणा' की भूमि है | इसके बाद जो सत्य प्रतीति, 'निष्ठा' एवं 'ध्यान' की भूमि है, वह बोध से सम्बंधित है ?

उत्तर: बोध होने से निष्ठा होता है |

जिज्ञासा: ये जो चार भय बताते हैं प्राण, धन, पद व मान भय, अवधारणा की स्थिति में भय होता है कि नहीं होता है ?

उत्तर: वो गौण हो जाता है ।

जिज्ञासा: जो छः आवेश हैं (षड विकार: मोह लोभ काम, मद मात्सर्य क्रोध) ... ये अवधारणा के पहले खत्म होता है या अवधारणा के बाद ?

उत्तर: ये खत्म हो जाता है, अवधारणा के <u>बाद</u>।

जिज्ञासा: जो 4 विषय प्रवृत्ति हावी रहते हैं (आहार निद्रा भय मैथुन) - ये नहीं रहता है ?

उत्तर: ये खत्म हो जाता है ।

जिज्ञासा: पुत्रेष्णा, वित्तेष्णा लोकेष्णात्मक प्रवृत्ति रहता है ?

उत्तर: ये रहता है ।

जिज्ञासा: जिस व्यक्ति में अवधारणा हो गया, उसमे अमानवीय स्वभाव - दीनता, हीनता क्रूरता खत्म हो जाता है ?

उत्तर: खत्म हो जाता है...अवधारणा में ख़त्म ... चित्रण तक ही अमानवीयता है । मन के अनुसार चलना, राक्षसीयता-पशुता है । पशुता में पराधीनता रहता है, और राक्षसीयता में छीना-झपटी रहती है ।

जिज्ञासा: अवधारणा की स्थिति में अहंकार रहता है ?

उत्तर: नहीं रहता है, वो सब समाप्त हो जाता है ... अहंकार चित्रण तक ही रहता है ।

जिज्ञासा: आपने दूसरी विधि से 'आत्मविमुख बुद्धि', अथवा 'आत्मवंचित बुद्धि' को भी अहंकार कहा है ?

उत्तर: आत्मवंचना भी अहंकार है, वो भी अहंकार का एक भाग है । चित्त में अहंकार निवृत्ति होती, है तब बुद्धि में सच्चाई जाती है ।

जिज्ञासा: अहंकार को चित्त में अभिमान, वृत्ति में हठ, मन में आवेश की संज्ञा है ? अर्थात यहाँ पर 'अभिमान' से आशय है?

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: अवधारणा के लिए परिभाषा आया है 'परिपुष्ट अनुमान- अनुमान की पराकाष्ठा' और बुद्धि के लिए परिभाषा आया है 'निश्चयात्मक स्वीकृति – अर्थ के प्रति शंका मुक्ति' । तो ये दोनों परिभाषा अवधारणा के लिए ही है ?

उत्तर: हाँ । दोनों परिभाषा अवधारणा के लिए अनुकूल है की नहीं उसको सोचो ।

जिज्ञासा: एक वाक्य है "आत्मा को जानने मानने का क्रियाकलाप बुद्धि में ही होता है" - तो बुद्धि ही आत्मा को जानता-मानता है?

उत्तर: जानने मानने की इच्छा बुद्धि में ही होता है ..

जिज्ञासा: यह बुद्धि में 'जिज्ञासा' के रूप में होता है ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: आत्मा 'स्वंय' को भी तो जानता है ना ?

उत्तर: स्वंय को जानता है, तभी तो बुद्धि में बोध होता है। अनुभव के बाद ।

जिज्ञासा: बुद्धि के चार क्रिया दिये हैं – अस्तित्व, आनंद, धृति और धी…क्या अध्ययन विधि से जो अवधारणा होता है, वो ‘अस्तित्व’ और ‘धृति’ के रूप में होता है?

उत्तर: अस्तित्व समझ में आता है, सहअस्तित्व रूप में... तभी यह होता है ... धी

जिज्ञासा: तो 'आनंद' और 'धी' ये अनुभवमूलक ही होता है ?

उत्तर: अनुभव के साथ ही होता है ।

जिज्ञासा: बुद्धि में जो चार क्रियाएँ हैं, इसमें (उस परिवेश के) सारे अंश मिलकर 4 क्रिया करते हैं ?

उत्तर: अनभव के बाद होता है ..अनुभव के लिए नहीं होता है, अनुभव के बाद प्रवृत्ती के रूप में होता है ... अनुभवमूलक प्रवृत्ती।

जिज्ञासा: समाधान-समृद्धि-अभय-सहअस्तित्व जब कहते हैं, तो ‘अभयता’ में…

उत्तर: अखंड समाज में अभयता, सार्वभौम व्यवस्था । अखंड समाज के लिए सार्वभौम व्यवस्था ।

जिज्ञासा: ये बुद्धि में स्वीकृति के फलन में होता है ?

उत्तर: बुद्धि में ही स्वीकृत होता है और अनुभवमूलक विधि से प्रमाण होता है । बुद्धि में स्वीकृति, और अनुभव में प्रमाण – यह होता है ।

जिज्ञासा: क्या साक्षात्कार होने के लिए सारी चीज़ श्रवण मनन पूर्वक चिंतण के सीमा में पहले ‘स्थिर’ होना आवश्यक है ?

उत्तर: बहुत आवश्यक है !!! अध्ययन की शुरुआत वहीं से है ! अवधारणा में पहुँचने की शुरुआत ही “अध्ययन” का मतलब यही है, नहीं तो मात्र 'पठन' है ।

जिज्ञासा: मैं जैसे कर रहा हूँ - इस विधि से वस्तु को जोड़ना, समझने के वस्तु को केंद्रीकृत करना, यह क्या सही दिशा में है ?

उत्तर: साक्षात्कार के ओर है, साक्षात्कार के अर्थ में है, यह साक्षात्कार नहीं है... यह सब चित्रण तक की काम है । अभी तक 'पठन' को 'अध्ययन' मानते हैं, … पठन 'अध्ययन' नहीं होता है । इसमें 'जीने' वाला पक्ष जुड़ना, 'प्रमाण' का पक्ष जुड़ना, 'अध्ययन' का पक्ष जुड़ने से हो जाता है । बता तो दिया आपको - अभी साक्षात्कार का भनक है, अवधारणा होना शेष है । अवधारणा होने से बोध होता ही है, अनुभव होता ही है ।

जिज्ञासा: यह दिख रहा है, की चित्रण के ही कई सारे layer (परत) हैं ... 'एक के अन्दर एक' है ... जैसे चित्त में ही वस्तु चित्रित होता है श्रवण रूप में, और चित्त अपने ही चित्रण को, 'अवधारणा' मान ले रहा है ...अर्थात चित्रण के सम्मुचय को चित्त ही 'अवधारणा' नाम से चित्रित कर ले रहा है!

उत्तर: हाँ, ऐसा ही है... चित्रण में क्रम है, साढ़े चार क्रिया में होता है यह - चित्रण ...साढ़े पाँच क्रिया शेष रहते हैं... इसको पूरा करने के लिए अपन प्रयत्न कर रहे हैं, यदी प्रयत्न सफल होता है, तो प्रमाणित हो जाता है ... प्रमाणित होना ही गमय स्थली है, हमारे अनुसार ।

जिज्ञासा: पुनह: प्रतीति व अवधारणा एक ही है क्या ? क्योंकी, इसके बारे में दो विधि से अभी प्रचलित मान्यता है: 1) प्रतीति और अवधारणा एक ही है 2) प्रतीति होने के बाद स्थिरता के स्थिति का नाम 'अवधारणा' है ।

उत्तर: अवधारणा पहले वाला – चित्त में साक्षात्कार होकर बुद्धि में एकत्रित होता है । ये जब छनकर बुद्धि में जाता है, तो बोध होता है ।

जिज्ञासा: तो प्रतीति और अवधारणा दोनों एक ही है, और यह पूरा होने में समय लगता है ?

उत्तर: हाँ, दोनों एक ही है । इसी में जो कुछ भी समय लगता है, लगता है । बोध तक पहुँचने में प्रतीति पूरा होना है।

जिज्ञासा: २००७ में एक बार आपने कहा था - "12 इंच का यदी अध्ययन माने उसमे 11 इंच साक्षात्कार की तय्यारी है, 1 इंच मात्र साक्षात्कार है । साक्षात्कार होने से बोध और अनुभव होता ही है । "

उत्तर: ऐसा ही है ।

जिज्ञासा: साक्षात्कार प्रारम्भ होने के बाद मेरा अवधारणा 'पूरा' हो गया है, ये मुझे कैसे पता चलेगा ?

उत्तर: बोध होने से, अनुभव होने से । बोध-अनुभव के लिए पुरुषार्थ नहीं है | बता तो दिया ना भाई – यह automatically (अपने आप) होता है !

जिज्ञासा: तो अध्ययन से अवधारणा होना प्रारंभ हो जायेगा, और अवधारणा पूरा होने से....

उत्तर: अवधारणा पूरा होना के बाद बोध होता है, बोध होने के बाद अनुभव होता है ।

जिज्ञासा: बोध के जगह के लिए पुस्तक में एक वाक्य है: ‘अस्तित्व बोध एवं जीवन बोध संपन्न हो जाते हैं, और प्रमाणित करने के लिए जाते हैं’

उत्तर: वही, जागृत चेतना विधि से जीना बन जाता है ... अवधारणा का ही सारांश अनुभव में आकर प्रमाण हो जाता है।

जिज्ञासा: अवधारणा में एक stage (स्थिति) आएगी, जिसमे "मैं पूरा समझ गया हूँ - ये स्वीकृति हो जाएगी ?

उत्तर: स्वीकृति के आधार पर ही होता है …

जिज्ञासा: ‘मैं समझ गया’, ‘अवधारणा हो गया’, 'अब प्रमाण शेष है' - उसके लिए बोध और अनुभव होता है ?

उत्तर: हाँ । अनुभव का बोध इसीलिए, अनुभव को प्रमाणित करने के लिए...

जिज्ञासा: बुद्धि में दो क्रियाएँ हैं - बोध और संकल्प । बोध में 'अस्तित्व और आनंद' क्रियाएं है, और 'संकल्प' में 'धृति और धी' । अध्ययन विधि से जो अवधारणा होता है, वो बुद्धि का 'अस्तित्व' वाला क्रिया है क्या ?

उत्तर: अस्तित्व समझ में आता है, जीवन व मानवीयतापूर्ण आचरण समझ में आता है, तभी आगे चलते हैं - बोध और अनुभव में ।

जिज्ञासा: ये जानना चाह रहे हैं, की जो अध्ययन विधि से अवधारणा होता है, वो बुद्धि में 'अस्तित्व' की क्रिया है, और 'निष्ठा' होता है, वो 'धृति' है;

उत्तर: ठीक है ना, वो तो परावर्तन विधि से धृति है |

जिज्ञासा: जी | इस स्थिति को आपने 'अर्ध बोध' भी लिखा है | और पूर्ण बोध के बाद ही 'आनंद' और 'धी' होता है ?

उत्तर: बोध होने से होता है, अनुभव से प्रमाणित होता है, धी-धृति ।

जिज्ञासा: और अध्ययन विधि में जो 'निष्ठा' हो रहा है, वह 'धृति' से सम्बंधित है ?

उत्तर: वो ठीक है ।

जिज्ञासा: अवधारणा क्षेत्र के लिए ही दो परिभाषा आया है - एक विधि से 'परिपुष्ट अनुमान' कहा है' – अवधारणा को; और दूसरे विधि से 'निश्चयात्मक स्वीकृति' कहा है - बोध के लिए ।

उत्तर: निश्चयात्मक स्वीकृति - अध्ययन में जिसको 'निश्चित' माना है उसमे यदी होते हैं, तब अवधारणा होता है ।

जिज्ञासा: अवधारणा 'निश्चित' होते हुए भी अनुभव के संदर्भ में, अथवा अनुभव के लिए 'पुष्टि' है, इसलिए उसको 'परिपुष्ट अनुमान' कहा है ?

उत्तर: अनुभव की पूर्व भूमि है | अध्ययन परिपुष्ट होने के लिए नहीं है, अनुभव परिपुष्ट होने के लिए काम है – यह सब ।

जिज्ञासा: अवधारणा को "परिपुष्ट अनुमान" कहने का यह आशय नहीं है कि उसमें 'स्थिरता' नहीं है, वो निश्चित है, परन्तु अभी अनुभव नहीं है, अनुभव का अनुमान परिपुष्ट हो रहा है, इसीलिए उसे 'परिपुष्ट अनुमान' कहा है ?

उत्तर: ठीक है, स्वीकार होना है ।

जिज्ञासा: आपने पहले एक बार कहा था, 'अवधारणा में अनुभव की सम्भावना दिखने लगती है' |

उत्तर: ऐसा ही है ।

जिज्ञासा: 'अस्तित्व निरन्तर है', 'प्रकृति निरंतर है', ये साक्षात्कार में आता है ?

उत्तर: यह आता है, अनुभव के बाद । साक्षात्कार में अस्तित्व रहता है ... साक्षात्कार में अस्तित्व चारो अवस्था मिला हुआ स्वरूप में रहता है ...

जिज्ञासा: उसकी निरंतरता आ जाता है – साक्षात्कार में ?

उत्तर: उसकी निरंतरता की बात अनुभव के बाद होता है ।

जिज्ञासा: अच्छा! “अस्तित्व है” – यह भर साक्षात्कार में आ जाता है ?

उत्तर: हाँ । अध्ययन विधि से “है” – यह आता है, ‘अनुभव है’ – यह अनुभव में ही आता है ।

जिज्ञासा: तो ‘प्रकृति शाश्वत है’ – यह अंतत: अनुभव में ही आता है ?

उत्तर: अध्ययन विधि से स्वीकार होता है, अनुभव विधि से प्रमाण होता है । अनुभव विधि से प्रमाण, अध्ययन विधि से स्वीकृति।

जिज्ञासा: ‘स्वंय का निरन्तर होना’ - ये भी अध्ययन विधि से साक्षात्कार हो जाएगा ?

उत्तर: हाँ। उतना ही बात है ।

जिज्ञासा: भ्रमित मानव में बुद्धि की सक्रियता होती है की नहीं ?

उत्तर: कुछ नहीं होता, बुद्धि से बात होता ही नहीं, हर भ्रमित मानव साढ़े चार क्रिया तक ही, चित्रण तक ही रहता है । संघर्ष करने के लिए, युद्ध करने के लिए तैयार होता है - यह राक्षस मानव; आहत होता है - यह पशु मानव| विश्लेषण विधि से यह आ जाता है ।

जिज्ञासा: तो ‘बुद्धि की सक्रियता’ अध्ययन से अवधारणा जैसे प्रारंभ होता है, उसी से शुरू होता है ?

उत्तर: हाँ, अध्ययन से, अवधारणा से शुरू होता है । पूर्व भूमि बनता है – अनुभव का पूर्व भूमि बुद्धि बनता है और अनुभव प्रमाण का पृष्ट भूमि है, बोध।

जिज्ञासा: अनुभव दर्शन का पहला वाक्य है " अब ब्रह्म जिज्ञासा है” - ये जिज्ञासा बुद्धि में ही बनता है ?

उत्तर: 'ब्रह्म जिज्ञासा' बुद्धि पूर्वक होता है, अवधारणा के बाद ।

जिज्ञासा: अवधारणा, एवं बोध के पहले 'ब्रह्म जिज्ञासा' नही बनता? उसके पहले 'इच्छा' के रूप में है वह ?..कामना कहलायेगा?

उत्तर: हाँ । भाषा के रूप में रहता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन की परिभाषा में 'अधिष्ठान की साक्षी' - ये शब्द आया है , यहाँ अधिष्ठान का तात्पर्य आत्मा से है ... तो अध्ययन विधि से जो अवधारणा होता है, आत्मा साथ साथ अवधारणा को 'देखता' रहता है क्या ?

उत्तर: अवधारणा हुआ, इसके साक्षी अनुभव ही है । जीवन के मध्यांश को 'अधिष्ठान' कहा है । अनुभव का साक्षी है प्रमाण, प्रमाण का साक्षी है परंपरा।

जिज्ञासा: बुद्धि में जो अवधारणा होते जाता है, क्या आत्मा इसका दृष्टा बना रहता है ? यही 'आत्मा का साक्षी' है?

उत्तर: हाँ । आत्मा इसका दृष्टा बना रहता है ।

जिज्ञासा: इस समय बुद्धि आत्मा को पहचानता है? बुद्धि को पता चलता है आत्मा भी एक क्रिया है ?

उत्तर: अनुभव के <u>बाद</u> ।

जिज्ञासा: 'आत्म-बोध' से ही बुद्धि को पता चलता है की 'आत्मा भी एक क्रिया है'?

उत्तर: बोध का दृष्टा आत्मा है ।

जिज्ञासा: बोध संबंधी कुछ परिभाषा है: 'नियम बोध' - 'अध्ययन पूर्वक जागृति सहज आचरण बोध'... यह अध्ययन विधि से है?

उत्तर: अध्ययन विधि से जो बोध होता है वही लिखा है। आचरण बोध मतलब प्रमाण बोध, मानव का आचरण जो विकसित चेतना में होता है, वही बोध होता है ।

जिज्ञासा: जो 'नियम बोध' लिखा है, ये अध्ययन विधि से 'अवधारणा बोध' के लिए है या 'अनुभव बोध' के लिए है ?

उत्तर: वही, उसी का है । यह सब अध्ययन विधि से पहला बोध होता है, अनुभव विधि से confirm (पक्का) होता है। अनुभव विधि से पहले प्रमाण होता है, उसके बाद बोध होता है – दोनों में अंतर इतना ही है ।

जिज्ञासा: 'आचरण बोध' में स्वंय का स्वभाव, विश्वास, श्रद्धा, प्रेम .....

उत्तर: ये सब आ जाता है । 'नियम बोध' मतलब आचरण ।

जिज्ञासा: आचरण स्पष्ट हो रहा है मतलब स्वयं का स्वभाव स्वीकृत हो रहा है ?

उत्तर: वो सब स्वीकृति के रूप में है । बुद्धि स्वीकार करता है ।

जिज्ञासा: आचरण में क्या चीज स्वीकृत होता है बुद्धि में ?

उत्तर: प्रमाण, प्रमाण का स्वीकृति, प्रमाण पूर्वक आचरण, आचरण पूर्वक स्वीकृति – यह होता है, बुद्धि में... अनुभव पूर्वक clear (स्पष्ट) हो जाता है ।

जिज्ञासा: जो बाकी के मूल्य हैं, सम्बन्ध में, यह 'अध्ययन' और 'अवधारणा' में समाहित रहते हैं ?

उत्तर: अध्ययन विधि से 18 मूल्य आ जाता है –चित्रण तक ; अनुभव के बाद 122 आ जाता है ।

जिज्ञासा: 'नियम बोध' और 'न्याय बोध' एक ही चीज़ है या अलग अलग है ?

उत्तर: नियम, आचरण है, जिसमें 'न्याय-धर्म-सत्य' तीनो समाया है। न्याय क्या होता है? वो बोध होता है..अध्ययन विधि से ।

जिज्ञासा: इसका मतलब मानव के साथ जो सम्बन्ध है, वो 'न्याय बोध' के रूप में आता है ?

उत्तर: बता तो दिया, अध्ययन विधि से न्याय बोध होता है ।

जिज्ञासा: 'नियम बोध' में 'न्याय बोध' समाया है, इसे थोडा स्पष्ट करें ।

उत्तर: नियम बोध में न्याय बोध है ही, तभी, नियम नियंत्रण संतुलन एक 'नियम' है, आचरण का । जागृत चेतना विधि से जागृत मानव आचरण करता है, इसमें नियम नियंत्रण संतुलन आता है। चारो अवस्था में संतुलन, तीनों अवस्था में नियम | आचरण ही नियम है।

जिज्ञासा: ये 'नियम' और 'आचरण' अलग अलग साक्षात्कार होगा क्या ?

उत्तर: 'आचरण ही नियम' – यह लिखा है । अध्ययन विधि से, बुद्धि में केवल अनुभव का सार बात आता है... आचरण का बोध होता है ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि से स्वंय के स्वभाव का भी अवधारणा बनता है ?

उत्तर: अवधारणा और बोध दोनों होता है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब "आचरण बोध" ही 'नियम बोध' है, "स्वभाव बोध" ही 'न्याय बोध है', और 'नियम अर्थात आचरण' में 'न्याय अर्थात स्वभाव' समाया है ?

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: 'प्रयोजन बोध' क्या है ? स्वभाव को भी प्रयोजन कहा है ?

उत्तर: प्रयोजन बोध मतलब अनुभव। अनुभव ही प्रमाण है । 'स्वभाव' अनुभव विधि से आता है । अनुभव ही स्वभाव के रूप में वर्णित होता है ।

जिज्ञासा: 'कर्तव्य बोध' – 'दायित्व बोध' ऐसा पुस्तकों में आया है - ये 'न्याय बोध' से ही संबन्धित है ?

उत्तर: ये दोनों न्याय में ही आता है, 'धर्म' में कर्तव्य छूट जाता है, 'दायित्व' रह जाता है, सत्य में ये दोनों छूट कर सहअस्तित्व आ जाता है ।

जिज्ञासा: ये सारे 'बोध' - जैसे नियम बोध, न्याय बोध, आचरण बोध, "कैसे सम्बंधित हैं", ये सोचने के क्रम में साक्षात्कार होगा, की साक्षात्कार के बाद ये स्पष्ट होगा ?

उत्तर: साक्षात्कार के बाद भी स्पष्ट नहीं होता है, अनुभव के बाद स्पष्ट होगा, अनुभवमूलक विधि से जब चिन्तित करते हैं तब स्पष्ट होता है । साक्षात्कार अध्ययन से, अनुभव से स्पष्टिकरण ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि में इन परिभाषाओं को इस विधि से, 'एक अर्थ' में एकत्रित करने में कोई उपयोग होता है या नहीं ?

उत्तर: अध्ययन को अनुभव के रूप में लेना, और अनुभव को अध्ययन के रूप में लेने से बनता नही । ये होता नहीं, 'अनुभव' को अध्ययन की वस्तु मानना, जबकी अध्ययन की वस्तु नहीं है अनुभव, 'अनुभव' जो है ना, अनुभव ही है - उसका दूसरा कोई वाणी ही नहीं है । वाणी सब खत्म हो गया । अनुभव के आधार पर जब विश्लेषण करते हैं, तब ये सब पता लगता है ।

जिज्ञासा: ये सारा निष्कर्ष अनुभव के पहले स्थिर नहीं होता ?

उत्तर: अनुभव के लिए नहीं है, अनुभवपूर्वक है – निष्कर्ष । अध्ययन विधि से 'निष्कर्ष' के लिए अवधारणा है ।

जिज्ञासा: मात्र श्रवण, मनन से जो निष्कर्ष है, इसकी कोई स्थिरता नहीं है?

उत्तर: श्रवण मनन निदिध्यासन विधि से 'निदिध्यासन' जितना भी होता है, उसमें से आंशिक रूप में अनुभव होता है, उसके बाद निष्कर्ष है । अनुभवमूलक विधि से जब चित्रण करते हैं, स्वाभाविक रूप में निष्कर्ष निकलता है । मैं अभी जो भी बात करता हूँ, 'निष्कर्ष विधि' है की 'puzzle विधि' (पहेली) है ?

जिज्ञासा: आपके लिए 'निष्कर्ष' है, मेरे लिए 'puzzle' है !

उत्तर: यह अध्ययन में नहीं आता है... अनुभव मूलक विधि से विश्लेषण करने से आता है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब, अनुभव के पहले, 'निष्कर्ष' रूप में 'अनुमान' ही है - श्रवण-मनन पूर्वक, अवधारणा पूर्वक परिपुष्ट अनुमान...यह 'अनुमान', अनुभव में ही समाप्त होता है....और अनुभव मूलक चित्रण-विश्लेषण में सम्पूर्ण स्पष्ट हो जाता है...

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: इस पूरे प्रक्रिया से मुझे अपने में चित्रण एवं विश्लेषण का सीमा स्पष्ट हुआ है...आपने 'बोध अनुभव' के लिए जो भाषा का रचना किया है, वह मात्र चित्रण-विश्लेषण में 'एक सीमा' से अधिक सुलझता नहीं... 'वस्तु' को 'सीधे सीधे समझना', उसके अर्थों में, मानवीय आचरण के अर्थ में जीने के लिए प्रवृत्ति होना, अवधारणा पूरा होना, बोध होना...यही बचता है, अब मेरे लिए...

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: धर्म बोध का परिभाषा आया है – 'सर्वतोमुखी समाधान समझ में आना' ।

उत्तर: सर्वतोमुखी समाधान = धर्म, मानव का ।

जिज्ञासा: यह अध्ययन विधि में आता है की अनुभव के बाद ही होता है ?

उत्तर: अनुभव के बाद प्रमाणित होता है - धर्म । समाधान जो है, अनुभव के बाद ही होता है, अध्ययन से होता नही । पठन से तो बहुत दूर है ।

जिज्ञासा: अनुभव के पूर्व में धर्म अर्थात 'सर्वतोमुखी समाधान' अवधारणा में आता है ?

उत्तर: नहीं आता है, धर्म । धर्म अवधारणा में नहीं आता, धर्म का अपेक्षा बनता है अवधारणा में, अनुभव के बाद धर्म स्पष्ट होता है - 'सर्वतोमुखी समाधान' रुप में ।

जिज्ञासा: आपने एक लेख में 'न्याय बोध' के बाद 'धर्म बोध' उसके बाद 'सत्य बोध' एवं अनुभव की बात लिखी है | इसका मतलब अवधारणा पूर्वक न्याय बोध, धर्म बोध, फिर सत्य बोध होना, और उसके बाद अनभव मूलक विधि से…

उत्तर: न्याय धर्म सत्य बोध होकर ही अनुभव होगा | अनुभव के बाद धर्म प्रमाणित होता है |

जिज्ञासा: जी | क्योंकि उसे की साथ आपने व्यवहार दर्शन में यह भी लिखा है की 'धर्म की मात्र अनुभूति ही होती है' …इसका मतलब धर्म पूर्णतया अनुभव में ही…

उत्तर: अनुभव में ही स्पष्ट होता है … धर्म और सत्य | जैसे लिखा है, वैसे ही स्वीकारना पड़ेगा | आपका कविता से इसको लेन-देन नहीं है…अवधारणा से अनुभव तक

जिज्ञासा: यह सब करने में मेरा मूल आशय यही था कि साक्षात्कार की वस्तु क्या है, यह बहुत ही क्लियर (स्पष्ट) रूप में चिन्हित होना

उत्तर: साक्षात्कार की वस्तु जितना लिखा है, उतना ही है | साक्षात्कार की वस्तु, न्याय-धर्म-सत्य है, प्रधान रूप, उससे सम्बंधित वस्तु भी है, अवधारणा में; सम्बंधित वस्तु निकल जाता है, बोध में न्याय-धर्म-सत्य रहता है…जब अनुभव में जाता है, तब प्रमाण हो जाता है | प्रमाण होता है तो उसको question (पूछने) की जगह ही नहीं रहता है | अभी, समाधान समृद्धि अभय सहअस्तित्व प्रमाण है | उसमें क्या प्रश्न करोगे? आप जैसा लाखो आदमी, करोड़ों आदमी मिलकर के कुछ कर पायेंगे? नियम-नियंत्रण-संतुलन न्याय-धर्म-सत्य इसमें क्या तर्क करेंगे? न्याय क्या है, धर्म क्या

है, सत्य क्या है, पूछेंगे – उसका उत्तर दिया है …न्याय है सम्बन्धों का पहचान, मूल्यों का निर्वाह ; सम्बन्ध किस बात के लीये पहचान होता है, व्यवस्था के लिए, परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था |

जिज्ञासा: इस प्रकार से तर्क करने की प्रवृत्ति मुझमें आधुनिक शिक्षा के कारण हो गया है?

उत्तर: शिक्षा से तो आया ही है…तर्क जो है ना, विश्लेषण तक है; अवधारणा, बोध, अनुभव में कोई तर्क नहीं है ठीक है ना ? विश्लेषण से simplify (सुलभ) हो गया है ना भाई? तुम्हारे तरीके से अनुभव में भी तर्क लगाए हो!!

कैसा होगा? तर्क, प्रमाण के अर्थ में है | प्रमाण पर क्या question करोगे? क्या तर्क करेंगे? प्रमाणित विधि से जीना का कोई तरीका अभी तक आया ही नहीं |

जिज्ञासा: मेरी ऐसी मान्यता है की जो तर्क मैं कर रहा था, वो शंका के लिए नहीं था, उसे जोड़ने के लिए था |

उत्तर: तर्क का मतलब ही शंका है | सारे शंका, विश्लेषण तक है |

जिज्ञासा: मैं तो जोड़ने के लिए तर्क कर रहा था

उत्तर: जोड़ना जितना है, साहित्य में जोड़ चुके हैं | अनुभव मूलक विधि से तर्क, विश्लेषण के लिए, और बेवकूफी विधि से तर्क, आशा से, मन से…

अनुभव मूलक तर्क, जब विश्लेषण करता है, वो मन तक आता है, और बेवकूफी का तर्क, शुरुआत होता है, आशा से जीने की आशा से, जैसे जानवर होते हैं | जानवर में भी जीने की आशा रहता है, और लोगों में मानव को भी 'बुद्धिजीवी जानवर' कहा है!

जिज्ञासा: तो मेरा जो तर्क है, वो भी आशा से ही आ रहा है ?

उत्तर: हाँ, आशा से ही है, सभी | इसीलिए वो वहां फिट नहीं होता है (बैठता नहीं) | वहां तो अनुभव कैसा प्रमाण, विश्लेषण तक आता है, बात हो सकता है | विश्लेषण जो है, अनुभव मूलक विधि से, आशा मूलक विधि से, जीने की आशा, जैसा जानवर में, जानवर के सदृश्य जीता है मानव, जानवर से अच्छा जीने के लिए मानव जीया, उसमें सफल हो गया, वो लिखा है | अभी तक उतना ही है | आहार आवास अलंकार दूरदर्शन, दूर श्रवण, दूरगमन विधि से आदमी जानवरों से अच्छा जिया | 'तर्क' सब जो है ना, जीने की आशा से आता है; 'विश्लेषण' जो है, तात्विकता के लिए होता है, विश्लेषण जो है, अवधारणा में आता है, संक्षेप हो गया, उसके बाद बोध और अनुभव आटोमेटिक (अपने आप) है|

जिज्ञासा: क्योकि यह जो मैंने ऐसे सोचना प्रारंभ किया था, साक्षात्कार को आपने छः-आठ विधि से बताया है, वो 'वस्तु' के रूप में क्या है...उसे चिन्हित करना था

उत्तर: वस्तु के रूप में केवल विश्लेषण है | अनुभव में कोई तर्क नहीं है | अनुभव ही है | अनुभव को बता चुके हैं | अनुभव काहे के लिए? - प्रमाणित होने के लिए | प्रमाण काहे के लिए ? – परम्परा के लिए | परम्परा क्या है ? – अखंडता, सार्वभौमता | जो जीना है, सहअस्तित्व में, जीने के लिए हमने पूरा काम किया है, जीना आचरण है, जीव-जानवर भी आचरण से ही प्रमाणित होता है, मानव भी आचरण से ही प्रमाणित होता है | विचार यदि परीमार्जित हुआ, तो परिवर्तन हो जायेगा |

अनुभव क्रिया

जिज्ञासा: बाबाजी अनुभव …

उत्तर: अनुभव क्यों ? प्रमाणित होने के लिए, और प्रमाण काहे के लिए? परंपरा के लिए, परंपरा क्या है? - सार्वभौमता अखंडता। जो जीना है, सहअस्तित्व में जीना है । जीने के लिए, पूरक होने के लिए। जीना ही प्रमाण है । जीना आचरण में, आचरण प्रमाण है । जीव जानवर भी आचरण से ही प्रमाणित है, मानव भी आचरण से ही प्रमाणित होगा । विचारशील किस के लिए हुआ जाये ? इसी के लिए विचार … विचार यदी समर्पित हुआ, अनुभव होना बहुत आवश्यक हो जाता है । 'जी' कर ही अनुभव होगा, अनुभव होने से तीनो प्रमाण होगा ।

जिज्ञासा: अनुभव के बाद 122 आचरण समझ में आता है ?

उत्तर: अनुभव मे यह आता ही है । अनुभव में <u>अधिकार</u> होता है .. 122 आचरण का ..बात चीत नहीं है यह, यह <u>करने</u> की बात है । अध्ययन विधि से इसको मानकर आगे बढ़ना होता है । अनुभव ही इतना विस्तार में जाता है व्यवहार में - 122 आचरण रूप में ।

जिज्ञासा: अनुभव 'रुक रुक' के होता है ? जैसा थोडा अनुभव हुआ, कुछ समय बाद और थोडा हुआ, की 'एक साथ' होता है?

उत्तर: अनुभव जब कभी भी होगा, <u>एक ही साथ</u> होगा, उसमे समय नहीं है । समय जो भी है, अवधारणा होने तक ही है ।

जिज्ञासा: अभ्यास दर्शन में लिखा है - 'निश्चित अवधारणा की स्थापन प्रक्रिया ही निदिध्यास है । अवधारणा ही अनुमान की पराकाष्ठा एवं अनुभव के लिए उन्मुखता है । अवधारणा के अनंतर ही अनुभव होता है ।'

उत्तर: यही अवधारणा का मतलब ही है! निदिध्यासन से ही अवधारणा होता है|

जिज्ञासा: जी...जी, और यही 'धारणा' के भूमि से 'योगाभ्यास' अध्याय में इंगित है| ध्यान के लिए आया है, "धारणा पर पूर्णाधिकार के अनंतर उसके वांछित भाग अथवा सारभूत भाग में चित्त वृत्तियों का केंद्रीभूत होना पाया गया है" |

उत्तर: इसमें क्या पूछना ?

जिज्ञासा: यह स्थिति अवधारणा पूरा होने के स्थिति है ?

उत्तर: हाँ, अवधारणा के बाद ।

जिज्ञासा: उसके बाद आया है 'ध्येय के मूल्य मात्र में, अथवा अर्थ मात्र में चित्त वृत्ति एवं संकल्प का निमग्न होना ही सत्तामयता में अनुभूति है…यही समाधी है' | इसमें 'ध्येय' क्या है ?

उत्तर: प्रमाण !

जिज्ञासा: इसका मतलब इस स्थिति में मन, वृत्ति, चित्त एवं बुद्धि, अनुभव के लिए समर्पित हो जाते हैं ?

उत्तर: वही !

जिज्ञासा: पहले से ही समर्पित हुआ रहता है, तभी अनुभव होता है ?

उत्तर: वैसे ही |

जिज्ञासा: जब आप यह कहते हैं की 'अवधारणा होने के बाद बोध-अनुभव होता है', इसमें 'बोध' का तात्पर्य 'आत्म-बोध' से है, और जिसे आप 'अध्ययन-बोध' कहते हैं, यही 'अवधारणा' है ... यह साक्षात्कार के साथ साथ होता है ?

उत्तर: हाँ |

जिज्ञासा: इसका मतलब आत्म-बोध, और अनुभव एक ही साथ हो जाता है ? इसमें देर नहीं है ?

उत्तर: जो कुछ भी समय है, वो अवधारणा होने तक ही है | अवधारणा होने से बोध और अनुभव होता ही है, उसमें कोई ख़ास परेशानी नहीं है |

जिज्ञासा: जैसे हम 'चित्रण' को ही 'अवधारणा' मान लेते हैं, उसी विधि से 'चित्रण और तर्क' को ही अनुभव भी मान सकते हैं? इसीलिए इसे 'भ्रम' कहा है ?

उत्तर: ऐसे ही ।

जिज्ञासा: अनुभव नहीं हो रहा है, इसका मतलब बोध, अथवा पूर्ण बोध नहीं हुआ ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: बोध नहीं हुआ, मतलब अवधारणा नहीं हुआ ?

उत्तर: अवधारणा के बाद ही बोध होता है ।

जिज्ञासा: अवधारणा हुए बिना बुद्धि में 'ब्रह्म जिज्ञासा' हो सकता है ?

उत्तर: नही । भाषा भर रहता है |

जिज्ञासा: और अवधारणा नहीं हो रहा है, इसका मतलब अभी श्रवण-मनन में ही कमी है ?

उत्तर: हाँ । उद्देश्य होने से अवधारणा होता है । उसके लिए अध्ययन आवश्यक है ।

जिज्ञासा: और श्रवण-मनन में ही कमी है, मतलब प्राथमिकता नहीं हुआ है ? .

उत्तर: स्वयं प्रमाणित होने की तीव्र इच्छा से होता है, 'ज्ञान के बिना हम जी नहीं सकते', इस विधि से.. 'जीवन ज्ञान के बिना जीना व्यर्थ है', 'मानवीय आचरण के बिना जीना व्यर्थ है' – यह स्वयं में निष्कर्ष होना...ऐसा declaration (घोषणा) होना...दोहरा व्यक्तित्व ख़त्म होने के लिए, मानवत्व के लिए हम तृषित होते हैं...

जिज्ञासा: इसमें तीव्र इच्छा इसीलिए नहीं हो पाता है क्योंकी a) हमारा पहले से बना हुआ शरीर से सुख/भोग का स्रोत, b) व्यवसाय/लाभ का मान्यता, c) व्यवहार में मोह तथा द्वेष का तरीका एवं मान्यता, d) पहले से विचार-समझ का तरीका ... इससे (मानव चेतना से) भिन्न है?

उत्तर: मूल बात इतना ही है ! कुल मिलाकर स्वयं को शरीर मानना ही संकट है । 'जीवन को जीवन' माना जाय, 'शरीर को शरीर' माना जाय । इसमें किसको क्या तकलीफ है ?

जिज्ञासा: जी, और यह भी लगता है की बिना प्राथमिकता और सघन शोध के श्रवण के साथ तर्क भी पूरा नहीं होता है |

तदाकार तद्रूप क्या है ?

उत्तर: तदाकार विधि से अध्ययन होता है । तदाकार का मतलब न्याय-धर्म-सत्य के स्वरुप में कल्पनाशीलता हो जाना....सच्चाई के स्वरुप में कल्पनाशीलता हो जाना ही 'तदाकार तद्रूप' है । तदाकार विधि से अध्ययन, तद्रूप अवस्था में अनुभव होता है .. 'तद' शब्द सच्चाई को इंगित करता है।

जिज्ञासा: एक बार आपने कहा था – 'सच्चाई और अच्छाई के स्वरुप में हम स्वयं हो जाना'...

उत्तर: वही बात है... सच्चाई क्या है – सत्य । अच्छाई क्या है – मानवीयता, मानव चेतना । सच्चाई को सोचना, अच्छाई को सोचना, इसमें जीना, उके स्वरुप में हम स्वयं हो जाना से हमारा स्वत्व हुआ ।

जिज्ञासा: इसका तात्पर्य अध्ययन विधि में 'न्याय-धर्म-सत्य' चित्रित होना....हमारा आशा-विचार-इच्छा इसी में परिवर्तित हो जाना, उसी स्वरुप में हम स्वयं हो जाना ? इसी को दुसरे विधि से आपने लिखा है 'विश्लेषित स्वीकृत होना ही अध्ययन है'

उत्तर: अनुकरण विधि से होता है, भाषा सहित जो होता है, वो रहता है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब मानवीयता चित्रित होना – श्रवण के आधार पर स्वीकार होना ...इसी को 'पवित्रता' कहेंगे ?

उत्तर: दूसरा कौनसा पवित्रता है ! मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना ही पवित्रता है । विकसित चेतना| अभी आप जो भी स्वीकारेंगे वो चित्रण, श्रवण विधि से रहता है, मान्यता के रूप में|

जिज्ञासा: अमानवीय स्वभाव-गुण से मुक्ति, मानवीयता में प्रवृत्ति, से युक्ति... ऐसा स्वभाव-गुण क्रमशः भास, आभास, प्रतीति पूर्वक अनुभव से पूरा होता है ?

उत्तर: हाँ । अनुभव के बाद ही प्रमाण होता है ।

जिज्ञासा: तो ऐसा नही हो सकता है की एक दिन मैं अमानवीयता में हूँ, अपराध में हूँ, अर्थात परधन, परनारी, परपीड़ा में हूँ और दूसरे दिन 'अनुभव' हो जायेगा ?

उत्तर: कहाँ होगा ? अपराध के साथ तो साक्षात्कार ही नहीं होगा !

जिज्ञासा: तो 'स्वयं अनुभव करने' अथवा 'स्वयं ज्ञान संपन्न' होने की आवश्यकता के बिना, 'स्वयं मानवीयता में प्रवृत्त' हुए बिना, स्वयं 'प्रमाणित होने की इच्छा' के बिना अवधारणा ही नहीं होगा ?

उत्तर: नहीं होगा । तुलन ही नहीं होगा | अवधारणा तो बहुत दूर!

जिज्ञासा: भास, आभास पूर्वक भी लगता है, 'प्रगति' हुई है, कुछ समाधान हुआ है, दुःख कम हुआ है, सुख, शांति का भनक रहता है ?

उत्तर: वो तो होता ही है । तभी तो आगे बढ़ते हैं ! इसी को अंतिम बात मानने से यहीं रुक जाते हैं !

जिज्ञासा: क्या श्रवण-मनन पूर्वक तदाकार होते हैं ?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: 'तद्रूप' का तात्पर्य मन-वृत्ति-चित्त-बुद्धि जो है, आत्मा अनुरूप हो जाते हैं? अथवा आत्मा को स्वीकारने योग्य हो जाते हैं ?

उत्तर: तद्रूप यही है !

जिज्ञासा: आपने पहले एक बार कहा था ' प्रिय हित लाभ विलय होने तक अध्ययन है । विलय हो जाता है तो अनुभव है' | ऐसा 'विलय होना', अध्ययन पूर्वक, अवधारणा पूर्वक ही होगा?

उत्तर: ठीक है, ऐसा ही है । प्रिय-हित-लाभ, न्याय-धर्म-सत्य में विलय होने से अनुभव होता है । विश्वास पूर्वक होता है, प्रेम पूर्वक होता है।

जिज्ञासा: और अध्ययन से "न्याय-धर्म-सत्य का पलड़ा भारी हो जाता है, प्रिय-हित-लाभ गौण हो जाता है" – यह कहा है ? यह तो धीरे-धीरे होता है ....

उत्तर: प्राथमिकता विधि यही है । हम चाहें तो धीरे होता है, हम चाहे तो जल्दी होता है । पूर्व स्मृतियाँ इसमें अड़चन करती हैं ...इसी में समय लगता है ।

अध्ययन में समय तो लगता ही है ... अभी जो है, आदमी हमारा 25 वर्ष का साधना के फल को 2 मिनट में पाना चाहता है...इसको हम हवीस कहूं की नहीं कहूं ? संयम से जो फल मिला, उसे मानव जात को पकडाने जा रहे हैं !!!

कितना बड़ा काम है, आप सोच लो ! कितना छोटा काम है, आप ही सोच लो ! संयम जो है, समाधी के बाद ही होता है । समाधी के बिना संयम होता नहीं ।

...सच्चाई की चाहत, शुभ की चाहत हर किसी में है, इसके आधार पर हमने यह (अध्ययन) शुरू किया है ।

जिज्ञासा: भास-आभास में रहते, अनुभव का फल नही होने का जो दुःख है, उसका क्या प्रयोजन है ?

उत्तर: वही बात है । यह सब अनुभव नहीं होने का संकेत है, अनुभव के लिए प्रेरणा है ।

जिज्ञासा: परन्तु इस स्थिति में 'रोने-धोने' से तो कुछ होता नहीं.... ज्ञान, अनुभव के लिए प्रयास ही करना पढता है, निरंतर प्रयास: श्रवण-मनन-जीने के अभ्यास का....

उत्तर: रोने का कुछ प्रयोजन निकलता नही । हमारा आगे का स्थिति, पीछे के स्थिति से सुधार है, इस विधि यह पूरा होता है । अभी जहाँ संसार खड़ा है, वहां से तो अपन आगे निकल गए, लक्ष्य के ओर, सार्थकता के ओर...धीरे धीरे पूरा होता है – ऐसा मैं समझता हूँ ।

जिज्ञासा: जी। मुझे भी लगता है की इसमें हमारे विचार में, संबंधों-व्यवहार में, व्यवसाय-कार्य में, व्यवस्था की समझ तथा भागीदारी में तथा अभी के संसार, उसके लोग, घटनाओं को समझने में वृद्धि तो होता ही है....लक्ष्य की स्पष्टता हुई है । सुख शान्ति का भास्-आभास तो हुआ है…"सुखी हो गए", यह कहना बनता नहीं, परन्तु दुःख एवं उसके प्रकार तो कम हुए हैं ! अध्ययन-अभ्यास का मतलब एक पूरा 'जीना का तरीका' है, विधि है.. जिसमे चारों आयाम (अनुभव-विचार-व्यवहार-व्यवसाय), पांचो स्थितियाँ (व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र....) समाये हैं, ऐसा लगता है । क्रमश: सुख-शांति-संतोष होते हुए बोध-अनुभव में आनंद हो जायेगा ?

उत्तर: ठीक है । इसमें साहस और धैर्य रखनी की बात आती है ... इसी विधि से यह पूरा होता ... समाधान होते जाता है... अवधारणा में भार कम हो जाता है ... एक जगह में जाकर यह परिपूर्ण हो जाता है । उसका नाम है अनुभव ।

जिज्ञासा: 'बुद्धि तंत्रित' मानव को आपने व्यवहार दर्शन के रहस्य मुक्ति अध्याय में – 'स्वायत्त मानव, स्व-तंत्रित मानव, अधिक उत्पादन, कम उपभोग' करने वाला लिखा है

उत्तर: यह सब होता है, इसीलिए लिखा है ।

जिज्ञासा: मानव व्यवहार दर्शन द्वितीय संसकरण में आया है – 'आत्मा की ओर बुद्धि का परावर्तन होते ही आत्म-बोध तथा ब्रह्मानुभूति एक साथ ही प्रभावशील होती है' | और अभ्यास दर्शन के योगाभ्यास में जो वाक्य है - 'ध्येय के मूल्य मात्र में, अथवा अर्थ मात्र में, चित्त वृत्ति एवं संकल्प का निमग्न होना ही सत्तामयता में अनुभूति है' ....यह दोनों ..

उत्तर: जो होता है, उसी को लिखा है ।

जिज्ञासा: इसका मतलब बुद्धि का प्रत्यावर्तन ही 'बोध' है, यही 'आत्म-बोध अथवा मध्यस्थ क्रिया का बोध' है; इसके पहले 'अध्ययन-बोध' होता है, इसे ही अवधारणा कहा है?

उत्तर: हाँ । साक्षात्कार के साथ साथ बुद्धि में सार बात जमा होते जाता है, यही अवधारणा है ।

जिज्ञासा: आपके दिए दर्शन–वाद-शास्त्र-संविधान वांग्मय के विधिवत 'श्रवण-मनन' हुए बिना, जीए बिना, अवधारणा संभव है ?

उत्तर: बनता होगा तो कर लेना !

सारांश

जिज्ञासा: आपने जानने-मानने अथवा साक्षात्कार, अवधारणा, बोध अनुभव के वस्तु को २-३ विधि से, सूत्रों से बताया है: नियम-न्याय-धर्म-सत्य; स्थिति सत्य-वस्तुगत सत्य-वस्तु स्थिति सत्य; अस्तित्व-विकासक्रम-विकास-जागृतिक्रम-जागृति; यथार्थता-वास्तविकता-सत्यता…इसमें अवधारणा की वस्तु: अस्तित्व, जीवन, जीवन क्रिया, जीवन जागृति है … अर्थात स्वभाव-धर्म है?

उत्तर: ठीक है, इसमें क्या कहना?

जिज्ञासा: और 'न्याय-धर्म-सत्य' जो सूत्र है, यह व्यवहार के लिए है, जैसे अपने कहा यह अनुभव का group (समूह) है, इसी का अध्ययन है, और इसी के सार रूप में साक्षात्कार होता है, इसमें से 'सत्य' अनुभव में आता है, सत्य में ही मानव धर्म 'आनंद, ज्ञान' रूप में समाया है; इस सूत्र में 'धर्म' बराबर मानव धर्म – समाधान रूप में आता है ये बोध है, जो विचार में समाधान रूप में आता है, और 'न्याय' जीने में, व्यवहार में आता है।

उत्तर: ठीक है ।

जिज्ञासा: 'स्वभाव-धर्म' साक्षात्कार होने का तात्पर्य सह-अस्तित्व, जीवन, जीवन क्रिया, जीवन जागृति ही है, इसी को दुसरे विधि से व्यव्हार में 'न्याय-धर्म-सत्य' कहा है ।

उत्तर: हाँ

जिज्ञासा: और इसी को 'अस्तित्व मूलक, मानव केन्द्रित चिंतन' के अर्थ में 'अस्तित्व दर्शन, जीवन ज्ञान, मानवीयतापूर्ण आचरण' कहा है? यही 'ज्ञान-विवेक-विज्ञान' है … अध्ययन विधि में इसमें से कुछ वस्तु चित्रण तक है, कुछ अवधारणा में आता है, उसका सार बोध में, और उसका सार अनुभव में?

उत्तर; ठीक है । सार बात का ही बोध होता है, अनुभव होता है, भूसा जो है, चित्रण में ही रह जता है | आगे…

जिज्ञासा: भास् एवं आभास में जीवन और मेधस मिलकर काम करते हैं ? जैसे हमारे में चित्रण, विश्लेषण, यह मेधस सहित ही होता है ?

उत्तर: हाँ

जिज्ञासा: क्या प्रतीति और अनुभव में मेधस का involvement (भागीदारी) है ?

उत्तर: नहीं ।

जिज्ञासा: समाधी में मन-वृत्ति-चित्त और मेधस का involvement रहता है ?

उत्तर: नहीं । समाधी में आशा विचार-इचाएं चुप रहते हैं – यह लिख चुके हैं । हम इसका दृष्टा बने रहे, घंटो....

जिज्ञासा: समाधी के पहले मेधस का कार्य रहता है?

उत्तर: मेधस का काम रहता है

जिज्ञासा: संयम में मन-वृत्ति-चित्त का काम रहता है ?

उत्तर: रहता है । समाधी-ध्यान-धारणा – इस विधि से हमने संयम किया ।

जिज्ञासा: संयम में मेधस का कोई काम?

उत्तर: मेधस का कोई काम ही नहीं है, संयम में.. सीधे जीवन से सम्बंधित है, जीवन में ही होता है ।

जिज्ञासा: ये जो हमारे में तर्क करने का विधि है, जिसमे विखंडन होता है, क्या ये हमारे में आधुनिक शिक्षा से बना है?

उत्तर: अभी का शिक्षा ग्रहण करके जो आएगा, वो तर्क तक ही आएगा। तर्क, विश्लेषण तक ही है । अवधारणा, बोध, अनुभव में कोई तर्क नहीं है ।

अभी के तरीके से, अनुभव में भी तर्क लगायेंगे ! कैसा होगा? तर्क, प्रमाण के अर्थ में होगा की नहीं ? तर्क प्रमाण विधि से जीने का कोई तरीका अभी तक तो नहीं आया। एक सौ से अधिक संविधान बन चुका है, इस धरती पर, एक में भी नहीं है…

जिज्ञासा: मेरा ऐसा मान्यता है कि जो लोग इसमें (दर्शन में) लगें हैं, वह तर्क शंका के लिए नहीं (करते), वह अर्थ जोड़ने के लिए है ।

उत्तर: वो ठीक है, आपका प्रयत्न ठीक है….अभी तो तर्क का मतलब ही शंका है । शंका जो है, इसमे विश्लेषण तक है... ठीक हो गया ना... अनुभव मूलक विधि से तर्क, 'विश्लेषण' से है, और बेवकूफी की विधि से तर्क, 'आशा' से है

। अनुभव मूलक तर्क जब विश्लेषण शुरू करता है, वह अनुभव से मन तक आता है और बेवकूफी से तर्क शुरू करता है, तब शुरुआत होता है आशा से, जीने की आशा से...जैसे जानवर होता है । जानवर भी जीने की आशा से जीते हैं, और वैसे ही बुद्धिजीवीयों ने "जानवर" कहा है, मानव को...तर्कसंगत जानवर, भाषा कहा है। ठीक है..?

जिज्ञासा: जी, ठीक है। तो अभी जो हम लोगों का तर्क हो रहा है, वो 'आशा' से आ रहा है?

उत्तर: हाँ, वो आशा से ही है, सभी। इसलिए वो वहाँ (अवधारणा, बोध, अनुभव) में बैठता नहीं । दुसरे विधि से, सीधा अनुभव विधि से प्रमाण का सार विश्लेषण तक आता है। विश्लेषण जब अनुभवमूलक विधि से है, 'मानव' कहलाया, और जब आशामूलक विधि से है, 'जीव चेतना' कहलाया, जानवरों के सदृश्य जीना...अभी मानव जानवरों से अच्छा जीना चाहा, उसमे सफल हुआ...यह लिखा है ना…

जिज्ञासा: जी..

उत्तर: अभी तक उतना ही है, जानवरो से अच्छा जीने की बात। छह बात, जानवर से अच्छा जीने की बात लिखा है - आहार, आवास, अलंकार, दुरश्रवण, दुरगमन, दुरदर्शन। सब छह डिजिट में सारा बात आ गया, जीवों से अच्छा जीने का… यह समीक्षा कैसा लगा आपको?

जिज्ञासा- जी बाबाजी, बहुत बढ़िया समीक्षा है ।

उत्तर: 'Concept' (परिकल्पना) जो है ना, जीने की आशा से ही होता है, अभी मानव concept में माहिर है । जबकी, सार्थकता से, सार्थकता समझने के अर्थ में विश्लेषण होता है, तो विश्लेषण अवधारणा में आता है। विश्लेषण से अवधारणा संक्षिप्त हो गया, और उसके बाद बोध और अनुभव औटोमैटिक (अपने आप होता) है।

जिज्ञासा: साक्षात्कार की मूल वस्तु को आपने चार- छेह विधियों से जो बताया है, ये शब्दों से परे "वस्तु" के रूप में क्या है, इसे समझना चाह रहा था...इसीलिए इस विधि से विश्लेषित करते गया...

उत्तर: केवल विश्लेषण से होता नहीं यह…वस्तु व्यवस्थित विधि से जीने के लिए है | इसको समझने के लिए है - विश्लेषण विधि, अनुभव मूलक विधि... ठीक है ?

... साक्षात्कार का मतलब अनुभव का तय्यारी - साक्षात्कार होने से अनुभव की आवश्यकता बनता है ..अनुभव के बिना अवधारणा का कोई कीमत नहीं ! अनुभव दो विधि से होता है - अध्ययन विधि और अनुसंधान विधि । अध्ययन विधि से अवधारणा होता है, अनुसंधान विधि (साधना-समाधी-संयम) से अवधारणा नहीं होता है, सीधा अनुभव ही होता है ।

अनुभव के पहले निश्चय नहीं होता है – ना न्याय होता है, ना धर्म होता है, ना सत्य होता है– यह निश्चय नही होता है | अनुभव से ही न्याय-धर्म-सत्य का निश्चय होता है । आपके विधि से अनुभव के फहले ही, अवधारणा में ही आप व्यवस्था चाहते हो, निश्चय चाहते हो, वो होने वाला नहीं है... अवधारणा मात्र होने से सब हो गया, ऐसा नहीं है, अवधारणा से कुछ नही होता, 'अवधारणा' ही रहता है, अवधारणा से अनुभव प्रतीत हो जाता है, अनुभव की आवश्यकता बनती है, अनुभव के लिए सीढ़ी है अवधारणा, धारणा के मार्ग का नामे है अवधारणा - निश्चयन तो अनुभव से ही होता है । अनुभव के पहले जीना, प्रमाण नहीं है। अनुभव होने से सब समाधान होता है - सर्वतोमुखी समाधान - इसीलिए लिखा है: समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व...दिव्य मानव प्रमाण हुआ ...अभी तक किसी ने ऐसा कुछ लिखा नही है ..

जिज्ञासा: आपने एक बार कहा था - मन पवित्र रहने से शरीर स्वस्थ रहता है, और अभ्यास दर्शन में 'शुचिता' की बात भी आयी है ।

उत्तर: ठीक है ना...शरीर स्वस्थ रहता है, इस विधि से, मन की पवित्रता से ही अध्ययन पूरा होता है ।

जिज्ञासा: मैं अपने अध्ययन में आगे क्या करूँ ?

उत्तर: पूरा अध्ययन करते जाओ, अनुभव करते जाओ। अध्ययन, अनुभव, प्रमाण ,परंपरा यही सब को चाहिए … आदमी धरती पर इसी से बचेगा। धरती पर नहीं रहने के लिए जो करना है सब कर लिए ... उसी को सभी कर रहे हैं । बच्चा भी उसी को कर रहा है

समझना आप ही को है । यन्त्र नहीं समझेगा....ऑडियो नहीं समझता ।

अनुभव प्रमाण को चित्रित करने के क्रम में साक्षात्कार होता है । लिखा हुआ प्रत्येक वाक्य को अपने में अनुभव करो । हम जैसे बोलते है, वैसी ही जी रहे हैं या नहीं? इसका जाँच । सर्वशुभ के अर्थ में जीना पड़ेगा।

सत्य के बिना धर्म समझ में आता नहीं । धर्म, व्यवस्था समझे बिना न्याय समझ में आता नहीं । सत्य, धर्म, न्याय के लिए वरीयता, प्राथमिकता होना । यही करने योग्य कार्य है ।

जिज्ञासा: लम्बे समय अध्ययन के लिए कौनसे पुस्तक पढ़ूं ?

उत्तर: मानव व्यवहार दर्शन, अनुभव दर्शन, मनोविज्ञान को रखो – इनमे प्रत्येक वाक्य पर मनन करना, स्वयं में अनुभव करना । कर्म दर्शन में कर्म और उपासना दिया है, अभ्यास के लिए ...बाकी सब भी पढना ।

जिज्ञासा: (मात्र) पुस्तक पढने से अध्ययन पूरा हो सकता है ? अथवा गुरु के बिना भी अध्ययन हो सकता है ?

उत्तर: तदाकार होता है, जागृति होता है, इसमें यदी विश्वास है, तो literature (वांग्मय) से अध्ययन किया जा सकता है । अभी कोई समझा हुआ व्यक्ति ही इसे समझाएगा । बोध तक हम करा देते हैं । अनुभव स्वयं करना पढ़ता है ।

जिज्ञासा: आपका जैसे आपके गुरु के साथ सम्बन्ध बना था, बना है, क्या हमारा भी आपके साथ ऐसा ही बना है ?

उत्तर: कहाँ बना है ! उसके लिए कृतज्ञता होना पड़ेगा, जिज्ञासा होना पड़ेगा । जिज्ञासा, कृतज्ञता, श्रद्धा ।

जिज्ञासा: पढ़ कर सोचने से तर्क तक तो आ जाता है ... तर्क विधि से सारी चीज़ जुड़ जाती है ।

उत्तर: तर्क विधि से जो होता है, चित्रण तक होता है ...

जिज्ञासा: इससे 'परे' कैसे जाएँ ?

उत्तर: शब्द के <u>अर्थ</u> में जाने से आपको ये पता चलता है, कि हमको अनुभव करना है ... सहअस्तित्व में अनुभव होने से ये सब आता है - मैं जितना करता हूँ । अनुभव नही होने से नहीं होगा ।

जिज्ञासा: अवधारणा और अनुभव के लिए मुझमें 'उद्देश्य' बनना पड़ेगा ?

उत्तर: हाँ, उद्देश्य बनना पड़ेगा । अवधारणा से अनुभव तक, अनुभव से प्रमाण तक, प्रमाण से परंपरा तक, यही सर्वशुभ की बात होगी । सर्वशुभ की बात यदी सोचते नहीं हैं, अभी जो कर रहे हैं, कर ही रहे हैं ! हमको किसी से विरोध नहीं ।

अनुभव होना बहुत आवश्यक है । <u>जी कर ही अनुभव होगा</u> । तीन प्रमाण में जीना से पूरा हो जाता है । अनुभव के बीना तीनो प्रमाण होगा नहीं ।

जिज्ञासा: स्वयं के निरिक्षण से ऐसा मिलता है की समझने की इच्छा के साथ, 'दूसरों को कैसे बताना है', ऐसा भी चित्र उभरता है...

उत्तर: अध्ययन विधि हम '<u>स्वयं सुधरने</u>' के लिए है, '<u>संसार को सुधारने</u>' के लिए नहीं ... संसार को सुधारना है, तो यह (अनुभव) नहीं होगा - इसको रखो, काम हो जाता है । संसार को यदी सुधारना है, अनुभव ही होना पड़ेगा, प्रमाण ही होना पड़ेगा - दूसरा कोई रास्ता नहीं है । बाहर दूसरों को बताने के लिए हम जितना सोचते हैं सब गलत होने वाला है, <u>स्वयं के अनुभव</u> के लिए जो सोचते हैं वो सब सही होने वाला है । स्वयं 'समझकर' अनुभव होता है...दूसरों को

'समझा करके' अनुभव नहीं होगा ! केवल बक बक करना बनता है....बकरी जैसा... अभी मानव भाषा एवं कार्यक्रम में माहिर है ... सारा कार्यक्रम परावर्तन है ... ज्ञान, प्रत्यावर्तन है ।

जैसे, हम 'ज्ञान' की बात करते हैं, जबकी आप लोग 'प्रक्रिया' में चले जाते हो, अथवा 'कार्यक्रम' के तरफ दौड़ लेते हो ...

जिज्ञासा: परन्तु प्रक्रिया और कार्यक्रम सहयोगी है ?

उत्तर: प्रक्रिया ठीक है, स्पष्टता के लिए – भई, हम कैसे समझें, क्या समझे ...कार्यक्रम ठीक है, अभ्यास के रूप में, कर्तव्य के रूप में, उत्साह के लिए... (लेकिन) मुख्य चीज जो है ना, समझना है, प्रमाणित होना है । साक्षात्कार होना, बोध होना, अनुभव होना, प्रमाणित होना...इस पिंड को छोड़ना नहीं चाहिए....नहीं तो अपन भटक जायेंगे ।

जिज्ञासा: अनुभव, विचार, व्यवहार और व्यवसाय को ही आपने अनुभव बल, विचार शैली, जीने की कला कहा है ? दुसरे विधि से यही दर्शन-वाद-शास्त्र है?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: 'अनुभव बल' मतलब जानने-मानने के वस्तु, 'विचार शैली' - इसके आधार पर व्यवस्था को पहचानना, संबंधों को पहचानना, व्यवहार के नियमों को पहचानना और 'जीने की कला' अर्थात व्यवहार, व्यवसाय, व्यवस्था में भागीदारी ?

उत्तर: ठीक है

जिज्ञासा: आपने एक बार कहा था, जब यहाँ अमरकंटक साधना के लिए आने के पहले आप वेद-अध्ययन करते रहे, आपने केवल 'सुना' था, 'पढ़ा' नही, पूरे समय आपका मन उसी में 'रमा' रहता था ...

उत्तर: आप लोगों के लिए एक मिसाल के रूप में हो, इसीलिए कहा । पूरा दिन हम उसी में डूबे रहते थे, दूसरा कोई काम ही नहीं था ! उसी विधि से तो अध्ययन होता है । कल्पनाशीलता को अध्ययन के लिए नियोजित करने को कहा है ..मन लगाने को कहा है ...

जिज्ञासा: हमारे में अभी diversity (वैविध्यता) रहता है, इसिलए ध्यान हठ जाता है ... कार्यक्रम रहता है, संवेदनाओं में चले जाता है । ५ से १० मिनट भर वास्तविक ध्यान लगता है, नहीं तो एकाग्रता नही रहती है..

उत्तर: वही तो बात है ! लक्ष्य बन्ने से ध्यान लग जाता है ... लक्ष्य को तय करना बहुत आवश्यक है । स्वयं पर विश्वास, अध्ययन विधि पर विश्वास, लक्ष्य पर विश्वास...इस विधि से यह पूरा होता है ।

जिज्ञासा: स्वयं पर विश्वास - मतलब 'मैं समझ सकता हूँ, मुझे ज्ञान होगा', इसपर विश्वास ?

उत्तर: हाँ । मैं समझ सकता हूँ, मैं जी सकता हूँ ।

जिज्ञासा: अध्ययन विधि पर विश्वास का मतलब 'तदाकार होता है' - इसपर विश्वास और लक्ष्य पर विश्वास मतलब 'जीवन जागृति होता है' - इसपर विश्वास?

उत्तर: हाँ ।

जिज्ञासा: व्यवहार दर्शन में आपने 'शक्ति के अन्तर्नियोजन' की बात किया है, अंतर्नियामन प्रक्रिया, जिसमे मन-वृत्ति-चित्त-बुद्धि को समझने के लिए केन्द्रित करना ....इसे 'ध्यान देबे की चर्म उपलब्धि' कहा है...

उत्तर: उसकी आवश्यकता है की नही, देख लो !

जिज्ञासा: ऐसे 'ध्यान' देने की क्षमता श्रवण-मनन-अवधारणा पूर्वक ही विकसित होता है ? यही अभ्यास है ? अर्थात, अध्ययन ही अभ्यास है ?

उत्तर: दूसरा विधि हम तो जानते नहीं ।

जिज्ञासा: इस प्रक्रिया में कितना समय लागता है ?

उत्तर: आप चाहे तो अब, आप चाहे तो कल ! आप चाहे तो जल्दी होता है, आप चाहे तो देर होता है । पहले से कैसे कहा जाय ? जैसे साधना में हमारा २० वर्ष लग गया । होने के बाद ही गणना बना... पहले से हम कैसे कह देते समय को ?

जिज्ञासा: आपने एक बार कहा था की इसको समझते 'रीढ़ के हड्डी से पसीना' निकल जायेगा...

उत्तर: अध्ययन एक निश्चित साधना है । इसमें मन लगाना पढता है । अध्ययन के प्रती इमानदारी, जो समझ में आया, उसमे जीने के प्रती इमानदारी ... अभी के सोचने, जीने की विधि में इससे दूरी है ... इसी को पसीना निकलना कहा... ।

जिज्ञासा: अध्ययन करते समय शिविर, गोष्ठी में व्यक्त होना फिर उपयोगी है ?

उत्तर: वो ठीक है । अभी जैसा आदमी है, कुछ पता चलने से, दूसरों को बताने के लिए स्वभाविक रूप से दौड़ता है … कुछ ज्यादा बोल दिया, कुछ कम बोल दिया, इससे स्वयं का निरिक्षण होता है… स्वयं का scrutiny (निरिक्षण) इस विधि से होता है…

साधना हम स्वयं सुधरने के लिए है । संसार को सुधारने के लिए नहीं । .. अभी आदमी गाय घास चरने जैसा चरते रहता है, पुस्तक को, शब्द को । शब्द के अर्थ में अध्ययन है । शब्द में कोई अध्ययन नहीं है ।

जिज्ञासा: ऐसा भी लगता है, की शिविरों में, गोष्ठी में व्यक्त होते समय हमारा ध्यान केन्द्रित होता है, और सम्बंधित वस्तु कई बार हमें ही उसी क्षण स्पष्ट हो जाता है ।

उत्तर: स्वाभाविक है ।

जिज्ञासा: मानवीय आचरण की परिभाषाओं के अर्थों में भी मुझे जीना पड़ेगा? अभी तर्क का भाग विकसित हुआ है ऐसा लगता है, दर्शन में जो तर्क है, वो...

उत्तर: तर्क का मतलब इतना ही है, मानवीयतापूर्ण आचरण में जीना । आज के दिमाग के अनुसार तर्क का मतलब पैसा है । मानव जीवों से अच्छा जीने के लिए काम किया, यहाँ तक पहुँच गया । इतना हजारों वर्ष परिश्रम किया, इतना कर पाया – जीवों से अच्छा जीना । अब अनुभव प्रमाण परंपरा आगे की बात है... अखंडता सार्वभौमता को छूने के लिए । अब इसमें क्या तर्क है ? अखंडता सार्वभौमता में क्या तर्क है ?

तात्विक विधि छुटा है, उसे जोड़ लेने से पूरा हो जाता है - उसके लिए जिज्ञासा है...अवधारणा से अनुभव तक की है तीन बिंदु ।

जिज्ञासा: 'तात्विक्ता' के लिए उद्देश्य सर्वप्रथम चित्रण में ही बनेगा ?

उत्तर: नहीं, अनुभव मूलक विधि से ही चित्रण बनेगा, अनुभव का ही चित्रण बनेगा। इसमें सार्वभौमता, अखंडता ही बनता है । अनुभव के पहले, अध्ययन विधि में आप जो सुने हैं, पढ़ें हैं, वह स्वयं चित्रित होता है – मान्यता के रूप में...आप चित्रित कर रहे हैं, ऐसा नहीं है, सुना हुआ के आधार पर वह स्वयं चित्रित होता है

जिज्ञासा: मेरे लिए 'तात्विक्ता' का उद्देश्य इच्छा के रूप में बनेगा ?

उत्तर: आपके लिए, अभी अनुभव के लिए, तात्विकता के लिए प्रयोजन है, यह मान करके चलना पड़ेगा । अनुभव विधि से ही तीनों प्रमाण होगा – विकसित चेतना । विकसित चेतना से ही अखंडता सार्वभौमता आता है । अखंडता सार्वभौमता में प्रमाण त्रय । प्रमाण त्रय होने से परंपरा, इसका मतलब चारों अवस्था संतुलित होना होता है ।

अखंडता सार्वभौमता शिक्षा विधि से ही आएगा । दूसरा कोई विधि से आने वाला नहीं है । 'तर्क विधि' से आता नही, 'अनुभव विधि' से आता है । अभी अनुभव के लिए तो एक ही रास्ता बना है । तर्क, रासायनिक-भौतिक संसार तक ठीक है । 'तात्विक विधि' के लिए तर्क पर्याप्त नहीं है ।

जिज्ञासा: तर्क तो वृत्ति से होता है...

उत्तर: तात्विक विधि तर्क में पहुँचता है तो अनुभव मूलक विधि से तर्क होगा । अनुभव गामी विधि से अध्ययन, अनुभव मूलक विधि से तर्क, व्यवहार, प्रमाण, अखंडता सार्वभौमता परंपरा । इसकी आवश्यकता होगा तो 'झकमारी' है । इसकी जरूरत नहीं होगा तो 'मजामारी है' । जो करना है, वही करो ! यह पहले से लिख कर रखा है । मजामारी, शरीर से सम्बंधित है । झकमारी (अध्ययन) जीवन से सम्बंधित है । जीवन तृप्ति के लिए काम करना है तो करो, नहीं तो शरीर तृप्ति के लिए काम करना है तो वही करो ! दो ही तो तृप्ति का बिंदु है ...

हरी हर ।

कल अपने यहाँ एक गाय ने बच्चा डाला बताते हैं, उसका पायस बना था, आपने ग्रहण किया? आपको कैसा लगा ? इसीलिए हम लिया नहीं, पहला दूध ज्यादा गरिष्ट होता है । हमारा आयु अब ९४ वर्ष की हो चुकी है, इसको पचाना अब मुश्किल है, हमारे लिए ....

***